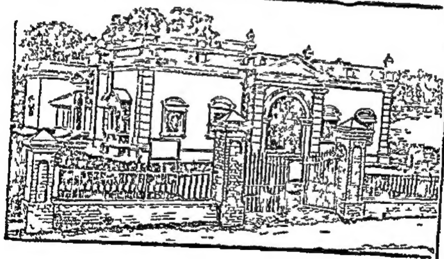
नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला सं० १७

भूषणग्रंथावली

संपादक

पं० श्यामविहारी मिश्र एम० ए० और

पं० शुकदेवविहारी मिश्र बी० ए०



प्रकाशक

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

चतुर्थ संस्करण २०००]   सं० १९८९   [मूल्य १।)

मुद्रक—गणपति कृष्ण गुर्जर, श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस,
जतनबर, बनारस सिटी में मुद्रित।

विषय-सूची

(१) चतुर्थ संस्करण का वक्तव्य

(२) शिवराज भूषण ग्रंथ

चतुर्थ संस्करण का वक्तव्य



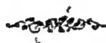
महाकवि भूषण की रचना पर हम लोग बहुत काल से मनन और परिश्रम करते आए हैं। भूषण ग्रन्थावली का प्रथम संस्करण प्राय बीस वर्ष हुए, प्रकाशित हुआ था। इसके प्राय. ५ वर्ष पूर्व से हम लोग इस विषय पर परिश्रम करते आये थे। समय के साथ नवीन घटनाओं तथा ऐतिहासिक विषयों का ज्ञान प्राप्त होने से इस कविरत्न के सम्बन्ध में दिनों दिन विचार परिष्कृत होते गए। इन्हीं के अनुसार दूसरी तथा तीसरी आवृत्तियों में नवीन मतानुसार संशोधन होते गए। इन दिनों भाषासाहित्यप्रेमियों ने इस प्राचीन विषय पर खण्डनात्मक तथा मण्डनात्मक दोनों प्रकार के लेख कुछ प्रचुरता से लिखे। केलूसकर तथा तकाखौ नामक दो महाराष्ट्र लेखकों ने शिवाजी महाराज की बहुत ही श्रेष्ठ जीवनी लिखी। सरकार महोदय का इसी विषय पर जो ग्रन्थरत्न है, उसके भी अधिक अवलोकन की आवश्यकता हुई। प्राय इन २५ वर्षों में समाज को महाराज शिवाजी सम्बन्धी ऐतिहासिक ज्ञानवृद्धि बहुत अच्छी हुई। इन्हीं सब कारणों से हमें भी शिवाजी सम्बन्धी इतिहास पर विशेष ध्यान देना पड़ा। केलूसकर तथा तकाखौ महाशयों का ग्रन्थ इतना रोचक है कि निष्कारण भी उसे दो बार पढ़े बिना चित्त प्रसन्न न हुआ। इन सब खोजों का फल इस चौथे संस्करण में रक्खा गया है। भूमिका तथा टिप्पणी दोनों में प्रचुरता से संशोधन किया गया है। नए नोट

भी बहुत कुछ बढ़ाये गए हैं। नवीन ऐतिहासिक खोजों कुछ प्राचीन छन्दों के नए अर्थ भी समझ पड़े हैं जो नोटों लिखे गए हैं। कुछ नए छन्द भी प्राप्त हुए हैं जो स्फुट छन्दों में सन्निविष्ट हुए हैं। महाकवि भूषण के समय पर भी बहुत कुछ नया विचार हुआ और इनके तीन भ्राताओं से इनके सम्बन्ध पर भी कुछ सज्जनों ने सन्देह प्रकट किया था, सो इस विषय पर भी श्रम किया गया है। इसी विषय पर अपने नवीन ग्रन्थ सुमनोञ्जलि के द्वितीय खण्ड में हम तीन बड़े लेखों में अपना मत प्रकट कर चुके हैं। यह ग्रन्थ प्रयाग के बेलवेडियर प्रेस ने हाल ही में प्रकाशित किया है। उन लेखों का सारांश इस ग्रंथ में भी उचित स्थानों पर आ गया है। इस बार भूषण ग्रन्थावली का यह नवीन (चौथा) संस्करण यथासाध्य बहुत ही शुद्ध करके छापा जाता है। आशा है कि पाठकों को इससे और भी अधिक लाभ उठाने का अवसर मिलेगा। हिन्दी समाज ने हमारे इस ग्रन्थ सम्बन्धी परिश्रम को सफल करने में पूरी कृपा दिखलाई है। यह ग्रन्थ कई कक्षाओं में पाठ्य ग्रन्थ भी नियत है। चतुर्थ संस्करण का सौभाग्य हमारे इसी ग्रंथ को प्राप्त हुआ है। हमारे अन्य ग्रन्थ अब तक दूसरे तथा तीसरे ही संस्करण तक पहुँचे हैं। इस ग्रन्थ का इतना मान बढ़ाने पर हम हिन्दी की विद्वन्मण्डली को अनेकानेक धन्यवाद देते हैं।

सं० १९८३ } मिश्रबन्धु।

भूषण-ग्रंथावली की

भूमिका



"एक लहैं तप पुंजन के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं।
एकन को बहु संपति केशव भूषन ज्यों बलबीर बड़ाई॥
एकन को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम कि नाईं।
दास कवित्तन की चरचा, गुनवंतन को सुखदै सब ठाईं"॥

वास्तव में सन् १७३४ के कवि दासजी का उपर्युक्त सवैया भूषणजी के विषय में जो कुछ कहता है, वह बिलकुल ठीक है। जैसी कुछ संपत्ति और बड़ाई कविता से भूषणजी को प्राप्त हुई, वैसी प्रायः औरों को नहीं मिली।

हमारे भाषा साहित्य में वीर, रौद्र, तथा भयानक रसों का सर्वोच्च पद है, क्योंकि हिंदी कविता इन्हीं रसों का अवलंब ले पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई है। सब से प्रथम जिस ग्रंथ के निर्मित होने का हाल हम लोगों को ज्ञात है, वह चंद कृत पृथ्वीराज-रासो है और वह विशेषतया इन्हीं रसों के वर्णनों का भांडार है। उसके पश्चात् वीसलदेव रासो आदि जो ग्रंथ बने, उनमें भी विशेषतया इन्हीं रसों को आदर दिया गया है। मलिक मुहम्मद जायसी ने भी पद्मावत में यत्र तत्र उपर्युक्त ग्रथों को

भाँति इन रसों का समावेश किया है। तदनंतर "चौथे पन जाइय नृप कानन" की बात स्मरण कर चौथे की कौन कहे, श्रीरामचंद्र जी की भाँति प्राय: पहले ही पन में हमारी भाषा काव्यकानन को चल दी और भगवत भजन करने लगी। अत: ऐसे रसों को छोड़ तुलसीदास, सूरदास, कबीर इत्यादि कवीश्वरों की सहायता से इसने शांत * रस के बड़े ही मनोरंजक राग अलापे, परंतु असमय की कोई बात चिरस्थायी नहीं होती। सो हमारे साहित्य का चित्त भी शांत रस में न लगा। शांत रस का वास्तविक प्रादुर्भाव तो शृंगार के पश्चात् होता है। जब विषयों का उपभोग कर प्राणी कुछ थक सा जाता है, तभी उसके चित्त में, राजा ययाति की भाँति, उन विषयों की तृष्णा हटती है और निर्वेद का राज्य होता है। सो हमारे साहित्य ने अपना पुराना उत्साह तो छोड़ ही दिया था, अब वह निर्वेद को भी तिलांजलि दे अपना शृंगार करने में पूर्णतया प्रवृत्त हो गया और हमारे कवियों ने पुण्यात्मा सरस्वती देवी को "नायिकाओं" के गुणकथन में लगाया। इस कार्य में (जैसा कि हम हिंदी-काव्य आलोचना † में लिख चुके हैं) उनको विषयी और उद्योगशून्य राजाओं से विशेष सहायता मिली। शृंगार रस के वर्णन में उसी समय से अब

* अवश्य ही सूरदासजी ने शृंगार एवं अन्य कतिपय कवियों ने और रसों की भी कविता की है, पर प्रधानता शांत रस की ही रही।

† सरस्वती भाग १, संख्या १२ देखिए।

तक हमारी कविता ऐसी कुछ उलझ पडी है कि उसका छुटकारा होना ही कठिन दिखाई देता है। यहाँ तो जहाँ देखिए, पति अथवा उपपति और पत्नी का विहार, मान, दूतीत्व, पश्चात्ताप, विरह की उसासें, उपपतियों और जारों की ताक झाँक, सुरतांत के राटके, नायिकाओं के नखशिख और विशेष करके कटि, नैन व नितंबों के वर्णन, उलाहने, गणिकाओं का अधिक धन वसूल करने का प्रयत्न इत्यादि इत्यादि, विशेषत यही सब हमारी कविता हमको दिखा रही है! हमारे इस प्रबंध के नायक भूषण महाराज ऐसे ही समय में उत्पन्न हुए थे, पर इन्हें ऐसे वर्णन पसंद न थे, अत ये लिखते हैं—

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी।
राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकि हु व्यास के संग सोहानी॥
भूषन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र सिवा सरजा सरन्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥

हमारे भूषण महाराज का यह भी एक बडा गुण है कि केवल शृंगार को ही ,नहीं वरन् सभी अनुपयोगी विषयों को लात मारकर इन्होंने भारतमुखोज्ज्वलकारी महाराज शिवाजी, भोंसला एव छत्रसाल बुँदेला जैसे महापुरुषों के गुणगान में अपनी अलौकिक कवित्व शक्ति लगाई और ऐसे उपयोगी वर्णनों की ओर लोगों की रुचि आकर्षित की, यहाँ तक कि उन्होंने सिवाय कतिपय छंदों के शृंगार रस के वर्णन में और

कुछ न कहा। एक शृंगार छन्द में भी मानों प्रायश्चितार्थ, उन्होंने युद्ध का ही रूपक बाँधा है (स्फुट कविता देखिये)।

हर्ष की बात है कि जैसे इन्होंने शृंगार एवं अन्य अनुपयोगी विषयों को लात मार कर वीर, रौद्र तथा भयानक रसों ही को प्रधानता देकर अन्य कवियों को सदुपदेश सा दिया, वैसे ही इनका मान भी ऐसा हुआ, जैसा इनसे श्रेष्ठतर कवियों का भी कभी स्वप्न तक में न हुआ, जैसा कि दास जी के शिरोभाग में उद्धृत छंद से भी प्रकट होता है। बिहारीलालजी सदैव कलियुग के दानियों की निंदा ही करते रहे ("तुम हूँ कान्ह मनो भए आजु कालिह के दानि")। परन्तु उन्होंने यह न विचार किया कि उन्हींके समकालीन भूषण कवि किस प्रकार की कविता करने से किस स्थान को पहुँच गए हैं। अस्तु।

शिवसिंह-सरोज तथा अन्य पुस्तकों में इन महाशय के बनाए चार ग्रंथ लिखे हैं—(१) शिवराज भूषण, (२) भूषण हजारा, (३) भूषण उल्लास, और (४) दूषण उल्लास। इनमें अंतिम तीन ग्रंथों को अद्यावधि मुद्रण का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, और न हमने उन्हें कहीं देखा ही है। नहीं मालूम उनके रचयिता भूषण जी हैं या नहीं। एक यह भी प्रश्न है कि शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक कोई स्वतंत्र ग्रंथ हैं अथवा भूषण की स्फुट कविता के संग्रह मात्र। प्रथम प्रश्न के उठने का यह कारण है कि किसी महाशय ने भूषणजी के उक्त चार ग्रंथ होने का कोई प्रमाण नहीं दिया है। उन्होंने केवल यही कह

दिया है कि भूषण के ये चार ग्रंथ हैं। यदि वे लिखते कि उन्होंने इन चारों ग्रंथों को देखा है अथवा उनका होना किसी स्थान विशेष पर किसी प्रामाणिक रीति पर सुना है, तो उनका कथन अधिक मान्य होता। हमारा इस विषय में यह मत है कि यद्यपि हम नहीं कह सकते कि भूषण महाराज के कौन कौन और ग्रंथ हैं ("हजारा" का होना कालिदास त्रिवेदी ने लिखा है, और उसका नाम यों भी बहुत सुन पड़ता है) तथापि इसमें संदेह नहीं कि इन्होंने कुछ अन्य ग्रंथ निर्माण अवश्य किए होंगे। इस मत की पुष्टि में निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं—

(१) भूषणजी ने शिवाजी के सन् १६७४ वाले राज्याभिषेक के वर्णन में एक ही छंद लिखा हो, यह संभव नहीं। ऐसे प्रधान उत्सव में कविजी अवश्य ही सम्मिलित हुए होंगे अथवा घर से लौटने पर उसका पूर्ण वृत्तांत तो उन्होंने सुना ही होगा। अवश्य ही भूषण शिवाजी को सदैव से राजा और महाराज कहते थे, पर शिवाजी भी तो ऐसा ही करते थे। सो जब उन्होंने अपना विधिवत् शास्त्रानुकूल अभिषेक बड़ी धूम धाम से करना आवश्यक समझा, तब भूषणजी उसका वर्णन करना कैसे अनुचित मानते ? ज्ञात पड़ता है कि कहीं न कहीं भूषणजी ने इसका वर्णन किया ही होगा, पर जिस ग्रंथ में यह वर्णन होगा, वह अभी तक कहीं छिपा ही पड़ा हुआ प्रतीत होता है।

(२) इन महाशय ने कितनी ही अन्य सुप्रसिद्ध घटनाओं का अपने विदित ग्रंथों में समावेश नहीं किया है। सो यदि इनके अन्य ग्रंथों का प्रस्तुत होना न मानें, तो आश्चर्य्यसागर में मग्न होना पड़ेगा। इसी प्रकार उस समय के इनके कितने ही निकटस्थ प्रसिद्ध व्यक्तियों के नाम तक इनके विदित ग्रंथों में नहीं मिलते। भला, शिवाजी और छत्रसाल की भेंट का हाल भूषणजी कैसे न लिखते? अथवा तानाजी, मोरोपंत एवं गुरुवर श्रीरामदासजी तथा कविवर तुकारामजी का हाल लिखे बिना भूषणजी कैसे रहते? शंभाजी के प्रधान कृपापात्र कुलूष * नामक एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, जिन्हें औरंगजेब ने पकड़कर मरवा डाला था। भूषण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, क्या वे कहीं कुलूष का नाम ही न लिखते? शिवाजी का शील स्वभाव बनाने में उनके पालक दादाजी कोणदेव तथा उनकी माता जीजाबाई का बड़ा प्रभाव पड़ा था, तो क्या भूषणजी इनका कहीं नाम तक न लेते? क्या यह सम्भव है कि भूषणजी ब्राह्मण होकर महात्मा रामदास के एवं कवि होकर मराठी कवियों के शिरोमणि तुकारामजी के विषय में एकदम मौन धारण कर लेते? भूषणजी, जैसा कि आगे लिखा जायगा, साहूजी के

---

* वास्तव में इनकी उपाधि कवि कुलेश थी, किन्तु महाराष्ट्र लोग ईर्षावश इनको कलुष अथवा कुलूष कहते थे।

राजत्व काल तक अवश्य जीवित थे, परंतु इनके प्रस्तुत ग्रंथों में साहूजी के विषय में केवल एक छंद मिलता है। इन सब बातों से स्पष्ट विदित होता है कि भूषणजी के कई ग्रंथ देखने का अभी हम लोगों को सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ है।

(३) भूषणजी दीर्घजीवी हुए हैं, और प्राय १०२ वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ। पर शिवराजभूषण उन्होंने केवल छ: सात साल के भीतर (सन् १६६७ से १६७३ ईसवी तक) बना डाला। उस के ४०-४१ वर्ष पीछे तक वे जीवित रहे। सो क्या इतने दिनों में उन्होंने दो चार भी अन्य ग्रंथ न लिखे होंगे ? यह तो विदित ही है कि अंतिम समय तक वे कविता करते रहे।

शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक के विषय में हमारा यह मत है कि वे स्वतंत्र ग्रंथ कदापि नहीं हैं, वरन् भूषणजी के अन्य ग्रंथों अथवा स्फुट कविताओं से संगृहीत हुए हैं।

कवि की जीवनी

भूषण महाराज कान्यकुब्ज ब्राह्मण, कश्यप गोत्री त्रिपाठी (तिवारी) थे। इनके पिता का नाम रत्नाकर था और ये त्रिविक्रमपुर (वर्तमान तिकवाँपुर) में रहते थे। यह तिकवाँपुर यमुना नदी के बायें किनारे पर जिला कानपुर, परगना व डाकखाना घाटमपुर में मौजा "अकबरपुर बीरबल" से दो

मील की दूरी पर बसा है। कानपुर से जो पक्की सड़क हमीरपुर को गई है, उसके किनारे कानपुर से ३० एवं घाटमपुर से ७ मील पर 'सजेती' नामक एक ग्राम है जहाँ से तिकवाँपुर केवल दो मील रह जाता है। "अकबरपुर बीरबल" अब भी एक अच्छा मौज़ा है जहाँ अकबर बादशाह के सुप्रसिद्ध मन्त्री और मुसाहब महाराज बीरबल उत्पन्न हुए (शायद तब इसका कुछ और नाम हो) और रहते थे (शि० भू० के छंद न० २६ व २७ देखिए)।

सुना जाता है कि उक्त रत्नाकरजी श्रीदेवीजी के बड़े भक्त थे और उन्हीं की कृपा से इनके चार पुत्र उत्पन्न हुए—अर्थात् चिंतामणि, भूषण, मतिराम और नीलकंठ उपनाम जटाशंकर।

शिवसिंह-सरोज में भूषणजी का जन्मकाल संवत् १७३८ विक्रमी लिखा है, परंतु यह नितांत अशुद्ध है। वास्तव में हम लोग इस "सरोज" के कारण शिवसिंह जी के बड़े ऋणी हैं, पर कहना ही पड़ता है कि उसमें सन् संवत् का बड़ा गड़बड़ रहता है। शिवसिंहजी भूषण महाराज का शिवाजी एवं छत्रसाल के दरबारों में रहना मानते हैं, पर शिवाजी सन् १६८० ईसवी (अर्थात् १७३६-३७ विक्रमी) में गोलोकवासी हुए थे। तो क्या भूषणजी अपने जन्म के साल डेढ़ साल पहले ही शिवाजी के यहाँ पहुँच गए? भूषणजी लिखते हैं कि संवत् १७३० में उन्होंने शिवराज भूषण समाप्त किया, पर शिवसिंहजी

भूषण एव मतिराम दोनों ही का जन्म सवत् १७३८ का लिखते हैं। दु ख का विषय है कि भूषण के ग्रंथों से उनके जन्मकाल का कुछ भी पता नहीं चलता, न मतिराम कृत रसराज और ललितललाम अथवा चिंतामणि कृत कविकुल कल्पतरु से ही कुछ सहायता मिलती है। एवं मतिराम और चिंतामणि-कृत (अपूर्ण) पिंगलों में भी इसका कुछ पता नहीं चलता। भूषण ग्रंथावली की बंगवासीवाली प्रति की भूमिका में लिखा है कि चिंतामणिजी के ग्रंथ सन् १६२७ से १६५६ ईसवी तक बने। हम नहीं कह सकते कि इस कथन का क्या प्रमाण है, परंतु यदि यह सत्य मान लिया जाय तो चिंतामणि का जन्म सन् १६११ ईसवी के पीछे का नहीं माना जा सकता, क्योंकि १६ वर्ष की अवस्था के पहले कोई मनुष्य कदाचित् ही काव्यग्रंथ रच सके। इस हिसाब से भूषण का जन्म सन् १६१४ ईसवी के आसपास या उससे पहले का मानना पड़ेगा। हमने आगे सप्रमाण लिखा है कि भूषणजी प्राय सन् १७१५ ईसवी तक जीवित रहे। सो यदि बंगवासीवाली बात ठीक हो तो भूषण का एक सौ वर्ष से कुछ अधिक काल तक जीवित रहना पाया जायगा। भूषण के छोटे भाई जटाशंकर का अमरेश विलास ग्रंथ सवत् १६९८ या सन् १६४१ में बना, ऐसा खोज में मिला है। इससे भी भूषण का जन्म-काल सन् १६१५ के लगभग बैठता है। यह बात प्रसिद्ध है कि पहले भूषणजी बिल्कुल अपढ़ और निकम्मे थे एव चिंतामणिजी कमासुत और कुटुंब के

आधार थे। भूषण सदा घर बैठे बैठे बगलें बजाया करते और बड़े भाई की कमाई से पेट भरा करते थे। एक दिन भोजन करते समय भूषण ने अपनी भावज से लवण माँगा। उसने क्रोध से कहा—"हाँ, बहुत सा नमक तुमने कमाकर रख दिया है न, जो उठा लाऊँ!" यह बात इन्हें असह्य हो गई और इन्होंने मुँह का ग्रास उगलकर कहा—"अच्छा, अब जब नमक कमा कर लावेंगे, तभी यहाँ भोजन करेंगे।" ऐसा कह भूषणजी खाली हाथ घर से यों ही निकल पड़े और कहते हैं कि इन्होंने अपनी जिह्वा काट कर श्रीजगदम्बाजी पर चढ़ा दी और एक दम भारी कवीश्वर हो गए। इस बीसवीं शताब्दी में लोग शायद ऐसी बातों पर पूर्ण विश्वास न कर सकें, पर कम से कम जीभ का काटना सम्भव हो सकता है। हमने एक भाट को देखा है, जिसने सो भाँति श्रीदेवीजी पर अपनी जिह्वा कुछ ही दिन पूर्व चढ़ाई थी। दासापुर के बलदेव कवि ने भी अपनी जिह्वा काटकर देवीजी पर चढ़ाई थी। उनकी कटी हुई जिह्वा हमने देखी है। अस्तु जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि भूषण जी ने इसी समय से विद्याध्ययन में बहुत चित्त लगाया और वे थोड़े ही दिनों में कविता करने लगे। इसके बाद वे चित्र-कूटाधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के आश्रय में कुछ दिन रहे। इनकी कवित्व शक्ति से प्रसन्न हो रुद्रराम ने इन्हें सन् १६६६ के लगभग "कविभूषण" की उपाधि दी और तभी से ये भूषण कहलाने लगे, यहाँ तक कि इनके मुख्य नाम

का अब पता भी नहीं लगता (शि० भू० छंद २८ देखिये)। जान पडता है कि पहले भी ये अपना उपनाम भूषण रखते थे और यही इन्हें उपाधि भी मिली। रुद्रराम सोलंकी का पता तो इतिहासों में नहीं लगता, किन्तु इनके पिता हृदयराम का लगता है। आप गहोरा के राजा थे और आप के राज्य में १०४३३ ग्राम थे एवं बीस लाख वार्षिक आय थी। गहोरा चित्रकूट से तेरह मील पर है। चित्रकूट पर भी आप का राज्य समझ पडता है। करवी का उसमें सम्मिलित होना लिखा ही है और यह चित्रकूट से तीन ही मील पर है। सन् १६७१ के लगभग महाराज छत्रसाल ने शेष बुंदेलखंड के साथ इस राज्य पर भी अधिकार कर लिया। सन् १७३१ के लगभग महाराज छत्रसाल के राज्य का बँटवारा हुआ। उक्त बातें मध्य भारत, बाँदा, हमीरपुर, रीवाँ तथा पन्ना के गजेटियरों से विदित होती हैं। मुंशी श्यामलाल के इतिहास से विदित होता है कि उपर्युक्त बँटवारे में गहोरा का राज्य महाराज छत्रसाल के बडे बेटे हृदयशाह के भाग में पडा था। सोलंकियों का राज्य एक बार छूटकर गहोरा पर फिर न हुआ। गहोरा के सोलंकियों को सुरकी कहते थे। अब ज़िला बाँदा में प्राय एक सहस्र सुरकी ठाकुर हैं।

यहाँ से भूषणजी महाराज शिवाजी के दरबार में गए। यह वह समय था जब शिवाजी दक्षिण के अनेक दुर्ग जीत कर रायगढ में राजधानी नियत कर चुके थे (शि० भू० छंद

२४ देखिए) अर्थात् सन् १६६२ ईसवी के पश्चात्। इस समय भूषणजी प्राय. ५४ वर्ष के थे। इससे जान पडता है कि इधर उधर बहुत रहकर आप शिवाजी के यहाँ गए थे। अनुमान होता है कि भूषणजी महाराज शिवाजी के यहाँ उस समय के कुछ ही पीछे पहुँचे थे, जब वे आगरे से निकल आए थे और छत्रसाल बुँदेला से मिल चुके थे अर्थात् सन् १६६७ ईसवी के अत में। निम्नलिखित विचारों से इस अनुमान की पुष्टि होती है—

(१) शिवाजी के यहाँ पहुँचने पर भूषणजी उनका वर्तमान निवासस्थान रायगढ बतलाते हैं और सिवाय उसके और कहीं शिवाजी का रहना नहीं लिखते। शिवाजी सन् १६६२ ईसवी में रायगढ आए थे, अत. भूषणजी उनके दरबार में सन् १६६२ के पश्चात् पहुँचे होंगे (शि० भू० छंद १४ व १६)।

(२) शिवाजी सन् १६६६ में आगरे गए थे और वहाँ से लौटकर घर तक पहुँचने में उन्हें नौ मास लगे थे। अत यदि इस समय के पहले भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते, तो इन नौ मास के बीच में हतोत्साह होकर वे घर लौट आते। उन्होंने सन् १६७३ ईसवी में शिवराजभूषण समाप्त किया, और जान पडता है कि सन् १६६७ ईसवी में ही उन्होंने उसका निर्माण प्रारंभ कर दिया था, क्योंकि ग्रथारंभ ही में तीन बडे प्रभावशाली छंदों में शिवाजी के दिल्लीश्वर से साक्षात्कार का वर्णन है (छंद नबर ३४, ३५ व ३८ देखिए)। यदि

भूषणजी सन् १६६६ के पहले शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते और हतोत्साह होकर लौट आते तो इतने शीघ्र, एक ही साल के भीतर, उस समय के भयावने मार्ग का इतना लंबा सफर करके अपने घर से फिर महाराष्ट्र देश तक न पहुँच सकते। इससे विदित होता है कि शिवाजी के आगरे से लौटने के पश्चात् भूषणजी उनके दरबार में हाजिर हुए (अर्थात् सन् १६६७ में)।

(३) यदि भूषणजी सन् १६६७ के बीच तक शिवाजी के यहाँ पहुँच गए होते, जब कि छत्रसाल बुंदेला ने शिवाजी से भेंट की थी (लालकृत छत्रप्रकाश देखिए), तो वे इस भेंट का हाल शिवराजभूषण में ही कहीं न कहीं अवश्य लिखते। इससे जान पड़ता है कि १६६७ ईसवी के अंत में भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होंगे।

भूषणजी के जन्म से लेकर रुद्रराम सोलंकी के यहाँ जाने तक में तो कोई दो मत नहीं हैं, पर यहाँ से कतिपय लोग इनका दिल्लीश्वर औरंगजेब के यहाँ जाना बतलाते हैं और बादशाह से लड़ाई झगड़े की बातें करके इनका शिवाजी के यहाँ जाना मानते हैं; पर ये बातें सर्वथा अमान्य हैं। चिटणीस की बखर में लिखा है कि चिन्तामणि के भाई भूषण कवि शिवाजी के दरबार में जाकर और वहाँ कुछ काल तक रहकर शिवाजी की प्रशंसा के बहुत से छंद रचकर अपने घर वापस गए। अनन्तर वे दिल्ली में औरंगजेब के दरबार में पहुँचे। वहाँ जो घटनाएँ घटीं, उनके विषय में बखर-कार यों लिखता है—

"भूषणजी ने औरंगज़ेब से यह कहा कि मेरे भाई (चिंतामणिजी) की श्रृङ्गार रस की कविता सुनकर आपका हाथ ठौर कुठौर पडता होगा, पर मेरा वीर काव्य सुनकर वह मोछों पर पडेगा। सो पहले पानी से धोकर हाथ शुद्ध कर लीजिए"। इस पर बादशाह ने कहा कि यदि हाथ मूँछ पर न गया, तो तुम्हें मृत्यु दंड मिलेगा। इतना कहकर हाथ धोकर वह छंद सुनने लगा। भूषण ने भी वीर रस के ऐसे ऐसे बढिया छंद शिवाजी की प्रशंसा के पढे कि उनमें शत्रुयश का गान होते हुए भी औरंगजेब का हाथ मूँछ पर गया। यह हाल महाराज शिवाजी को सुन पडा। तब उन्होंने भूषण को फिर अपने दरबार में बुलाया और भूषणजी वहाँ पधारे। यह कथा कुछ आश्चर्यमयी अवश्य है, किंतु असंभव नहीं। मुग़ल दरबार में हिन्दी कवि भी मान पाते थे। कालिदास त्रिपाठी ने औरंगजेब के दरबार में जाकर उसकी प्रशंसा के छंद बनाए थे, जिनमें से एक 'मिश्रबन्धु-विनोद' में भी लिखा है। बखर के उक्त कथन से सिद्ध है कि भूषण शिवाजी के यहाँ जाकर पीछे से औरंगजेब के यहाँ गए थे। एक भँडौवा भी सुना गया है जो यों है—

> तिमिरलंग लइ मोल रही बाबर के हलके।
> चली हुमाऊँ संग गई अकबर के दल के॥
> जहाँगीर जस लियो पीठि को भार हटायो।
> साहजहाँ करि न्याव ताहि पुनि माँड चटायो॥
> बलरहित भई पौरुष थक्यो दुरी फिरत बन स्यार डर।
> औरंगजेब करिनी सोई दै दीन्हीं कबिराज कर॥

इस भँडौवा में किसी कवि का नाम नहीं और न यही ध्यान में आता है कि इतना बड़ा बादशाह किसी कवि को ऐसी बुड्ढी हस्तिनी देता। सम्भव है कि किसी उर्दू या फारसी के कवि को बादशाह ने कोई हस्तिनी दी हो, क्योंकि कवि यह नहीं कहता कि स्वयं उसी ने वह करिणी पाई। अथवा यह भी सम्भव है कि औरंगज़ेब की कट्टरता से नाराज होकर किसी ने उसका उपहास करने को यों भी भँडौवा बना डाला हो। अस्तु।

शिवाजी की राजधानी में पहुँच कर भूषणजी सन्ध्या को एक देवालय में ठहरे। कुछ रात बीते महाराज शिवाजी भी अकेले ही वहाँ पूजनार्थ पहुँचे। भूषण से उन्होंने पूछा और हाल जानकर कहा कि शिवराज के दरबार में पहुँचने के पूर्व हमें भी कोई छंद सुनाइए। भूषण ने बड़ी कड़क से शि० भू० का छं० नं० ५६ पढ़ा। शिवाजी ने उनकी प्रशंसा कर उस छंद को फिर सुनना चाहा और भूषण ने कह सुनाया। इसी भाँति १८* बार इसी छंद को पढ़कर भूषणजी थक गए

---

* कोई कोई कहते हैं कि १८ नहीं ५२ बार भूषण ने ५२ भिन्न भिन्न छंद पढ़े और वे ही छंद शिवाबावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए, पर यह नितांत अशुद्ध है (शिवाबावनी सम्बन्धी भूमिकांश देखिए)। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि एक ही छंद ५२ बार पढ़ा गया पर १८ बार ही पढ़ा जाना अधिक मान्य प्रतीत होता है। शिवाजी का दान निम्नलिखित छंदों में वर्णित है जो उपर्युक्त बड़े दान की स्वल्पता सिद्ध करते हैं, यथा शि० भू० छंद १४०, १७१, १७५, २१५, २२६, २२१, २८०, २८३, २३६, २४०, इत्यादि इत्यादि।

और १८ वीं बार आगन्तुक (शिवाजी) की पुनः प्रार्थना पर भी न पढ़ सके। तब शिवाजी ने अपना नाम बतला कर कहा कि हमने प्रतिज्ञा की थी कि जितनी बार आप वह छंद पढ़ेंगे, उतनी लक्ष मुद्रा, उतने हाथी और उतने ही ग्राम हम आपको देंगे। पर अधिक मिलना आपके भाग्य में न था। भूषण जी ने उतने ही पर पूर्ण संतोष प्रकट कर कहा कि अब विशेष मुझे क्या चाहिए? *निदान इसी समय से शिवाजी के यहाँ आ वे राजकवि बने। इसी समय (सन् १६६७ ईसवी के अंत) से ये महाशय धीरे धीरे सन् १६७३ ईसवी (संवत् १७३०) तक "शिवराज भूषण" ग्रंथ के छंद अलंकारों के हिसाब पर बनाते रहे (इस विषय पर शिवराज भूषण संबंधी भूमिकाश देखिए)।

सन् १६७४ या ७५ ईसवी के आसपास भूषणजी कुछ दिनों के लिये अपने घर लौटे और रास्ते में छत्रसाल बुँदेला के यहाँ पहुँचे। उन्होंने संभवतः छत्रसाल-दशक के दो प्रारंभिक दोहे एवं छंद नं० ३ इस अवसर पर पढे और बड़े सम्मान के साथ वे कुछ दिन वहाँ रहे। चलते समय छत्रसालजी ने भूषण के शिवाजी कृत सम्मान का ध्यान कर उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया। तब तो भूषणजी अत्यंत प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस"

---

* सं० १७६० के लोकनाथ कवि भूषण को ५२ हाथी मात्र मिलना लिखते हैं। इससे ग्रामों तथा १८ लाख की कथा संदिग्ध है। प्रचुर धन मात्र ठीक है।

कहते हुए दशक के सभवत छुद न० ४ व ५ एव दो चार अन्य कवित्त, जो अप्राप्य हैं, तत्काल पढ़े। छुद नं० ३ में उन्होंने छत्रसाल जी को "लाल छितिपाल" क्या ही ठीक कहा है, क्योंकि उन महाराज की अवस्था उस समय केवल २४, २५ साल की थी। वैसे ही छुद न० ४ व ५ में भी किसी घटना विशेष की बात न कहकर यों ही छत्रशालजी को प्रशसा की गई है। छत्रसाल ने तब तक कोई ऐसी बडी लडाई नहीं जीती थी जो सलहेरि परनालो इत्यादि युद्धों के द्रष्टा और वर्णनकर्ता भूषणजी की निगाह में जॅचती। बुंदेला महाराज की उस समय भूषणजी ने छत्रसाल हाडा (महाराज बूँदी) से तुलना करके भी मानो प्रशसा ही की है, क्योंकि तब तक वास्तव में वे ५२ युद्धों में सम्मिलित रहने और लडनेवाले वीरवर हाडा महाराज के बराबर कदापि न थे, यद्यपि वे आगे चल कर बूँदीनरेश से बहुत अधिक बढ़ गए।

कुछ दिन अपने घर रहकर भूषणजी ने कमाऊँ महाराज के यहाँ जाकर स्फुट छुद न० ६ पढ़ा। महाराज ने समझा कि भूषणजी के सम्मान की जो बातें शिवाजी के सबध में उन्होंने सुनीं, वे शायद ठीक न होंगी। सो वे कविजी की वैसी खातिर बात किए बिना ही उन्हें एक लक्ष रुपए का दान देने लगे। तब भूषणजी ने कहा कि अब रुपए की चाह नहीं; हम तो केवल यह देखने आए थे कि महाराज शिवराज का यश यहाँ तक पहुँचा है या नहीं। यह कह भूषणजी रुपया लिए बिना

घर लौट आए। जान पडता है कि इसी प्रकार भूषणजी छत्रसालजी के यहाँ भी गए थे, पर भूतपूर्व सम्मान से मुग्ध हो उन्हें शिवाजी के जीते जी भी छत्रसाल को अपनी सरकार मानना ही पडा।

थोडे दिनों बाद ये महाराज शिवाजी के यहाँ फिर गए और समय समय पर उनके कवित्त बनाते रहे जिनमें शिवाबावनी के छंद भी हैं। संभव है कि इन दिनों इन्होंने शिवाजी पर दो एक और ग्रंथ भी बना डाले हों जिनका अब पता नहीं चलता।

सन् १६८० ईसवी में शिवाजी के स्वर्गवासी होने पर कदाचित् छत्रसालजी के यहाँ होते हुए ये फिर घर लौट आए और उक्त छत्रसालजी के यहाँ आते जाते रहे।

सन् १७०७ ई० में जब साहूजी ने दिल्लीश्वर की कैद से छूटकर अपना राज्य पाया, तब भूषणजी अवश्य ही उनके यहाँ गए होंगे और सदा की भाँति सम्मानित हुए होंगे। साल डेढ साल वहाँ रहकर भूषणजी फिर घर लौट आए और आनंद से रहने लगे।

जान पडता है कि सन् १७१० ई० के निकट अपने अनुज मतिरामजी के कहने से ये महाशय बूँदीनरेश राव बुद्धसिंह के दरबार में गए और उनके वृद्ध प्रपितामह सुप्रसिद्ध महाराज छत्रसाल हाडा के दो छंद (छ० सा० दशक, छंद १ व २) और स्वयं राव बुद्ध का एक कवित्त (स्फुट नंबर ३)

पढा। अवश्य ही जैसी खातिर बात बूँदी में मतिरामजी की होती थी, उससे कुछ विशेष भूषणजी की हुई होगी। पर भूषण महाराज का चित्त तो बढा हुआ था। सो उन्हें वह खातिर कुछ ऊँची नहीं और वे असन्तुष्ट रहे। यों तो भूषणजी यहाँ कुछ कहे बिना न रहते (जैसा कि कमाऊँ में किया था), पर मतिरामजी की हानि के विचार से कुछ न बोले होंगे और महेवा या पन्ना होते हुए छत्रसाल से मिलते हुए घर लौटे होंगे। इसी मौके पर "और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं के सराहौं छत्रसाल को" वाला छन्द (छ० सा० दशक न० १०) बना होगा। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि सन् १७०७ ईसवी में जाजमऊ का समर जीतने पर औरंगजेब के पुत्र बहादुर शाह बादशाह ने राव बुद्ध को "राव राजा" की उपाधि दी थी; सो भूषणजी के उपर्युक्त कवित्त में "राव राजा" शब्दों से राव बुद्ध का साफ इशारा है। यव कहने को ये शब्द किसी राव या राजा पर भी घटित किए जा सकते हैं। राव बुद्ध सन् १७०६ ई० के लगभग गद्दी पर बैठे थे।

जान पडता है कि मतिराम जी अपना सम्मान बढाने के लिये ही भूषण जैसे राजसम्मानित एवं जगत्प्रसिद्ध कवि को अपनी सरकार में हठ करके ले गए होंगे, नहीं तो प्रायः ६५ वर्ष की अवस्था में उस समय की तीन चार सौ मील की दुर्गम यात्रा करके भूषण जी बूँदी जाने का श्रम कदापि न उठाते। सम्भव है कि राव बुद्ध ही कारणवश इस ओर आए हों और तब भेंट

हुई हो। यह इस बात का भी प्रमाण है कि मतिराम अवश्य भूषण जी के भाई थे। राव बुद्ध हिंदी के रसिक थे, क्योंकि मतिराम जी इनके दरबार में रहते ही थे और इनके प्रपितामह के अग्रज राव भाऊसिंह के यहाँ रहकर 'ललितललाम' बना चुके थे, एवं आगे चलकर कवींद्रजी ने भी राव बुद्ध की प्रशंसा में कई कवित्त कहे हैं, पर तो भी भूषणजी राव बुद्ध की खातिर-बात से बिलकुल अप्रसन्न रहे, यहाँ तक कि इसके पश्चात् उन्होंने साफ़ कह दिया कि अब कोई राव राजा मन में भी न लाऊँगा। इससे स्पष्ट विदित होता है कि छत्रसाल बुंदेला ने लड़कपन के जोश में इनकी पालकी का डंडा अवश्य कंधे पर रख लिया होगा, क्योंकि ये शिवाजी द्वारा भी सम्मानित थे और छत्रसाल शिवाजी को बहुत ही पूज्य दृष्टि से देखते थे, जैसा कि लालकृत "छत्रप्रकाश" से विदित होता है। इसी छंद में इन्होंने छत्रसाल के पहले साहू को सराहने की प्रतिज्ञा की है, और फिर ऐसे समय में जब ये स्वयं छत्रसाल के यहाँ विद्यमान थे। इससे स्पष्ट है कि साहूजी ने भी इनका पूरा सम्मान किया होगा। लगभग सन् १७१५ ई० में एक बार भूषणजी फिर साहूजी के दरबार में गए होंगे। इसी समय स्फुट छंद नंबर ७ बनाया गया होगा। यह छंद उस समय का है कि जब साहूजी का राज्य भली भाँति स्थापित हो चुका था और उन्होंने उत्तर का धावा किया था। यह छंद मुद्रित प्रतियों में भी छपा है।

भूषणजी की कविता अथवा किसी अन्य प्रसंग से उनके

इस समय के पीछे जीवित रहने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। सम्भव है कि उनके अन्य छंदों अथवा ग्रंथों से, जो अभी हम लोगों ने नहीं देखे हैं, उनके इस समय के पीछे भी जीवित रहने का पता लगे। परन्तु जब तक ऐसा पता नहीं लगता है, तब तक हम यही समझते हैं कि भूषणजी सन् १७१५ ई० के लगभग १०२ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवासी हुए होंगे। इधर साहित्यप्रेमियों ने भूषणजी के विषय में नवीन ढूँढ खोज की और हमने भी बहुत कुछ नवीन ऐतिहासिक सामग्री एकत्र की। भूषणजी ने उन दाराशिकोह के विषय का पूर्ण वर्णन किया है जिन्हें सन् १६५८ या १६५९ में औरंगजेब ने मरवा डाला था। इससे सन् १६५७ के लगभग इनके रचना काल का आरम्भ समझ पड़ेगा। मिर्ज़ा राजा जयसिंह और उनके पुत्र महाराज रामसिंह की प्रशंसा में भी इनके छंद मिले हैं। जयसिंह सन् १६२२ में आमेर (जयपुर) की गद्दी पर बैठे थे और रामसिंह सन् १६६७ में। महाराज अवधूतसिंह सन् १७०० से १७५५ तक रीवाँ के नरेश रहे थे। ये केवल छ मास की अवस्था में गद्दी पर बैठे थे। इनकी प्रशंसा का भूषण कृत एक बहुत बढ़िया छंद स्फुट कविता में लिखा है। यह सन् १७१५ के लगभग बना होगा। असोथर के महाराज भगवन्तराय खीची सन् १७४० में मरे थे। उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट करने वाला निम्न छंद भूषण कृत कहा जाता है—।

उठि गयो आलम सों सुजुक सिपाहिन को,

उठि गो बँधैया सब वीरता के बाने को।
'भूषण' भनत उठि गयो है धरा सों धर्म,
उठि गो सिंगार सबै राजा, राव राने को॥
उठि गो सुकवि सील उठि गो जसीलो डील,
फैलो मध्य देश में समूह तुरकाने को।
फूटे भाल भिच्छुक के जूझे भगवतराय,
अरराय टूट्यो कुल खम्भ हिंदुआने को॥

यद्यपि इस छंद की शैली कुछ कुछ तो भूषण की कविता से मिलती जुलती है, किन्तु ऐसे प्रभावपूर्ण थोड़े बहुत छंद कई अन्य हिन्दी कवियों ने भी बनाए हैं। इस छंद को भूषण विषयक वाद में एक महाशय ने लिखा था, जिसमें पहले जसवतराय का नाम लिखा था और पीछे भगवतराय का बतलाया गया। छंद मध्य देश के किसी राजा का कथन करता है। किंतु भगवतराय युक्त प्रांत के निवासी थे। वादकर्ता महाशय खींचतान करके युक्त प्रांत को ही मध्य देश बतलाते हैं। छंद मुक्तक मात्र है और किसी प्रामाणिक रीति से इसका भूषण कृत होना सिद्ध नहीं किया गया है। हमें इसके भूषण कृत पर भगवतराय सोंचो विषयक होने में पूर्ण सन्देह है। यही छंद कुछ लोग 'भूधर' कवि का रचा बतलाते हैं। भूधर भगवतराय के आश्रित भी थे। कुल बातों पर विचार करके भूषण का मृत्यु-काल सन् १७१५ के लगभग बैठता है। खेद का विषय है कि भूषणजी के घरेलू चरित्रों से हम नितांत अनभिज्ञ हैं। इनके विवाह अथवा पुत्रों

पुत्रियों एव मित्रों के विषय में हम कुछ भी नहीं कह सकते। केवल इतना कह सकते हैं कि इनका विवाह अवश्य हुआ था और ये पुत्रवान् भी थे, क्योंकि सुना जाता है कि प्रसिद्ध दोहाकार घृद कवि एव सीतल कवि इन्हीं के वशधर थे, और तिक्वाँपुर में तहकीकात करने से विदित हुआ कि जिला फतेहपुर एव कहीं मध्य प्रदेश में भूषणजी के वशज अब भी वर्तमान हैं। पर इसका ठीक पता कुछ भी नहीं है। ये महाराज पूर्णतया धनसपन्न थे और बडे आदमियों की भाँति रहते थे। देश भर में और राजा महाराजों के यहाँ इनका सदेव बडा मान रहा। इनकी कविता से इतना और भी ज्ञात होता है कि इन्होंने देशाटन बहुत किया था, क्योंकि इनके छदों में सेकडों स्थानों एव तत्कालीन ऐतिहासिक मनुष्यों के नाम आए हैं। प्राचीन ग्रन्थों में भूषण के वश का कुछ वर्णन मिलता है। वश भास्कर सन् १८४० का ग्रन्थ है जिसमें लिखा है कि 'जेठो भ्राता भूषनय मध्य मतिराम तीजो चिंतामनि विदित भये ये कविता प्रवीन'। मनोहर प्रकाश सन् १८६५ का ग्रन्थ है जो चिन्तामणि, भूषण, मतिराम और जटाशकर को इसी क्रम से भाई मानता है। यही मत शिवसिंह-सरोज का भी है जो इससे १८ वर्ष पुराना ग्रन्थ है। मतिराम के वशधर बिहारीलाल ने सवत् १८७२ में रस चन्द्रिका नामी एक टीका की पुस्तक लिखी। उसमें आपने लिखा है कि मेरे पिता का नाम जगनाथ, पितामह का

सीतल तथा प्रपितामह का मतिराम था। आप अपने को कश्यप गोत्री कान्यकुब्ज तिवारी कहते हैं और यह भी लिखते हैं कि भूषण, चिन्तामणि तथा मतिराम को नृप हमीर ने सम्मान से जमुना किनारे त्रिविक्रमपुर में बसाया था। इन्हीं विहारी लाल के समकालीन नवीन कवि भी इन्हें मतिराम का वंशधर मानते हैं। पंडित मयाशंकर जी याज्ञिक ने चिन्तामणि कृत रामाश्वमेध ग्रन्थ में यह देखा है कि चिन्तामणि अपने को कान्यकुब्ज, कश्यप गोत्री, मनोह के तिवारी कहते हैं। बिलग्राम के विद्वान् गुलाम अली ने सन् १७५१ में 'तजकिरा-सर्व आजाद-हिन्द' ग्रन्थ लिखा। उसमें आप लिखते हैं कि चिंतामणि के भाई मतिराम और भूषण थे। सन् १७०३ के लोकनाथ कवि ने लिखा है कि शिवाजी ने भूषण को ५२ हाथी देकर सम्मानित किया। सन् १७३४ के दास कवि ने लिखा है कि भूषण ने कविता से प्रचुर संपत्ति कमाई। इन बातों से भूषण संबन्धी कई घटनाएँ दृढ़ता के साथ ज्ञात होती हैं। एक महाशय ने किसी वत्स गोत्री तिवारी मतिराम की बनाई हुई वृत्ति-कौमुदी का कथन किया है। इन मतिराम का निवासस्थान बनपुर था और इनके पिता विश्वनाथ थे। पहले तो इस ग्रन्थ का अस्तित्व ही संदिग्ध है, क्योंकि जिन्होंने इसका कथन किया है, वे कहते हैं कि अब यह मिल नहीं रहा है। और यदि इसका अस्तित्व मानें भी तो इसके रचयिता वत्स गोत्री मति-राम थे जो कश्यप गोत्री हमारे मतिराम से भिन्न ही थे।

अतएव वृत्त कौमुदी के कथनों से भूषण और मतिराम के भ्रातृत्व में कोई संदेह नहीं पड़ता। सूर्यमल्ल बूँदी दरबार के कवि थे। उनके सन् १८४० के ग्रन्थ वंशभास्कर में लिखा है कि मतिराम को बूँदी दरबार से समस्त वस्त्र, आभूषण, चार हजार रुपए, ३२ हाथी तथा रिडी और घिडी नामक दो ग्राम मिले थे। इतना पाने पर भी भूषण के आगे मतिराम का संपत्तिशाली कवियों में कुछ भी बखान नहीं हुआ। इससे भी जान पड़ता है कि भूषण ने कविता से मतिराम की अपेक्षा बहुत ही अधिक संपत्ति कमाई थी। इन महाकवि की कविता से प्रकट होता है कि ये बड़े ही सत्यप्रिय और यथार्थ-भाषी थे। यहाँ तक कि इन्होंने शिवाजी की पराजय का भी वर्णन किसी न किसी रीति से कर ही दिया है, और जहाँ शिवाजी ने कोई ऐसा काम किया है। उसे भी कह दिया है (देखिए शि० भू० छंद नं० ७१, २१२, २१३, २७२)। भूषणजी को हिंदू जातीयता का सदैव पूरा विचार रहता था। ये बड़े ही प्रभावशाली कवि हो गए हैं और इनका जैसा सम्मान अथवा धन किसी कवि ने कविता से अद्यापि उपार्जित नहीं किया।

भूषणजी के प्रस्तुत ग्रंथों में शिवराजभूषण, शिवाबावनी, छत्रसालदशक तथा स्फुट कवित्त इस ग्रंथ में दिए गए हैं। इनके ग्रंथों से उस समय के राजाओं पर मुगल साम्राज्य की भी दशा भली भाँति विदित होती है। अत सब से प्रथम हम भूषण की प्रस्तुत कविता से उस समय का जो कुछ हाल ज्ञात

होता है, वह लिखते हैं। हर्ष का विषय है कि भूषणजी का वर्णन इतिहास के विरुद्ध नहीं है, क्योंकि भूषणजी को इतिहास विरुद्ध बनाकर बातें लिखना पसंद न था। इनका लिखा हुआ हाल इतिहास से अधिक विस्तृत अवश्य है, क्योंकि कवि जितने विस्तार और समारोह के साथ कोई घटना लिखता है, वैसा इतिहासकार प्राय: नहीं करता। इसमें केवल सन् संवत् का ब्योरा और घटनाओं का क्रम हम अपनी ओर से लिखते हैं, शेष सब भूषण के छंदों से लिखा जाता है। भूषणजी के लिखे अनुसार उस समय का इतिहास यों है।

सूर्य वंश पृथ्वी पर विख्यात है जिसमें परमेश्वर ने बार बार अवतार लिया। इसी वंश में एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ जिसने अपना सिर शङ्करजी पर चढ़ाकर अपने और स्ववंशजों के लिये सीसोदिया (हिंदूपति महाराणा उदयपुर एवं नैपाल के राजा इसी उज्ज्वलवंश के हैं) की उपाधि प्राप्त की *। उसी वंश में एक बड़ा पराक्रमी पुरुष माल मकरंद हुआ जिसके पुत्र राजा शाहजी भौंसला हुए। शाहजी बड़े दानी और बहादुर थे और उन्हीं के पुत्र महाराज शिवराज छत्रपति (शिवाजी) हुए जो मानो और श्रीशङ्करजी के बड़े भक्त थे और जिन्हें शैव कथाओं के सुनने से बड़ा प्रेम था। वे बड़े ही उदार दानी थे एवं उनके साहस की कोई सीमा

---

* वास्तव में सिसोदावासी होने से ये लोग सीसोदिया कहलाते थे।

ही न थी। उस समय दक्षिण में आदिलशाही, कुतुबशाही, निजामशाही, इमादशाही और बारीदशाही नामक पाँच * राजघराने शाह कहलाते थे, जिनके राजस्थान यथाक्रम बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर, एलिचपुर और बिदर थे। उत्तर में मुगलों का सुविशाल साम्राज्य था। उस समय श्रीनगर,

---

* ये पाँचों राजघराने दक्षिण की बहमनी राज्य के टूटने पर बने थे। बहमनी राज्य सन् १३४७ इसवी में स्थापित हुआ था और १५२५ तक रहा। यह राज्य प्राय वर्तमान हैदराबाद रियासत पर विस्तृत था। बीजापुर सन् १४८९ में स्थापित हुआ और औरङ्गजेब ने इसे छीन लिया। गोलकुंडा सन् १५१२ ई० में स्थापित हुआ और इसे भी औरंगजेब ने सन् १६८८ में जीत लिया। अहमदनगर का राज्य सन् १४९० में स्थापित हुआ और १६३६ ई० में इसे शाहजहाँ ने जीत लिया। एलिचपुर सन् १४८४ में स्थापित हुआ और १५५२ ई० में मुगल राज्य में मिला लिया गया। बिदर राज्य १४९८ में स्थापित हुआ और १६५७ में इसे औरंगजेब ने जीत लिया। इन सब में बीजापुर और गोलकुंडा प्रधान थे। शिवाजी के पिता शाहजी पहले निजामशाही बादशाहों के यहाँ एक प्रधान कारबारी थे और शाहजहाँ से उन्होंने घोर युद्ध किया था और क्रमशः कई बादशाहों को तख्त पर बैठाकर अपने ही बाहु और बुद्धिबल से शाहजहाँ को हैरान कर रक्खा था। तभी तो भूषणजी ने उन्हें 'साहिनिजामसखा' (शिव० भू० छंद न० ७) और "साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया" (छंद न० १०) कहा है। इसके बाद ये बीजापुर में नौकर हो गए और तंजौर के निकटस्थ राज्य में अपनी मृत्यु पर्यंत गवर्नरी (शासन) करते रहे। पीछे इनके द्वितीय पुत्र वेंकोजी तंजौर के स्वतंत्र राजा हो गए थे। इनके वंशजों से यह राज्य उन्नीसवीं शताब्दी में अंगरेजों ने छीन लिया। लार्ड डलहौजी ने तंजौर के राजा की पोलेटिकल पेंशन भी बंद कर दी।

नैपाल, मेवार, ढुढार, मारवाड, बुँदेलखंड भारखड और पूर्व पश्चिम सब देशों के राजे अर्थात् राना, हाडा, राठौर, कछवाहे, गौर इत्यादि सब मुगलों से दबते थे और सब उनकी प्रजा के समान थे। वे राज्य तो अवश्य करते थे, परतु अपनी स्वतंत्रता खो बैठे थे।

ऐसे भयावने समय में शिवाजी ने मुसलमानों का सामना करने का साहस किया। चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की उनकी उच्च अभिलाषा थी। उनके परिश्रम का यह फल हुआ कि उन्होंने बाल्यावस्था ही में बीजापुर तथा गोलकुंडा को जीतकर युवावस्था में दिल्लीपति को पराजित किया और उनके राज्य का प्रजा तथा हिंदू समाज पर यह प्रत्यक्ष प्रभाव पडा कि वेद पुराणों की चर्चा एवं द्विजदेवों की अर्चा की प्रथा फिर लोक में फैल गई। शिवाजी ने पहले बीजापुर के बादशाह से लडना आरंभ किया। सन् १६५५ में उन्होंने चद्रावल (चंद्रराव मोरे) को मारकर जावली जब्त कर ली। फिर ये और छोटे छोटे दुर्ग लेते रहे। सन् १६५७ में शिवाजी ने अहमदनगर पर मुगलों के सरदार नौरोरी खाँ तथा कारतलबखाँ से युद्ध किया। सन् १६५८ में औरंगज़ेब अपने भाई दारा एवं मुराद को मरवा, शाह शुजा को अराकान भगा और अपने पिता शाहजहाँ को कारागार में डालकर राज्य करने लगा। सन् १६५९ में आदिल शाह ने शिवाजी से लडने को एक बडी सेना के साथ अफज़ल खाँ को भेजा। इस पर संधि की बात चीत चली और यह स्थिर हुआ कि शिवाजी

अफजलखॉ से अकेले में मिलें। इस अवसर पर अफजल ने दगा करके शिवाजी पर कटार का वार किया। शिवाजी पहले से खाँ को मारना चाहते थे। सो उन्होंने खॉ की पसली लोहे के बने हुए शेर के पंजे से नोच ली और फिर गड़बड़ में खड्ग से उसे तथा उसके शरीररक्षक सैयद बंदा को मार डाला। फिर उस की सब सेना को भी शिवाजी ने परास्त किया। यह सुनकर उसी सन् में बीजापुराधीश ने रुस्तमेजमाँ को भेजा, परंतु शिवाजी से उसे भी पराजित होना पड़ा। सन् १६६१ में शिवा जी ने शृंगारपुर को जीत लिया। १६६२ में (अपने पिता शाह जी की सम्मति से) उन्होंने रायगढ़* को अपना निवासस्थान स्थिर किया और राजगढ को छोड़ दिया। इस समय ये

---

* भूषणजी ने रायगढ़ का ही हाल लिखा है, परंतु उसका नाम राजगढ़ लिखा है। शिवाजी सन् १६४७ से १६६२ तक राजगढ़ में रहे थे और १६६२ ई० से मरण पर्यंत (१६८०) रायगढ़ में रहे। भूषणजी ने लिखा है कि शिवाजी ने दक्षिण के सब दुर्ग जीतकर राजगढ़ में वास किया (शि० भू० छंद नं० १४)। फिर शिवराज भूषण ग्रंथ में राजगढ़ का वास वर्तमान काल में वर्णित है। यह ग्रंथ सन् १६६७ या १६६८ में प्रारंभ और सन् १६७३ में समाप्त हुआ था, जब शिवाजी राजगढ़ में न थे। इसी से विदित है कि "राजगढ़" लिखने से भूषण का रायगढ़ का प्रयोजन था, नहीं तो उनका राजगढ़ संबंधी समस्त कथन अशुद्ध हो जाता है। अतः यही मानना चाहिए कि य और ज में भेद न मानकर भूषण ने रायगढ़ को राजगढ़ लिखा है अथवा लेखकों के भ्रम से उनका वास्तविक शब्द रायगढ़ राजगढ़ हो गया। दूसरा अनुमान ही ठीक जँचता है। इसी लिये हमने ग्रंथ में शुद्ध शब्द का प्रयोग किया है।

दक्षिण के सब किले जीत चुके थे। शिवाजी की सभा बहुत ही अच्छी और दुर्ग बडा ऊँचा तथा दृढ था। शिवाजी ने बहुत से दुर्ग बनवाए और अपना राज्य अनेकानेक विजयों द्वारा बहुत बढाया।

सन् १६६३ में मुगलों ने इनका बल बहुत बढता देखकर जोधपुर के महाराज जसवंतसिंह और शाइस्ता खाँ को इनके विरुद्ध एक बडी भारी फौज के साथ भेजा। शाइस्ता खाँ एक लाख फौज के साथ पूना में आकर ठहरा। शिवाजी ने उसे बडी बुद्धिमानी से परास्त किया। सन् १६६४ में इन्होंने मुगलों के राज्य में घुसकर सूरत को लूटा और फिर मक्का जानेवाले बहुत से सैयदों की नौकाएँ लूट लीं तथा दड लेकर सैय्यदों को छोडा। इस पर औरंगजेब ने बडा क्रोध करके एक बडा दल जयपुर के महाराज मिर्जा राजा जयसिंह के आधिपत्य में शिवाजी से लडने को भेजा। अब शिवाजी पर बडा सकट पडा, क्योंकि वे हिंदू का खून बहाना नहीं चाहते थे। अत सन् १६६६ में उन्होंने जयसिंह को कुछ गढ दिए और फिर वे आगरे भी गए। औरंगजेब ने अभिमान करके इन्हें पजहजारी सरदारों में खडा किया। इस पर इन्होंने शाह को सलाम नहीं किया और मूँछ पर ताव देकर अपनी स्वतत्रता एव क्रोध प्रकाश किया। इनके रोब से दरबार में सन्नाटा पड गया। इनके हाथ में कोई अस्त्र न था, नहीं तो वहीं मार काट होने लगती। निरस्त्र होने से क्रोध के मारे आप मूर्छित हो गए और

तब लोग इन्हें गुसलखाने में ले आकर होश में लाए। इन्हीं कारणों से भूषणजी ने कई स्थानों पर गुसलखाने का वर्णन किया है। फिर तरकीब से शिवाजी आगरे से निकल आए और अपना राज्य करने लगे।

सन् १६६६ में औरंगजेब ने हिंदुओं के असंख्य मंदिर खुदवाए, मथुरा को ध्वस्त करके देहरा केशवराय तुड़वा डाला और स्वयं काशी विश्वनाथ के मंदिर तक को नष्ट करके उसके स्थान पर मसजिद बनवाई (शिवा० बा० छंद नं० २०, २१, २२ देखिए) *। सन् १६७० में शिवाजी ने फिर सूरत लूटा। उसी साल आपने उदैभान राठौर को मारकर सिंहगढ़ मुग़लों से छीन लिया। यह दुर्ग सन् १६६६ में शिवाजी ने जयसिंह को दिया था।

मुग़लों ने शिवाजी की यह प्रचंड धृष्टता देख बड़ा क्रोध करके एक विकराल सेना दिलेरखाँ और खानजहाँ बहादुर के आधिपत्य में भेजी, परंतु सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने सलहेरि पर इस बृहत् सेना को पूर्णतया परास्त किया। इस युद्ध में दिल्ली के तनीस बड़े सेनापतियों को इन्होंने पकड़ लिया और कोटा बूँदी के राजकुमार किशोरसिंह, मोहकमसिंह, इखलास खाँ इत्यादि को परास्त करके समस्त दिल्ली दल का बड़ा ही

---

* उस समय शिवाजी और महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब को जो पत्र लिखे थे, वे देखने योग्य हैं। ग्रांट डफ कृत मरहठों के इतिहास और टाड राजस्थान में उनके अनुवाद दिए हुए हैं।

दक्षिण के सब किले जीत चुके थे। शिवाजी की सभा बहुत ही अच्छी और दुर्ग बड़ा ऊँचा तथा दृढ था। शिवाजी ने बहुत से दुर्ग बनवाए और अपना राज्य अनेकानेक विजयों द्वारा बहुत बढाया।

सन् १६६३ में मुगलों ने इनका बल बहुत बढता देखकर जोधपुर के महाराज जसवतसिंह और शाइस्ता खाँ को इनके विरुद्ध एक बड़ी भारी फौज के साथ भेजा। शाइस्ता खाँ एक लाख फौज के साथ पूना में आकर ठहरा। शिवाजी ने उसे बड़ी बुद्धिमानी से परास्त किया। सन् १६६४ में इन्होंने मुगलों के राज्य में घुसकर सूरत को लूटा और फिर मक्का जानेवाले बहुत से सैयदों की नौकाएँ लूट लीं तथा दड लेकर सैय्यदों को छोड़ा। इस पर औरगजेब ने बड़ा क्रोध करके एक बड़ा दल जयपुर के महाराज मिर्जा राजा जयसिंह के आधिपत्य में शिवाजी से लडने को भेजा। अब शिवाजी पर बड़ा सकट पड़ा, क्योंकि वे हिंदू का खून बहाना नहीं चाहते थे। अत. सन् १६६६ में उन्होंने जयसिंह को कुछ गढ दिए और फिर वे आगरे भी गए। औरंगजेब ने अभिमान करके इन्हें पंजहजारी सरदारों में खड़ा किया। इस पर इन्होंने शाह को सलाम नहीं किया और मूँछ पर ताव देकर अपनी स्वतन्त्रता एव क्रोध प्रकाश किया। इनके रोब से दरबार में सन्नाटा पड़ गया। इनके हाथ में कोई अस्त्र न था, नहीं तो वहीं मार काट होने लगती। निरस्त्र होने से क्रोध के मारे आप मूर्छित हो गए और

तब लोग इन्हें गुसलखाने में ले जाकर होश में लाए। इन्हीं कारणों से भूषणजी ने कई स्थानों पर गुसलखाने का वर्णन किया है। फिर तरकीब से शिवाजी आगरे से निकल आए और अपना राज्य करने लगे।

सन् १६६६ में औरंगजेब ने हिंदुओं के असंख्य मंदिर खुदवाए, मथुरा को ध्वस्त करके देहरा केशवराय तुड़वा डाला और स्वयं काशी विश्वनाथ के मंदिर तक को नष्ट करके उसके स्थान पर मसजिद बनवाई (शिवा० बा० छंद नं० २०, २१, २२ देखिए) *। सन् १६७० में शिवाजी ने फिर सूरत लूटा। उसी साल आपने उदैभान राठौर को मारकर सिंहगढ़ मुगलों से छीन लिया। यह दुर्ग सन् १६६६ में शिवाजी ने जयसिंह को दिया था।

मुगलों ने शिवाजी की यह प्रचंड धृष्टता देख बड़ा क्रोध करके एक विकराल सेना दिलेरखाँ और खानजहाँ बहादुर के आधिपत्य में भेजी, परंतु सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने सलहेरि पर इस बृहत् सेना को पूर्णतया परास्त किया। इस युद्ध में दिल्ली के तेंतीस बड़े सेनापतियों को इन्होंने पकड़ लिया और कोटा बूँदी के राजकुमार किशोरसिंह, मोहकमसिंह, इखलास खाँ इत्यादि को परास्त करके समस्त दिल्ली दल का बड़ा ही

* इस समय शिवाजी और महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब को जो पत्र लिखे थे, वे देखने योग्य हैं। ग्रांट डफ कृत मरहठों के इतिहास और टाड राजस्थान में उनके अनुवाद दिए हुए हैं।

दक्षिण के सब किले जीत चुके थे। शिवाजी की सभा बहुत ही अच्छी और दुर्ग बड़ा ऊँचा तथा दृढ था। शिवाजी ने बहुत से दुर्ग बनवाए और अपना राज्य अनेकानेक विजयों द्वारा बहुत बढाया।

सन् १६६३ में मुगलों ने इनका बल बहुत बढ़ता देखकर जोधपुर के महाराज जसवंतसिंह और शाइस्ता खाँ को इनके विरुद्ध एक बडी भारी फौज के साथ भेजा। शाइस्ता खाँ एक लाख फौज के साथ पूना में आकर ठहरा। शिवाजी ने उसे बडी बुद्धिमानी से परास्त किया। सन् १६६४ में इन्होंने मुगलों के राज्य में घुसकर सूरत को लूटा और फिर मक्का जानेवाले बहुत से सैयदों की नौकाएँ लूट लीं तथा दंड लेकर सैय्यदों को छोडा। इस पर औरंगजेब ने बडा क्रोध करके एक बड़ा दल जयपुर के महाराज मिर्जा राजा जयसिंह के आधिपत्य में शिवाजी से लडने को भेजा। अब शिवाजी पर बडा संकट पड़ा; क्योंकि वे हिंदू का खून बहाना नहीं चाहते थे। अतः सन् १६६६ में उन्होंने जयसिंह को कुछ गढ दिए और फिर वे आगरे भी गए। औरंगजेब ने अभिमान करके इन्हें पंजहजारी सरदारों में खड़ा किया। इस पर इन्होंने शाह को सलाम नहीं किया और मूँछ पर ताव देकर अपनी स्वतंत्रता एवं क्रोध प्रकाश किया। इनके रोब से दरबार में सन्नाटा पड़ गया। इनके हाथ में कोई अस्त्र न था, नहीं तो वहीं मार काट होने लगती। निरस्त्र होने से क्रोध के मारे आप मूर्छित हो गए और

तब लोग इन्हें गुसलखाने में ले जाकर होश में लाए। इन्हीं कारणों से भूषणजी ने कई स्थानों पर गुसलखाने का वर्णन किया है। फिर तरकीब से शिवाजी आगरे से निकल आए और अपना राज्य करने लगे।

सन् १६६९ में औरंगजेब ने हिंदुओं के असंख्य मंदिर खुदवाए, मथुरा को ध्वस्त करके देहरा केशवराय तुड़वा डाला और स्वयं काशी विश्वनाथ के मंदिर तक को नष्ट करके उसके स्थान पर मसजिद बनवाई (शिवा० बा० छंद नं० २०, २१, २२ देखिए) *। सन् १६७० में शिवाजी ने फिर सूरत लूटा। उसी साल आपने उदेभान राठौर को मारकर सिंहगढ़ मुगलों से छीन लिया। यह दुर्ग सन् १६६६ में शिवाजी ने जयसिंह को दिया था।

मुगलों ने शिवाजी की यह प्रचंड धृष्टता देख बड़ा क्रोध करके एक विकराल सेना दिलेरखाँ और खानजहाँ बहादुर के आधिपत्य में भेजी, परंतु सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने सलहेरि पर इस बृहत् सेना को पूर्णतया परास्त किया। इस युद्ध में दिल्ली के तैंतीस बड़े सेनापतियों को इन्होंने पकड़ लिया और कोटा बूँदी के राजकुमार किशोरसिंह, मोहकमसिंह, इखलास खाँ इत्यादि को परास्त करके समस्त दिल्ली दल का बड़ा ही

* उस समय शिवाजी और महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब को जो पत्र लिखे थे, वे देखने योग्य हैं। ग्रांट डफ कृत मरहठों के इतिहास और टाड राजस्थान में, उनके अनुवाद दिए हुए हैं।

विकराल कतले श्राम किया। इसी युद्ध में कितने ही रुहेले, सैय्यद, पठान, चंद्रावत आदि मारे गए। तदनंतर दिलेरखाँ को पराजित करके शिवाजी ने रामनगर एवं जवार पर वैरियों को परास्त किया और गुजरात को भी नीचा दिखाया।

इसके पश्चात् आपने सन् १६७३ में मृत आदिलशाह के नाबालिग पुत्र के पालक एवं समस्त राज्य के प्रबंधकर्त्ता खवासखाँ से कुछ देश माँग भेजे, परंतु वजीरों ने न दिए। तब दो ही दिनों में दौड़कर आपने बहलोलखाँ को हराकर परनाले का किला छीन लिया। इस पर ख़वासखाँ ने बहलोलखाँ को आप से लड़ने को फिर भेजा, परतु उसे मरहठों ने घेर लिया और कृपा करके जाने दिया। फरवरी मार्च सन् १६७४ में शिवाजी के सेनापति हंसाजी माहिते ने जसारी पर बहलोलखाँ को पूर्णतया पराजित किया। इस समय बीजापुर समान शत्रु नहीं रहा था, इसी लिये भूषण लिखते हैं "बापुरो एदिलसाहि कहाँ कहाँ दिल्ली को दामनगीर शिवाजी।" *

इस प्रकार अपना बल भली भाँति स्थापित करके

---

* इस समय जून सन् १६७४ में शिवाजी ने अपना अभिषेक कराया और अपने नाम का सिक्का चलाया। सन् १६६७ ई० में प्रसिद्ध छत्रसाल बुँदेला शिवाजी से मिलने आए थे और इनसे प्रोत्साहित होकर मुगलों से लड़ने लगे थे। सन् १६७४ तक वे महाराज भी कई छोटे छोटे दलों को जीत बुँदेलों का दल जोड़ मुगलों से बड़े बल के साथ लड़ने लगे थे।

शिवाजी सन् १६७६ से ७८ तक अठारह महीने करनाटक वश करने में लगे रहे। ऐसी प्रचंड और प्रभावपूरित इनकी कोई चढ़ाई नहीं हुई थी और इसका वर्णन भी कवि ने बड़े उत्कृष्ट छंदों में किया है (शि० बा० के छंद नं० ४२, ४५, ४६ देखिए)।

इस समय इनकी ऐसी धाक बँध गई थी कि पुर्तगाल-वाले तक इन महाशय को नजरें भेजते थे। बीजापुर एवं गोलकुंडावाले इनसे पीछे दबते थे (वरन् पाँच लक्ष और तीन लक्ष रुपए सालाना कर भी देते थे) तथा औरंगजेब का राज्य नर्मदा के उत्तर तक रह गया था। इसी समय भूषणजी ने औरंगजेब को ललकारा था (शि० बा० न० ३६ देखिए)। शिवराज के प्रयत्नों का फल स्वरूप भूषण ने यथार्थ छंद कहा है "वेद राखे विदित" इत्यादि (शि० बा० न० ५१ देखिए)। भूषण जी का लिखा हुआ इतिहास इसी जगह समाप्त होता है *।

अब हम पाठकों के लाभार्थ उस समय के ऐसे इतिहास को भी सूक्ष्मतया लिखते हैं जिससे उन्हें भूषण के काव्य का पूर्ण प्रमान समझने में सुभीता हो।

शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० में हुआ था। इनकी माता का नाम जीजाबाई था। शाहजी ने एक दूसरा भी

---

* पाठकगण देख सकते हैं कि, ऊपर के इतिहास में, "काव्य" की कुछ दहक महक छोड़, प्राय सभी बातें सत्य हैं।

विवाह कर लिया और वे अपनी नवीन स्त्री के साथ तञ्जौर में रहने लगे। इसी स्त्री के पुत्र वेंकोजी थे। जीजा बाई अपने पुत्र शिवाजी के साथ शाहजी के मुख्य निवासस्थान पूने में रहती थीं और शाहजी की पैतृक जागीर का प्रबंध करती थीं। इस समय शाहजी ने दादाजी कोणदेव को शिवाजी के पालनार्थ एवं पैतृक सम्पत्ति के रक्षणार्थ नियत कर रक्खा था। यह जागीर दो लाख रुपए सालाना आय की थी। बालक शिवाजी का पढने लिखने में जी नहीं लगाता था, परंतु अस्त्रविद्या के सीखने एवं दौड धूप के कामों में उसे अधिक उत्साह रहता था। उसका जी गौओं, ब्राह्मणों और देवालयों की बुरी दशा देख मुसलमानों की ओर से बहुत हट गया था और वह बाल्यावस्था से ही हिंदू राज्य स्थापित करने एव म्लेच्छों को मार भगाने का स्वप्न देखने लगा था*। शाहजी मुसलमानों के नौकर थे, अत: उन्हें शिवाजी का यह हाल सुन कर बडा भय उपस्थित हुआ, और उन्होने दादाजी को इसका निषेध करने को लिख भेजा। परतु पिता और पालक दोनों के निषेध करने पर भी बालक शिवाजी ने अपना ढंग नहीं बदला। वह किलेदारों से एक एक करके दुर्ग लेने लगा। बडा आदमी होता हुआ भी छोटे छोटे लोगों के यहाँ तक वह चला जाता था; और इसी लिये वे लोग इसे बहुत चाहने लगे और सच्चे

---

* वह समय ही ऐसा अनिश्चित था।

चित्त से इसके अनुयायी हो गए। इसी समय दादाजी कोण्देव मृत्युशय्या पर पडे और मरने के पहले उन्होंने शिवाजी को हृदय से लगाकर उसे मुसलमानों से युद्धार्थ प्रोत्साहित किया।

इसी समय से शिवाजी और भी साहस के काम करने लगे। आदिल शाह से खुल्लमखुल्ला लडने में प्रवृत्त हुए, यद्यपि उस समय भी शाहजी आदिल शाह के ही नोकर थे। अंत में आदिल शाह ने शिवाजी के विरोध में शाहजी की भी गुप्त सम्मति का भ्रम करके उन्हें कारागृह में डाल दिया, परंतु शिवाजी ने शाहजहाँ की नौकरी करना स्वीकार करके उसके दबाव से अपने पिता को बीजापुर के कारागार से छुडवा लिया। इसके कुछ पीछे आदिल शाह जान गया कि शिवाजी अपने बादशाह ही का नहीं वरन् अपने पिता का भी विरोधी है, अतः उसने शाहजी को फिर तजौर भेज दिया। शिवाजी ५३ वर्ष की अवस्था में सन् १६८० ई० में स्वर्गवासी हुए। मरते समय आपने पाँच करोड रुपए वार्षिक आय का राज्य छोडा। किसी किसी ने शिवाजी को सोलंकी कहा है, परंतु सोलंकी अग्निवंशी हैं और शिवाजी सूर्यवंशी थे।

इसी सन् में उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने मुगलों की अधीनता को लात मारकर औरंगजेब का सामना करके चार घोर युद्धों में उसे परास्त किया। प्रथम युद्ध नालघाटी के पास हुआ जिसमें मुगलों की पचास हजार सेना औरंगजेब के पुत्र अकबर के साथ थी। दूसरी लडाई देसौरीघाटी के आगे हुई।

उसमें भी मुगलों की उतनी ही सेना शाहजादा अकबर को बचाने गई थी। तीसरे युद्ध में स्वयं औरंगजेब शाहजादा आजम के साथ मुगलों का मुख्य दल लिए अकबर और दिलेर-खाँ की बाट जोहता था। इस तीसरे युद्ध में औरंगजेब को बड़ी ही कादरता से भागना पड़ा और शाही झंडा, हाथी और साज सामान राणाजी के हाथ लगे। जब औरंगज़ेब भागकर अजमेर पहुँचा, तब उसने वहाँ से खान रुहेला को बारह हजार सेना के साथ साँवलदास से लड़ने भेजा, परंतु यह दल भी पुरमंडल में पराजित हुआ। इसी समय पर राणाजी ने अपने प्रधान अमात्य दयालसाह को भेजा और उन्होंने मालवा से नर्मदा और बेतवा तक का देश लूटा। फिर सारंगपुर, देवास, सारौंज, मंडी, उज्जैन और चँदेरी भी लूटे गए। इसी समय उसने अपना दल महाराणा के बड़े पुत्र जयसिंह की सेना से मिलाकर शाहजादा आजम को चित्तौर के समीप परास्त किया। तब महाराणा के द्वितीय पुत्र भीम ने अपना दल जोधपुर के राठौरों के दल से मिलाकर शाहजादा अकबर और तहौवरखाँ को गनोरा पर हराया। इस प्रकार मुगलों की प्रचंड हार से प्रोत्साहित होकर सीसोदियों और राठोरों ने शाहज़ादा अकबर को अपनी ओर मिलाकर औरंगजेब को तख्त से उतार देने का प्रबंध किया, परंतु दुर्भाग्यवश इनको यह संदेह हो गया कि अकबर गुप्त रीति से अपने पिता से मिला हुआ है, अतः जीत जिताकर ये अपने इरादे से हट गए और औरंगज़ेब बच गया।

इस युद्ध में सीसोदियों और राठौरों ने मिलकर औरंगजेब से युद्ध किया। राठौरों के मिलने का यह कारण था कि महाराज जसवंतसिंह भीतरी सूरत से औरंगजेब के घोर शत्रु थे, परंतु दिखाने को उससे मिले हुए थे। जब ये महाराज मुगलों की ओर से सन् १६६३ ई० में शाइस्ताखाँ के साथ शिवाजी से लड़ने गए थे, तब शिवाजी से मिलकर इन्होंने शाइस्ताखाँ के दल की दुर्गति करा डाली थी। इसी प्रकार शाहशुजा से मिल कर इन्होंने औरंगजेब को धोखा दिया था। इन कारणों से औरंगजेब इनसे बहुत कुढ़ता था, परंतु इनसे खुल्लमखुल्ला लड़ना अच्छा नहीं समझता था। इसी कारण उसने इन्हें काबुल में लड़ने के लिये भेज दिया और वहाँ जब ये महाराज सन् १६८० में मर गए, तब उसने राठौरों पर क्रोध प्रकट किया। महाराज जसवंतसिंह के सब पुत्र मर चुके थे, केवल एक कई मास का लड़का, जो काबुल में पैदा हुआ था, जीवित था। जब राठौर लोग काबुल से लौटकर दिल्ली आए, तब औरंगजेब ने उन्हें घेर लिया और उस लड़के सहित उन्हें मार डालने का पूर्ण प्रयत्न किया। परंतु राठौरों ने उस बच्चे को किसी प्रकार बचा लिया और मुगलों से लड़ते भिड़ते वे जोधपुर जा पहुँचे। मुगलों ने उनका पिंड जोधपुर में भी न छोड़ा और प्रायः समस्त मारवाड़ पर अपना दखल जमा लिया। परंतु दुर्गादास के आधिपत्य में राठौर लोग अपने बालक महाराज को पहाड़ों में छिपाए हुए औरंगजेब से लड़ते रहे। यही बालक समय पाकर राठौरों का

प्रसिद्ध और प्रतिभाशाली अजीतसिंह नामक महाराजा हुआ। बहुत वर्ष मुगलों से लड़कर अजीत ने अपना राज्य फिर पाया था। इसी कारण राठौर लोग महाराणा के साथ मिल कर मुग़लों से लड़े थे। राठौरों का यह युद्ध सन् १७१० ई० तक चलता रहा था।

जब क्षत्रियों ने अकबर को छोड़ दिया, तब अपने पिता से सिवा प्राणदण्ड के और किसी बात की आशा न होने के कारण वह फिर राठौरों की शरण में गया। इस पर दुर्गादास बालक अजीत को अपने भाई के साथ छोड़कर अकबर को लेकर दक्षिण चला गया। अकबर के दक्षिण निकल जाने से औरंगजेब को बड़ा भय हुआ और उसने महाराज राजसिंह से सधि करके दक्षिण जाने का दृढ़ संकल्प कर लिया। अतः वह अपने दल का मुख्यांश लेकर दक्षिण चला गया और इधर छत्रसाल बुँदेला से लड़ने को तहौवरखाँ को आज्ञा देता गया। अकबर औरंगजेब के दक्षिण जाने से फारस भाग गया। तब औरंगजेब ने बीजापुर और गोलकुंडा पर चढ़ाई करके दो साल के युद्ध में सन् १६८८ ई० में उन्हें स्ववश कर लिया। सन् १६८९ में उसने मरहठों पर धावा करके शिवाजी के पुत्र शंभाजी को भी बंदी कर बड़ी निर्दयता से मरवा डाला। शंभाजी के पुत्र साहूजी को भी शाह ने पकड़ लिया था, परंतु उसके एक छोटा बच्चा होने के कारण वध न करके उसे अपने यहाँ के एक महाराष्ट्र ब्राह्मण के सपुर्द कर दिया। साहू जी का भी नाम शिवाजी था, परंतु औरंगजेब ही ने उसका नाम "साहु" यह

कहकर रक्खा कि इस बच्चे के पिता और पितामह चोर थे, परन्तु यह चोर नहीं, साह है। मरहठों ने उस समय भी धैर्य्य नहीं छोडा और शिवाजी के द्वितीय पुत्र राजाराम को राजा बनाकर वे मुगलों से लडने लगे। लडते लडते यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ दौडते हुए राजाराम यथासाध्य स्वतन्त्रता की रक्षा करते रहे। थोडे ही दिनों में राजाराम का भी शरीरांत हो गया, किंतु उनकी स्त्री ताराबाई ने अंत पर्यंत युद्ध करके महाराष्ट्र राज्य का रक्षण किया। तारा बाई शिवाजी के प्रसिद्ध सरदार प्रतापराव गूजर की पुत्री थी। मरहठे मुगलों की बृहत् सेना से सम्मुख नहीं लड सकते थे, परन्तु इधर उधर लगे रहते थे। छोटे छोटे दलों को छिन्न भिन्न करके लूट लेते थे और सेना देखकर भाग जाते थे। इनका किसी खास स्थान पर राज्य नहीं रह गया था, परन्तु जहाँ मुगल नहीं होते थे, वहीं ये लूट मार करते और वहीं के राजा से देख पडते थे। एक बार सन् १६६५ में भीमा नदी ने बढकर शाह के १२००० दल को डुबो दिया। औरंगजेब ने सत्ताईस वर्ष उत्तर की भी कुल आय इसी दक्षिण के युद्ध में व्यय की, परंतु फिर भी कुल मरहठों को वह ध्वस्त न कर सका। एक बार इसकी फौज गडबड दशा में थी। मरहठों ने एकाएक धावा करके उसे पूर्ण पराजय दे दी। औरंगजेब कुछ आगे था और उसके पास बहुत ही कम मनुष्य थे, परन्तु दुर्भाग्यवश उसकी यह दशा मरहठों पर विदित न थी। नहीं तो वे उसे तुरंत बन्दी कर लेते। इन

विपत्तियों से मुगल सेना बहुत ही विकल और हताश हो गई और मरहठों के युद्ध कौशल से मुगल विजय की आशा जाती रही। दिनों दिन उनका बल मद पड़ता जाता था और मरहठों की विजय वैजयंती फहराती जाती थी।

औरंगज़ेब ने देखा कि यदि अब यहाँ और रहूँगा, तो समस्त सेना पराजित हो जायगी और मैं पकड़ लिया जाऊँगा। यह सोच कर वह अहमदनगर चला गया और इन आपदाओं से उसका हृदय ऐसा विदीर्ण होगया कि ८८ वर्ष की अवस्था में वह सन् १७०७ में परलोकवासी हुआ। उसने अपने पुत्रों में बखेड़ा बचाने के विचार से राज्य के तीन भाग कर दिए, परन्तु शाहज़ादों ने यह न माना। दक्षिण में मँझला शाहजादा आजम औरंगजेब के साथ था। उसने अपने बड़े भाई मुअज्ज़म से, जो दिल्ली में था, युद्ध करना निश्चय किया। इस कारण उसने मरहठों में झगड़ा पैदा कर देने के विचार से साहूजी को छोड़ दिया। परंतु मरहठों ने बिना किसी विशेष झगड़े के साहूजी को अपना महाराज मान लिया और राजाराम के पुत्र कोल्हापुर के महाराज हो गए। उनके वंशधर अब भी कोल्हापुर के महाराज हैं। आजम और मुअज्ज़म का सन् १७०७ ई० में जाजमऊ पर घोर युद्ध हुआ जिसमें आजम मारा गया और मुअज्ज़म बहादुरशाह की उपाधि धारण करके बादशाह हुआ।

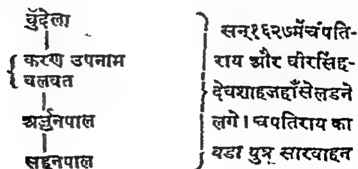
अब औरंगजेब के तीसरे पुत्र कामबख़्श ने बहादुर शाह का सामना किया, परंतु वह हार गया और फिर युद्ध के घावों से

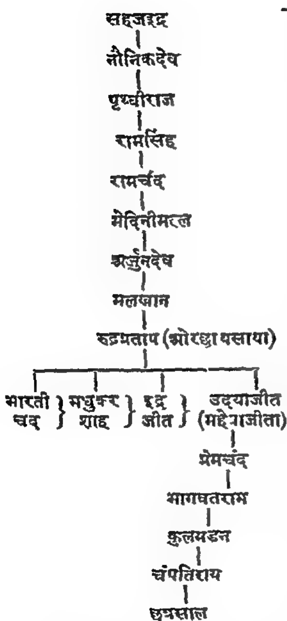
मर भी गया। इस प्रकार जो भारी मुगल दल औरंगजेब दक्षिण जीतने को ले गया था, वह मरहठों तथा शाहजादों के झगड़ों से निःशेष हो गया। मुगलों के इस घरेलू बखेड़े के कारण उनकी शक्ति बहुत मंद पड़ गई थी और अच्छा समय था कि मरहठे अपना बल बढ़ाते, परंतु साहूजी स्वयं लड़कपन से मुगलों के यहाँ रहा था, अतः वह बड़ा आलसी और आराम-पसंद था। यह समझ पड़ने लगा कि महाराष्ट्र शक्ति घरेलू झगड़ों और अकर्मण्यता के कारण नष्ट हो जायगी। परंतु इसी समय (१७१२ ई० में) भाग्यवश साहूजी ने बालाजी विश्वनाथ को अपना पेशवा (प्रधान मंत्री) बनाया। ये महाराज बड़े ही बुद्धिसंपन्न व्यक्ति थे और हर बात में प्रवीण थे। इन्हीं के प्रयत्नों से महाराष्ट्र शक्ति मुगलों के अधःपतन के साथ ही साथ ऐसी बढ़ी कि मरहठों का पूरा साम्राज्य स्थापित हो गया। इन्होंने सन् १७१६ ई० के लगभग दिल्ली पर आक्रमण करके बादशाह फर्रुखसियर को पदच्युत किया और दूसरे बादशाह को गद्दी पर बैठाया। इनके गुणों और कर्मों से मोहित होकर साहूजी ने पेशवा का पद इनके वंश में स्थिर कर दिया। पेशवा बालाजी विश्वनाथ सन् १७२० ई० में स्वर्गवासी हुए और बाजीराव पेशवा नियत हुए।

बुँदेलों का इतिहास

सूर्यवंश में रामचंद्र और उनके पुत्र कुश के वंश में काशी और कतित के गहिरवार राजा हुए। इस वंश का पूर्ण वर्णन बहुत से पूर्व पुरुषों के नामों समेत लाल कवि ने अपने छत्रप्रकाश नामक ग्रंथ में किया है। इसी वंश में महाराज पचमसिंह उत्पन्न हुए। उनके चारों भाइयों ने उनका राज्य छीन लिया और वे विंध्याचल पर जाकर विंध्यवासिनी देवी की उपासना करने लगे। एक दिन वे अपना ही बलिदान करने को प्रस्तुत हुए। कहा जाता है कि ज्यों ही उन्होंने अपने एक शरीर में घाव लगाया त्यों ही देवीजी ने प्रकट होकर उनका हाथ पकड लिया और उन्हें राज्य मिलने का वरदान दिया। उसी समय दैवी कृपा से उनके सिर से जो घाव द्वारा रक्तबिंदु गिरा था, उससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बुँदेला पडा। अस्तु जो कुछ हो।

बुँदेला का वंश इस प्रकार चला—





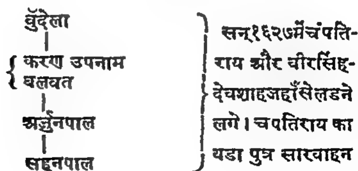
मुगलों द्वारा मारा गया। इस बात का चंपतिराय को बड़ा दुःख हुआ। इसी समय चंपतिरायकी रानी को स्वप्न हुआ कि मानो सारवाहन कहता है कि मैं फिर तेरी सौति की कोख से पैदा होकर मुगलों से अपना बैर लूँगा। कुछ दिनों में उनके यहाँ छत्रसाल १६५० ई० में उत्पन्न हुए।

शाहजहाँ ने चंपतिराय पर महाबत खाँ, खानजहाँ और अब्दुल्ला के आधिपत्य में तीन सेनाएँ भेजीं। उस समय चंपतिराय पहाड़ों में छिपे रहे, परंतु उनके कुछ हटते ही फिर

बुँदेलों का इतिहास

सूर्यवंश में रामचद्र और उनके पुत्र कुश के वंश में काशी और कंतित के गहिरवार राजा हुए। इस वश का पूर्ण वर्णन बहुत से पूर्व पुरुषों के नामों समेत लाल कवि ने अपने छत्रप्रकाश नामक ग्रथ में किया है। इसी वंश में महाराज पचमसिंह उत्पन्न हुए। उनके चारों भाइयों ने उनका राज्य छीन लिया और वे विंध्याचल पर जाकर विंध्यवासिनी देवी की उपासना करने लगे। एक दिन वे अपना ही बलिदान करने को प्रस्तुत हुए। कहा जाता है कि ज्यों ही उन्होंने अपने एक शरीर में घाव लगाया त्यों ही देवीजी ने प्रकट होकर उनका हाथ पकड़ लिया और उन्हें राज्य मिलने का वरदान दिया। उसी समय देवी कृपा से उनके सिर से जो घाव द्वारा रक्तबिंदु गिरा था, उससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बुँदेला पड़ा। अस्तु जो कुछ हो।

बुँदेला का वंश इस प्रकार चला—



कि अगर घर में बैठे रहोगे, तो मनसब घट जायगा और नुकसान उठाओगे। इस बात पर चंपतिराय को बड़ा क्रोध चढ़ा और ये महाराज मुगलों से लड़ने लगे। मुगलों के आक्रमण से चंपति को सब राजपाट छोड़कर भागना पड़ा। ये अपनी बहिन के यहाँ बीमारी की दशा में गए, परंतु जब इन्हें ज्ञात हुआ कि इनकी बहिन के नौकर इन्हें पकड़कर मुगलों के यहाँ भेजा चाहते हैं, तब सन् १६६४ ई० में चंपतिराय ने आत्महत्या कर ली।

इसी समय से छत्रसाल को अपने पिता का बदला लेने और अपना खोया हुआ राज्य फिर प्राप्त करने की प्रबल इच्छा हुई। पहले इन्होंने जयसिंह के नीचे मुगलों की सेवा कर ली और देवगढ़ के घेरा करने में ये बड़ी बहादुरी से घायल हुए। पर अच्छा सम्मान न होने से इन्होंने सेवा छोड़कर शिवाजी से मिलना निश्चय किया, क्योंकि इनकी समझ में मुगलों से

"ऐंड एक शिवराज निबाही। करै आपने चित की चाही॥
आठ पातसाही झकझोरे। सूबन बाँधि डंड लै छोरे"॥
(लालकृत छत्रप्रकाश)

इन्होंने शिवाजी से मिलकर अपना सब हाल कहा तो,

"सिवा किसा सुनि कै कही तुम छत्री सिरताज।
"जीति आपनी भूमि को करौ देस को राज॥
"करौ देस को राज छतारे। हम तुमतें कबहूँ नहिं न्यारे॥
"तुरकन की परतीति न मानौ। तुम केहरि तुरकन गज जानौ॥

निकलकर उनकी छोटी छोटी टुकड़ियों को उन्होंने हराया। अंत में उन सब को एक साथ ही बड़े विकराल युद्ध में ध्वस्त करके आपने उनकी सेना को खूब ही काटा। शाहजहाँ ने फिर एक सेना भेजी। तब चंपतिराय ने परास्त होकर बादशाह की सेवा स्वीकार कर ली और तीन लाख की मालगुजारी पर कौंच का परगना पाया। एक बार चंपतिराय दारा के साथ काबुल में लड़ने गए। वहाँ उन्होंने बड़ी वीरता दिखाई, परंतु दारा के चित्त में हर्ष के स्थान पर चंपति से ईर्ष्या उत्पन्न हुई, यद्यपि चंपति ही के कारण उन्हें वह विजय प्राप्त हुई थी। तब दारा ने ओड़छे के राजा पहाड़-सिंह को नौ लाख की मालगुजारी पर कौंच का परगना दे दिया। इस कारण चंपति और दारा में द्रोह हो गया। इस के थोड़े ही दिन पीछे दारा और औरंगजेब में राज्यार्थ सन् १६५८ में धौलपुर में घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में चंपतिराय ने औरंगजेब का साथ दिया और उसकी सेना के हरौल में रह कर ये लड़े। दारा के हरौल में बूँदीनरेश हाड़ा छत्रसाल थे। इसमें दारा की पराजय हुई और छत्रसाल हाड़ा घोर युद्ध करके मरे। इसी युद्ध का वर्णन भूषण ने छत्रसाल दशक के प्रथम दो छंदों में किया है। इस युद्ध के फलस्वरूप औरंगजेब ने चंपतिराय को बारह हजारी का मनसब और एरछ, शाहजादपुर, कौंच और कनार जागीर में दिए। तब चंपति अपने घर चले आए। कुछ दिनों बाद औरंगजेब ने कहला भेजा

कि अगर घर में बैठे रहोगे, तो मनसब घट जायगा और नुकसान उठाओगे। इस बात पर चंपतिराय को बड़ा क्रोध चढ़ा और ये महाराज मुगलों से लड़ने लगे। मुगलों के आक्रमण से चंपति को सब राजपाट छोड़कर भागना पड़ा। ये अपनी बहिन के यहाँ बीमारी की दशा में गए, परंतु जब इन्हें ज्ञात हुआ कि इनकी बहिन के नौकर इन्हें पकड़कर मुगलों के यहाँ भेजा चाहते हैं, तब सन् १६६४ ई० में चंपतिराय ने आत्म-हत्या कर ली।

इसी समय से छत्रसाल को अपने पिता का बदला लेने और अपना खोया हुआ राज्य फिर प्राप्त करने की प्रबल इच्छा हुई। पहले इन्होंने जयसिंह के नीचे मुगलों की सेवा कर ली और देवगढ़ के घेरा करने में ये बड़ी बहादुरी से घायल हुए। पर अच्छा सम्मान न होने से इन्होंने सेवा छोड़कर शिवाजी से मिलना निश्चय किया, क्योंकि इनकी समझ में मुगलों से
"ऐंड एक शिवराज निबाही। करै आपने चित की चाही॥
आठ पातसाही झकझोरै। सूबन बाँधि दंड लै छोरै"॥
(लालकृत छत्रप्रकाश)

इन्होंने शिवाजी से मिलकर अपना सब हाल कहा तो,
"सिवा किसा सुनि कै कही तुम छत्री सिरताज।
"जीति आपनी भूमि को करौ देस को राज॥
"करौ देस को राज छतारे। हम तुमतें कबहूँ नहिं न्यारे॥
"तुरकन,की परतीति न मानौ। तुम केहरि तुरकन गज जानौ॥

"हम तुरकन पर कसी कृपानी । मारि करैंगे कीचक घानी ॥
"तुमहूँ जाय देस दल जोरौ । तुरक मारि तरवारिन तोरौ ॥
"छत्रिन की यह वृत्ति सदाई । नित्य तेग की खायँ कमाई ॥
"गाय वेद विप्रन प्रतिपालै । घाव पैंडधारिन पर घालैं ॥
"तुम हौ महावीर मरदाने । करिहौ भूमि भोग हम जाने ॥
"जो इतही तुम को हम राखैं । तौ सब सुजस हमारो भाखैं ॥
"ताते जाय मुगल दल मारो । सुनियेश्रवननि सुजस तिहारो ॥
"यह कहि तेग मँगाय बँधाई । वीर बदन दूनी दुति आई" ॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

शिवाजी के आगरे से लौटने से कुछ ही दिन पीछे सन् १६६७ में छत्रसाल उनसे मिले थे। शिवाजी से इस प्रकार प्रोत्साहित होकर छत्रसाल अपने देश में आए और सेना एकत्र करके मुगलों से लड़ने लगे।

सन् १६७१ ई० के लगभग इन्होंने बहुत सी लड़ाइयाँ जीत कर गढ़ाकोटा का किला ले लिया और क्रमशः अपना प्रभुत्व प्रायः समस्त बुंदेलखंड पर जमा लिया। जब इन्होंने दक्षिण से जाता हुआ सौ गाड़ियों भर शाही सामान लूट लिया। तब औरंगजेब ने बड़ा क्रोध करके तहौवरखाँ को एक बड़ी सेना लेकर भेजा, पर सिराघा के युद्ध में छत्रसाल ने उसकी सारी सेना काट डाली। उसने दूसरी सेना लेकर आक्रमण किया और सन् १६८० में वह फिर पराजित हुआ। तदनन्तर छत्रसाल ने अनवरखाँ, सदरुद्दीन और हमीदखाँ को परास्त

किया और बुंदेलखंड के उन राजाओं को भी, जो इनका साथ नहीं देते थे, खूब सताया। सन् १६६० में औरंगजेब ने एक बड़ी सेना के साथ अब्दुस्समद को भेजा। परंतु छत्रशाल ने बेतवा नदी के किनारे उसे भी पराजित किया। तब बहलोलखाँ गवर्नर और जगतसिंह ने छत्रशाल पर धावा किया, परंतु जगतसिंह मारा गया और बहलोल को भागना पड़ा। बहलोल ने मारे लज्जा के आत्मघात कर लिया। तदनंतर छत्रशाल ने मुरादखाँ को हराया और दलेलखाँ को भी पराजित किया। पीछे छत्रशाल ने मटौंध को घेर कर जीत लिया। फिर सैयद अफगन के आधिपत्य में एक महती सेना आई। इस सेना से एक बार छत्रशाल हार गया, परंतु पुनः सेना एकत्र करके बुंदेलराज ने इसे भी पराजित किया। तब शाहकुली इससे लड़ने को भेजा गया, परंतु वह भी हार गया।

अब छत्रशाल यमुना और चंबल के दक्षिण ओर के सारे देश का स्वामी बन गया *।

सन् १७०७ ई० में बहादुर शाह ने इन्हें बुलाकर उस इलाके का स्वामी होना स्वीकार किया। तब इन्होंने बादशाह को लोहगढ़ जीत दिया।

सन् १७२२ ई० में फर्रुखाबाद का गवर्नर मुहम्मदखाँ बंगश छत्रशाल से लड़कर सारा देश उजाड़ने लगा। उसने चित्रकूट के पास से युद्धारम्भ किया। महाराज छत्रशाल रीवाँ का बहुत

* इसकी वार्षिक निकासी प्राय डेढ़ दो करोड़ मुद्रा थी।

"हम तुरकन पर कसी कृपानी । मारि करेंगे कीचक घानी ॥
"तुमहूँ जाय देस दल जोरौ । तुरुक मारि तरवारिन तोरौ ॥
"छत्रिन की यह वृत्ति सदाई । नित्य तेग की खायँ कमाई ॥
"गाय वेद विप्रन प्रतिपालै । घाव पेंडधारिन पर घालैं ॥
"तुम हौ महावीर मरदाने । करिहौ भूमि भोग हम जाने ॥
"जो इतही तुम को हम राखैं । तौ सब सुजस हमारो भाखैं ॥
"ताते जाय मुगल दल मारो । सुनिये श्रवननि सुजस तिहारो ॥
"यह कहि तेग मँगाय बँधाई । बीर बदन दूनी दुति आई" ॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

शिवाजी के आगरे से लौटने से कुछ ही दिन पीछे सन् १६६७ में छत्रसाल उनसे मिले थे। शिवाजी से इस प्रकार प्रोत्साहित होकर छत्रसाल अपने देश में आए और सेना एकत्र करके मुगलों से लडने लगे।

सन् १६७१ ई० के लगभग इन्होंने बहुत सी लडाइयाँ जीत कर गढाकोटा का किला ले लिया और क्रमशः अपना प्रभुत्व प्राय समस्त बुंदेलखंड पर जमा लिया। जब इन्होंने दक्षिण से जाता हुआ सो गाडियों भर शाही सामान लूट लिया। तब औरंगजेब ने बडा क्रोध करके तहौवरखाँ को एक बडी सेना लेकर भेजा, पर सिरोंया के युद्ध में छत्रसाल ने उसकी सारी सेना काट डाली। उसने दूसरी सेना लेकर आक्रमण किया और सन् १६८० में वह फिर पराजित हुआ। तदनन्तर छत्रसाल ने अनवरखाँ, सदरुद्दीन और हमीदखाँ को परास्त

महाराज अवधूतसिंह को हरा कर रीवाँ राज्य पर अधिकार कर लिया। यह अधिकार सन् १७४० तक रह कर समाप्त हो गया और महाराज अवधूतसिंह का राज्य रीवाँ में फिर से दृढ़ हुआ।

शिवराज-भूषण

इस ग्रंथ का नाम शिवराज-भूषण बड़ा ही समीचीन है। इसमें शिवराज का यश वर्णित है, अत यह उनको भूषित करता है। यह भूषणों (अलकारों) का ग्रंथ है और इसे भूषणजी ने बनाया है। ये सभी बातें "शिवराज भूषण" पद से पूर्णतया विदित हो जाती हैं। सब से पहले यह प्रश्न उठता है कि इसका ठीक निर्माण काल क्या है? इतना तो निश्चय है कि यह सन् १६७३ ईसवी में समाप्त हुआ, पर इसके प्रारंभ होने के विषय में निम्नलिखित चार बातें कही जा सकती हैं—

(१) भूषणजी इस ग्रथ के छदों को स्फुट रूप से समय समय पर, विना किसी अलकारादि के विचार से, बनाते गए, और अत में इतने छदों को क्रमबद्ध कर के और कुछ नए छद जोड कर उन्होंने इन्हें ग्रथ रूप में कर दिया।

(२) उन्होंने इसके छद अलकारों के विचार से ही समय समय पर बनाए और फिर उन्हें ग्रथ रूप में परिणत कर दिया।

(३) अपने आने के समय से ही इस ग्रथ को इसी रूप में बनाना कवि ने प्रारम्भ कर दिया और सन् १६७३ ई० में इसे समाप्त किया।

राज्य छीन चुके थे। इसी से रीवाँनरेश महाराज अवधूत-सिंह ने भी इस समय ,बंगश का साथ दिया। इस कुदशा में छत्रशाल,ने (जो अब ७५-७६ वर्ष के बुड्ढे थे) पेशवा बाजीराव को एक पत्र में सब वृत्तांत लिख कर अंत में लिखा—

"जो गति ग्राह गजेंद्र की सो गति जानहु आज।
बाजी जात बुँदेल की राखो बाजी लाज" ॥

इस प्रकार बुँदेलों के बाजी हारने का भय सुन कर पेशवा बाजीराव ने एक महती सेना भेजी और उसकी सहायता से छत्रशाल ने सन् १७२६ में बंगश को परास्त किया। बंगश इस युद्ध में हारा था, परंतु मारा नहीं गया था।

छत्रशाल ने इस उपकार के बदले बाजीराव को अपना एक तिहाई राज्य दे दिया और शेष अपने दो मुख्य लड़कों में बाँट दिया। इनके प्राय ५२ लड़कों में केवल हृदयशाह, जगत-राज, पद्मसिंह और भारतीचन्द औरस पुत्र थे और शेष चेरियों से उत्पन्न हुए थे। हृदयशाह को पन्ना का राज्य मिला और जगतराज को जैतपुर का। छत्रशाल सन् १७३२ में स्वर्ग-वासी हुए और अब तक मऊ (छत्रपुर) में उनका विशाल समा-धिस्थान बना हुआ है। बुंदेलखंड में अब २२ देशी रियासत हैं जिनमें निम्न लिखित आठ रियासतों के राजा छत्रशाल वंशोद्भव हैं—बिजनी, पन्ना, लोगासी, सरीला, अजैगढ़, चरखारी, बिजा-वर और जसो। सन् १७३३ के लगभग महाराज हृदयशाह ने

इस चक्र के देखने से विदित होता है कि शिवराज-भूषण में भूषणजी ने सन् १६५७ के ३ छन्द, १६५९ के १०, सन् १६६२ के ५, सन् १६६३ के ८, सन् १६६५ के २, सन् १६६६ के १२, सन् १६७० के १०, सन् १६७२ के १५ छंद और सन् १६७३ के ११ कहे हैं। सन् १६४८, १६५५, १६५८, १६६६, १६६९ तथा १६७१ के भी एक एक छन्द हैं तथा १६२७ के दो हैं।

अब हम शिवराज-भूषण के समय संबधी उपर्युक्त चारों प्रश्नों पर विचार करते हैं।

(१) यह अनुमान यथार्थ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि भूषण के अधिकांश उदाहरणों में एक एक छंद में वही अलंकार कई कई बार आया है और सिवाय उसके दूसरा अलंकार स्पष्ट रूप से नहीं आने पाया है। फिर प्रत्येक अलंकार अपने उदाहरण में बड़े ही स्पष्ट रूप से निकलता है और किसी के निकालने में क्लिष्ट कल्पना नहीं करनी पड़ती। अन्य अधिकांश आचार्यों के उदाहरणों में ऐसी स्पष्टता कम पाई जाती है। अतः कोई यह नहीं कह सकता कि भूषणजी के उदाहरण अलंकारों के लिये नहीं बनाए गए थे और उनमें अलंकार आप ही आप निकल आए। वे स्वयं कहते हैं—

"शिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषण के चित्त।
"भाँति भाँति भूषनन सों भूषित करों कवित्त" ॥

(२) यह अनुमान कुछ कुछ यथार्थ जान पड़ता है। इस के कारण पीछे लिखे जायँगे।

(४) सन् १६७३ ई० ही में अथवा उसके कुछ ही पहले यह ग्रंथ बनना प्रारम्भ हुआ और कुछ ही महीनों में समाप्त हो गया।

इन प्रश्नों के उत्तर देने में निम्नलिखित चक्र से बहुत कुछ सहायता मिल सकती है—

किस सन् की घटना	छन्द नम्बर
१६२७	११, १२
१६४८	२१३
१६५५	२०६
१६५७	७७, १०३, ३०७
१६५८	२१७
१६५९	४२, ६३, ९६, ९९, १०७, २०७, २३९, २५२, ३०५, ३३७
१६६१	२०६
१६६२	१४, २४, २४२, २६१, २८८
१६६३	७७, ९६, १०३, १८९, ३२३, ३३७, ३३८, ३६४
१६६५	२१२, २१३
१६६६	३४, ३५, ३८, ७९, १४८, १८६, १९८, २०४, २०९, २६५, ३०९, ३१०
१६६९	२५८
१६७०	१००, १५५, २००, २१३, २३९, २५९, २८५, ३३४, ३५४, ३५७
१६७१	६३
१६७२	९७, १०३, १०७, १५५, २२५, २२६, २३९, २७५, २९२, ३२०, ३३१, ३३८, ३५५, ३५६, ३५७
१६७३	९६, १६१, २०६, २५४, ३१२, ३२८, ३३७, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९

अधिक है। इससे विदित होता है कि इस ग्रंथ के आदि का भाग सन् १६७० के पहले लिखा गया और अंत का सन् १६७२ और १६७३ में बना, एवं इसका मध्य भाग सन् १६७० और १६७१ के लगभग बनाया गया।

इन सब विचारों से विदित होता है कि भूषणजी ने यह ग्रंथ सन् १६६७ ई० के लगभग प्रारम्भ किया था और इसी क्रम से जो हम आज देखते हैं यह ग्रंथ बना, परन्तु कुछ कुछ अलंकारों के उदाहरण उस समय नहीं बनाए गए थे। वे पीछे लिखे गए। इसी कारण कहीं कहीं आदि में भी सन् १६७० के पीछे तक की घटनाएँ आ गई हैं। कहीं कहीं प्रथम उदाहरण में उस समय की घटनाओं का वर्णन है, और फिर अंत में द्वितीय उदाहरण पीछे की घटनाओं से भरा हुआ रख दिया गया है। कहीं कहीं सम्भव है कि द्वितीय उदाहरण भूषण जी को ऐसा अच्छा लगा हो कि उन्होंने पहला उदाहरण ग्रंथ से निकाल दिया हो अथवा पहले उदाहरण के पूर्व रख दिया हो। पाठकों को उपर्युक्त चक्र देखने से विदित होगा कि अधिकतर ज्यों ज्यों ग्रंथ बढ़ता गया है, उसी प्रकार सन् भी बढ़ते गए हैं। इन सब विचारों से इस कुल ग्रंथ का एक ही डेढ़ साल में बनना मानना ठीक नहीं जँचता। फिर यदि भूषणजी ग्रंथ इतने शीघ्र बनाते होते कि डेढ़ साल में इतना बड़ा ग्रंथ बना डालते, तो अपने शेष कवित्व काल के ७५ सालों में न जाने कितना बनाते।

(३) यह ग्रंथ इसी रूप में सक्रम नहीं बनाया गया है, क्योंकि यदि सन १६६७ ई० से इसे भूषणजी लिखने लगते तो छंद नं० ८६ व ८७ में ही सन् १६७३ का वर्णन कैसे आ जाता? क्योंकि यदि यह मानिए कि सन् १६६७ से सन् १६७३ तक यह ग्रथ सक्रम बनता रहा, तो यह भी मानना पडेगा कि सन् १६७३ में केवल अंत के प्रायः पचास छंद बने होंगे। इसी प्रकार और सब की भी दशा है। अतः यह ज्ञात होता है कि इस ग्रंथ के छंद सिलसिलेवार नहीं बनाए गए हैं, परंतु कुछ अंश में यह विचार यथार्थ भी है, जैसा कि आगे दिखाया जायगा।

(४) यह अनुमान भी ठीक नही जँचता। भूषण ने जिस समय जो ग्रंथ या छंद बनाया है, उसी समय की घटनाओं का वर्णन उसमें बाहुल्य से है और यही बात प्राकृतिक भी है। भूषणजी ने शिवराजभूषण के १२ छंदों में शिवाजी के आगरा-गमन का वर्णन किया है और इनमें से बहुतेरे छंद ग्रथ के प्रारंभ में पाए जाते हैं। ग्रंथ के अंत में सन् १६७२ और १६७३ के वर्णन बहुतायत से हैं। यदि कहिए कि आगरा गमन को भूषणजी बड़ी भारी बात समझते थे और इसी लिये उस का वर्णन अधिक है, तो इसका उत्तर यह है कि शिवाबावनी में इस घटना के दो ही छंद हैं। फिर बहलोल का युद्ध ऐसा बडा न था, परंतु उसके कई छंद भूषण जी ने लिखे हैं। सन् १६७३ की घटनाएँ बडी भारी न थीं, परन्तु उनका भी वर्णन

अधिक है। इससे विदित होता है कि इस ग्रंथ के आदि का भाग सन् १६७० के पहले लिखा गया और अंत का सन् १६७२ और १६७३ में बना, एवं इसका मध्य भाग सन् १६७० और १६७१ के लगभग बनाया गया।

इन सब विचारों से विदित होता है कि भूषणजी ने यह ग्रंथ सन् १६६७ ई० के लगभग प्रारंभ किया था और इसी क्रम से जो हम आज देखते हैं यह ग्रंथ बना, परंतु कुछ कुछ अलंकारों के उदाहरण उस समय नहीं बनाए गए थे। वे पीछे लिखे गए। इसी कारण कहीं कहीं आदि में भी सन् १६७० के पीछे तक की घटनाएँ आ गई हैं। कहीं कहीं प्रथम उदाहरण में उस समय की घटनाओं का वर्णन है, और फिर अंत में द्वितीय उदाहरण पीछे की घटनाओं से भरा हुआ रख दिया गया है। कहीं कहीं संभव है कि द्वितीय उदाहरण भूषण जी को ऐसा अच्छा लगा हो कि उन्होंने पहला उदाहरण ग्रंथ से निकाल दिया हो अथवा पहले उदाहरण के पूर्व रख दिया हो। पाठकों को उपर्युक्त चक्र देखने से विदित होगा कि अधिकतर ज्यों ज्यों ग्रंथ बढ़ता गया है, उसी प्रकार सन् भी बढ़ते गए हैं। इन सब विचारों से इस कुल ग्रंथ का एक ही डेढ़ साल में बनना मानना ठीक नहीं जँचता। फिर यदि भूषणजी ग्रंथ इतने शीघ्र बनाते होते कि डेढ़ साल में इतना बड़ा ग्रंथ बना डालते, तो अपने शेष कवित्व काल के ७५ सालों में न जाने कितना बनाते।

छंद नंबर २०७ में करनाटक की चढाई के वर्णन का भ्रम हो सकता है, परंतु होना न चाहिए, क्योंकि वहाँ शब्द देश जीते नहीं लिखा है, वरन् बिँचे है, जिससे आफत या गड़बड का प्रयोजन है। सन् १६५६ में आपने परनालो लिया और १६६१—६२ में करनाटक में घोर विद्रोह हुआ। बिँचे का यही अभिप्राय है। पूर्वी करनाटक शिवा जी ने सन् १६७६–७८ में जीता था, किंतु पच्छिमी करनाटक में १६७३ के पूर्व लूट खसोट की थी। उसका भी इशारा इसमें समझा जा सकता है।

मुद्रित प्रतियों में प्राय. तीन सौ छंद पाए जाते हैं, पर हमने शिवराज-भूषण की इस प्रति में ३८२ छंद दिए हैं। जितने छंद इस प्रति में बढे हें, उनका मुख्यांश कवि गोविंद गिल्ला-भाईजी की हस्तलिखित प्रति से लिया गया है। गिल्लाभाई जी की प्रति में कई ऐसे अलकारों के लक्षण और उदाहरण हैं जो भूषणजी की दी हुई अलकार-नामावली (छंद न० ३७१-३७६) के बाहर हैं। उन अलंकारों के लक्षणों को हमने भूषणकृत नहीं समझा, परंतु उदाहरणों को "शिवाबावनी" एव "स्फुट" में रख दिया है। जान पड़ता है कि भूषण के इन कवित्तों में अलकार निकलते देख लोगों ने इन्हें "शिवराजभूषण" में उन अलंकारों के लक्षण अपनी ओर से जोडकर रख दिए। इन नए कवित्तों में से दो चार के विषय में हमें भूषण कृत, होने में भी सदेह है, और सभव है कि उन्हें किसी ने अपनी ओर से बना

कर लिख दिया हो, पर शेष छंद अवश्य ही भूपणजी के प्रतीत होते हैं।

भूपणजी ने युद्ध-प्रधान ग्रंथ होने के कारण इसमें श्री भगवतीजी की एक बड़े ह प्रभावोत्पादक छंद द्वारा स्तुति की है। इस ग्रंथ में कवि ने अधिकांश अलकारों के लक्षण और उदाहरण दिए हैं और उदाहरणों में विशेषता यह रक्खी है कि प्रत्येक में शिवाजी का यश वर्णित है। इनके पहले किसी कवि ने अपने नायक के ही यशवर्णन में कोई ऐसा ग्रंथ नहीं रचा। ग्रंथ के आरभ में रायगढ का बड़ा ही मनोहर वर्णन है, और अलकार का बंधन रखकर भी भूपणजी शिवराज के यशवर्णन और तत्कालीन मनुष्यों के वास्तविक भावों के चित्र खींचने में पूर्णतया कृतकार्य हुए हैं। अलकारों के उदाहरण भी इनके स्पष्ट हैं और एक ही छंद में कभी कभी दो चार बार तक उसी अलंकार के उदाहरण आते हैं। भूपणजी प्राय. सभी अलकार इस ग्रंथ में लाए हैं, केवल निम्न लिखित छूट गए हैं—

धर्म लुप्ता से इतर लुप्तोपमा, तद्रूप रूपक, संबंधातिशयोक्ति, पदावृत्ति एव अर्थावृत्ति दीपक, असदर्थ एव सदर्थ निदर्शना, समव्यतिरेक, न्यूनव्यतिरेक, प्रस्तुतांकुर, द्वितीय पर्य्यायोक्ति, निषेधाभास, व्यक्ताच्छेप, तृतीय विपम, द्वितीय एव तृतीय सम, प्रथम अधिक, अल्प, द्वितीय तथा तृतीय विशेष, द्वितीय व्याघात, कारक दीपक, द्वितीय अर्थांतरन्यास, विकस्वर, ललित,

प्रथम एवं तृतीय प्रहर्षण, मुद्रा, रत्नावली, गूढोत्तर, सूक्ष्म, गूढोक्ति, विवृतोक्ति युक्ति, और प्रतिषेध।

अलंकारों की इस नामावली में बहुत से ऐसे हैं जिनमें मुख्य अलंकार का वर्णन हुआ है, परंतु उसके किसी विभाग का नहीं हुआ। ऐसा ग्रंथ के संक्षिप्त बनने के कारण किया गया है। कुछ अलंकार ऐसे हैं जिनके न वर्णित होने का कोई कारण नहीं है। यही कहा जा सकता है कि वे ऐसे विदित अथवा आवश्यक नहीं हैं जिनके वर्णन करने को कवि बाध्य हो।

तद्रूप रूपक का भी वर्णन भूषणजी ने नहीं किया है। बिहारी ने भी सैकड़ों रूपक लिखने पर एक भी तद्रूप रूपक नहीं लिखा। वास्तव में तद्रूप रूपक एक निषिद्ध प्रकार का रूपक है। रूपक का मुख्य प्रयोजन है उसी रूप का होना। फिर कोई वस्तु किसी द्वितीय की पूर्ण प्रकारेण अनुरूप तभी हो सकती है जब उन दोनों वस्तुओं में कुछ भी भेद न हो। अत मुख्यश अभेद रूपक ही शुद्ध रूपक है। जब दो पदार्थों में विभिन्नता विद्यमान है, जैसा कि तद्रूप रूपक में होता है, तब रूपक श्रेष्ठ कैसे हो सकता है?

इन महाशय ने दो अलंकारों के उदाहरण अन्य प्राय. सभी आचार्यों से उत्तर दिए हैं—

(क) परिणाम। सर्वसम्मत का मत है कि जहाँ अप्रकृत प्रकृत का रंजन मात्र करे वहाँ रूपक, और जहाँ अप्रकृत प्रकृत

का उपयोगी हो, वहाँ परिणाम अलंकार है, यथा—

मुख शशि देत अनंद रूपक

मुख शशि हरत अँध्यार परिणाम

दूलह आदि ने इसके उदाहरण में यही कह मारा है कि "कपि नाध्यो सिंधु राम-पद पंकज प्रसाद तें" परंतु वास्तव में यह रूपक है, क्योंकि पंकज यहाँ पद का रंजन मात्र करता है। किंतु भूषण कवि ने इसका अत्यंत शुद्ध उदाहरण दिया है। "भूलन तोरन तेज तरनि सों वैरिन को कियो पानिप हानो"। यहाँ तरणि तेज का रंजन मात्र नहीं करता, वरन् उसका उपयोगी भी है।

(ख) दीपक। इसमें भाषा के आचार्य्य उपमेय उपमान का संबंध जोड़ते हैं। यह उन आचार्य्यों की भूल प्रतीत होती है। काव्यप्रकाश में यह लक्षण दिया है—"सकृद्वृत्तिस्तु धर्मस्य प्रकृताप्रकृतात्मनाम्" अर्थात् प्रकृत और अप्रकृतों के धर्म के एक बार वर्तने में दीपक अलंकार है।

अहि फन मनि सिंह सुसटा कुल कलत्र कुच जान।
कृपन जनन को धन कहीं को परसे छुत प्रान॥

मुरारिदान।

भूषण ने भी उदाहरण में उपमेय उपमान का संबंध नहीं रक्खा है, यद्यपि न आने लक्षण में वह कैसे वर्तमान है। यथा "कामिनि कंत सों, जामिनि चंद सों, दामिनि पावस मेघ

घटा सों जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिंदुवान खुमान सिवा सों ॥ (शि० भू० छ० १३०)

दीपक में उपमेय उपमान का संबंध लगाने के कारण अन्य कवियों ने आवृत्ति दीपक तथा माला दीपक के उदाहरण देने में अपने लक्षणानुसार भूल की है, परंतु भूषण के इन अलंकारों के उदाहरण भी शुद्ध हैं।

भूषण महाराज के विकल्प एवं सामान्य के उदाहरण अशुद्ध हो गए हैं।

(क) विकल्प में संदेह ही संदेह रहना चाहिए, निश्चय न होना चाहिए। (शि० भू० छ० २४६)

मोरंग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरै कि कवित्त बनाये।

. . . . .

भूपन गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह शिवाहि रिझाये॥

इस छंद में भूषण ने अंत में निश्चय कर दिया, सो अलंकार बन बना कर बिगड़ गया। परंतु यहाँ इनका दूषण क्षम्य है, क्योंकि इनका अलंकार बन चुका था, तथापि इन्होंने स्वयं उसे नायक के कारण बिगाड़ दिया।

(ख) सामान्य = सादृश्य के कारण जहाँ भिन्न वस्तुओं में भेद न जान पड़े। शि० भू० छंद नं० २०५ देखिए। इसमें तोपों की चमक का चपला की भाँति चमकने से भेद खुल गया और अलंकार बिगड़ गया।

भूषणजी ने छंद नं० २६४ व २६७ में अर्थांतरन्यास और

प्रौढोक्ति के लक्षण और कवियों के विरुद्ध लिखे हैं। आपने छंद नं० ३७८ में लिखा है कि मैंने अपने लक्षण अलंकार ग्रंथ देखकर और "निज मतो" से बनाए हैं, सो यहाँ उनका मत समझना चाहिए। शिव० भूषण नं० ६०, १४६ और २५५ में भी ऐसे ही लक्षण हैं।

इस महाकवि ने लुप्तोपमा, उत्प्रेक्षा, अचलातिशयोक्ति, असंगति, विरोधाभास, विरोध और पूर्वरूप आदि के बड़े ही उत्कृष्ट उदाहरण दिए हैं।

शिवराज भूषण में कवि ने अलंकारों ही पर पूर्ण ध्यान दिया है, अत युद्धप्रधान ग्रंथ होने पर भी पूर्ण वीररस के बहुत अच्छे उदाहरण इस ग्रंथ में नहीं मिलते। हाँ, भयानक तथा रौद्र रसों के उत्तम उदाहरण भी यत्र तत्र देख पड़ते हैं, मुख्यश भयानक रस के, जिस (रस) के वर्णन में भूषण महाराज बड़े पटु हैं। इन्होंने शिवाजी के दल का वर्णन इतना नहीं किया है जितना कि शत्रुओं पर उसकी धाक का। इसी हेतु इनके ग्रंथ में भयानक रस का बहुत अधिक समावेश है। रसों के उदाहरण शिवाबावनी में अधिक उत्कृष्ट देख पड़ते हैं। भूषणजी अमृतध्वनि खूब अच्छी बना सकते थे। अन्य कवियों की अमृतध्वनियों में निरर्थक शब्द बहुत आ जाते हैं, परंतु भूषणजी के छंदों में ऐसा नहीं है।

सब बातों पर विचार करने से विदित होता है कि "शिवराज भूषण" एक बड़ा ही प्रशंसनीय ग्रंथ है। इसमें प्राय.

घटा सों   जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिंदुवान खुमान सिवा सों ॥ (शि० भू० छ० १३०)

दीपक में उपमेय उपमान का संबंध लगाने के कारण अन्य कवियों ने आवृत्ति दीपक तथा माला दीपक के उदाहरण देने में अपने लक्षणानुसार भूल की है, परंतु भूषण के इन अलंकारों के उदाहरण भी शुद्ध हैं।

भूषण महाराज के विकल्प एवं सामान्य के उदाहरण अशुद्ध हो गए हैं।

(क) विकल्प में संदेह ही संदेह रहना चाहिए, निश्चय न होना चाहिए।   (शि० भू० छ० २४६)
मोरंग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरै कि कवित्त बनाये।

.   .   .   .   .

भूषन गाय फिरौ महि में बनिहै चित चाह सिवाहि रिझाये ॥

इस छंद में भूषण ने अंत में निश्चय कर दिया, सो अलंकार बन बना कर बिगड़ गया। परंतु यहाँ इनका दूषण क्षम्य है, क्योंकि इनका अलंकार बन चुका था, तथापि इन्होंने स्वयं उसे नायक के कारण बिगाड़ दिया।

(ख) सामान्य = सादृश्य के कारण जहाँ भिन्न वस्तुओं में भेद न जान पड़े। शि० भू० छंद नं० ३०५ देखिए। इसमें तोपों की चमक का चपला की भाँति चमकने से भेद खुल गया और अलंकार बिगड़ गया।

भूषणजी ने छंद नं० २६४ व २६७ में अर्थांतरन्यास और

हुआ। छंद नं० ३८० में भूषणजी ने संवत् १७३० बुध सुदि १३ को इसका समाप्त होना लिखा है। हमारी प्रार्थना पर महा-महोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर जी ने १७३० का पूर्ण पचांग बनाकर हमारे पास भेज दिया था जिसके लिये हम उनके अत्यंत कृतज्ञ हैं। इससे विदित होता है कि श्रावण और कार्तिक मास में शुक्ला त्रयोदशी बुधवार को उक्त संवत् में पड़ी थी और कार्तिक में केवल १४ दंड ५५ पल वह तिथि बुध के दिन थी, पर श्रावण में ३६ दंड ४० पल। जान पड़ता है कि कार्तिक मास में ग्रंथ समाप्त हुआ था, क्योंकि कुआर कार्तिक तक की घटनाएँ उसमें कथित हैं।

श्रीशिवाबावनी

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, अथच भूषण के बावन छंदों का संग्रह मात्र है। मुद्रित प्रतियों में शिवराजभूषण के छंद नं० २ और ५६ एवं स्फुट काव्य के छन्द नं० २,४,७, और ८ भी इसी ग्रंथ में सम्मिलित हैं, परंतु हमने प्रथम दो को अन्य ग्रंथ के छन्द होने के कारण और शेष चार को अन्य पुरुषों की प्रशंसा के छन्द होने के कारण शिवा-बावनी से निकाल दिया। इसमें तो शिवाजी ही की प्रशंसा के छन्द होने चाहिएँ, परंतु इन चारों में सुलकी, अवधूतसिंह, साहूजी, और शंभाजी का यश वर्णित है। इस ग्रंथ का संग्रह होने के कारण हमने ऐसा करने में कोई दूषण भी नहीं समझा।

समस्त सत्य घटनाओं ही का वर्णन है और शिवाजी का शील गुण आद्योपांत एक रस निर्वाह कर दिया गया है। इतिहास देखने से जो जो गुण शिवाजी में पाए जाते हैं, उन सब का पूर्ण विवरण इस ग्रंथ में मिलता है। हाँ, एक में अवश्य निभेद है, और वह इस प्रकार है कि इतिहास से प्रकट होता है कि शिवाजी भवानी के बड़े भक्त थे और प्रायः समस्त बड़े कार्य उन्हीं की आज्ञा से करते थे, परंतु भूषणजी ने इन्हें केवल शिव-भक्त बताया है। शिवाजी के शैव होने के विषय में छन्द नं०१४, १५८, २३६ और ३२६ देखिए। शिवाजी शिव तथा भवानी दोनों के भक्त थे, ऐसा इतिहास में आया है।

हमारे भारतवर्ष में पृथ्वीराज के पश्चात् चार स्वतंत्र राजे बड़े प्रभावशाली एवं पराक्रमी हुए, अर्थात् महाराज हम्मीर देव, महाराणा प्रतापसिंह, महाराज शिवाजी और महाराज रणजीतसिंह। इन सब में हम लोगों से दूरतम वासी शिवाजी ही थे, तथापि एतद्देशीय साधारण हिंदू समाज में सबसे अधिक प्रसिद्ध वे ही महाराज हैं। इस असाधारण प्रख्याति का कारण यही भूषणजी का ग्रंथ है। यद्यपि महाराज रणजीत सिंह के सब से पीछे होने के कारण उनका नाम लोग यहाँ जानते हैं, तथापि उनकी भी विजय यात्राओं का हाल यहाँ बहुत कम मनुष्यों पर विदित है, परंतु शिवाजी की लड़ाइयों का समाचार ग्राम ग्राम तथा घर घर पूछ लीजिए।

एक यह भी प्रश्न है कि "शिवराज भूषण" कब समाप्त

हुआ। छंद नं० ३८० में भूषणजी ने संवत् १७३० बुध सुदि १३ को इसका समाप्त होना लिखा है। हमारी प्रार्थना पर महा-महोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर जी ने १७३० का पूर्ण पञ्चांग बनाकर हमारे पास भेज दिया था जिसके लिये हम उनके अत्यंत कृतज्ञ हैं। इससे विदित होता है कि श्रावण और कार्तिक मास में शुक्ला त्रयोदशी बुधवार को उक्त संवत् में पड़ी थी और कार्तिक में केवल १४ दंड ५५ पल वह तिथि बुध के दिन थी, पर श्रावण में ३६ दंड ४० पल। जान पड़ता है कि कार्तिक मास में ग्रंथ समाप्त हुआ था, क्योंकि कुआर कार्तिक तक की घटनाएँ उसमें कथित हैं।

श्रीशिवाबावनी

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, अथच भूषण के बावन छंदों का संग्रह मात्र है। मुद्रित प्रतियों में शिवराजभूषण के छंद नं० २ और ५६ एवं स्फुट काव्य के छन्द नं० २,४,७, और ८ भी इसी ग्रंथ में सम्मिलित हैं, परंतु हमने प्रथम दो को अन्य ग्रंथ के छन्द होने के कारण और शेष चार को अन्य पुरुषों की प्रशंसा के छन्द होने के कारण शिवा-बावनी से निकाल दिया। इसमें तो शिवाजी ही की प्रशंसा के छन्द होने चाहिएँ, परन्तु इन चारों में बुलको, अवधूतसिंह, साहूजी, और शंभाजी का यश वर्णित है। इस ग्रंथ का संग्रह होने के कारण हमने ऐसा करने में कोई दूषण भी नहीं समझा।

इन छः छंदों के स्थान पर हमने वर्तमान ग्रंथ के छंद नं० १,२८, ३१,४०,४१ और ५० स्फुट कविता से निकाल कर इस ग्रंथ में रख दिए हैं। इनमें से छंद नं० ४० को छोड़कर शेष कवि गोविंद गिल्ला भाई की प्रति से मिले हैं।

शिवाबावनी की मुद्रित प्रतियों में कोई क्रम नहीं था, अतः हमने ऐतिहासिक घटनाओं तथा साहित्यिक कथनों के विचार से पूर्वापर के अनुसार इसे क्रमबद्ध कर दिया है। इसमें बहुत सा वर्णन शिवराज के अभिषेकानंतर का है। यह समय ऐसा था कि जब शिवाजी बीजापुर तथा गोलकुंडा को भली भाँति पददलित कर चुके थे और ये दोनों राज्य उनके प्रभुत्व को स्वीकार करके ५ लाख तथा ३ लाख रुपए वार्षिक कर उन्हें देने लगे थे। इसी कारण इस ग्रंथ में इन दोनों बादशाहियों का स्वल्प रूप से कथन हुआ है और मुख्यांश में शिवाजी के दिल्ली से झगड़े का वर्णन है।

इस ग्रंथ के छंदों के स्वतंत्रतापूर्वक निर्मित होने के कारण इसमें प्राबल्य और गौरव विशेष आए हैं, और रसों के पूर्ण उदाहरण भी बहुत पाए जाते हैं, परंतु यहाँ भी भयानक रस का प्राधान्य है। रौद्र रस के छंद भी यत्र तत्र दृष्टिगोचर होते हैं, तथापि इसमें शुद्ध वीर रस के दो ही चार छन्द हैं। इसमें भूषण ने शत्रुओं की दुर्गति का बड़ा सुंदर चित्र खींचा है और शिवराज के प्रताप और आतंक के वर्णन भी बड़े ही विशद हैं।

यह छोटा सा ग्रंथ बड़ा ही मनोहर है और इसके छंद

कहीं कहीं शिवराजभूषण के छंदों से भी अधिक प्रभावोत्पादक हैं। इसकी जहाँ तक प्रशंसा की जाय, थोड़ी है।

बावनी में कही हुई घटनाओं का चक्र इतिहासानुसार नीचे लिखा जाता है—

किस सन् की घटना	छन्द नम्बर
१६५५	३०
१६५८	१४, १५
१६५६	२७, ३०, ३३
१६६३	२८
१६६६	१६, १७
१६६८	२०, २२
१६७०	२७
१६७२	२५, १६
१६७४	३४ (अभिषेक)
१६७५	३६
१६७७	३२, ४४, ४५

शिवाबावनी के विषय में बहुत लोगों का यह भी मत है कि जब भूषण पहले पहल शिवाजी के पास गए और उन्हें "इन्द्रजिमि जंभ" वाला छंद सुनाया, तब परम प्रसन्न होकर उन्होंने कहा—"फिर कहो" (शि० भू० छ० न० ५६)। इस पर भूषण ने एक अन्य छंद पढ़ा। पुन. "और कहो" की आज्ञा पाकर एक ओर छंद सुनाया। इसी प्रकार एक एक करके

५२ बार ५२ छंद पढ़ कर वे थक गए। वही ५२ छंद शिवा-बावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह मत किसी अंश में शुद्ध नहीं है, कारण यह कि इस ग्रंथ में करनाटक की चढाई का भी वर्णन है जो सन् १६७६-७८ ई० में हुई थी। अतः इस मता-नुसार यह सिद्ध होता है कि भूषण पहले पहल शिवाजी के यहाँ सन् १६७८ के पश्चात् गए थे। परंतु ये स्वय लिखते हैं कि इन्होंने सवत् १७३० (अर्थात् सन् १६७३ ईसवी) में शिव-राजभूषण ग्रथ समाप्त किया। फिर इस बावनी में एक छंद हुलंकी ("हृदयराम सुत रुद्र") और एक अवधूतसिंह की प्रशंसा में लिखा था जिससे प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि यह शिवाजी को ग्रंथरूप में कदापि नहीं सुनाई गई। इसके स्वतंत्र ग्रंथ होने के विरुद्ध यह भी प्रमाण है कि इसका वदना-वाला छंद ही शिवराजभूषण से लिया गया था, एवं दो एक और भी छंद ऐसे ही थे। इसमें आद्योपांत कोई प्रबंध भी नहीं है, और न किसी ने इसे स्वतत्र ग्रंथ कहा ही है। यह उत्कृष्ट ग्रथ है और हिंदी में इसके जोड के बहुत ग्रंथ न मिलेंगे।

छत्रशाल-दशक

जान पड़ता है कि भूषण महाराज ने छत्रशाल के विषय में बहुत से छंद बनाए थे, क्योंकि उन्होंने सन् १६८० से सन् १७०५ तक सिवाय छत्रशाल के और किसी का अधिकता से यश वर्णन नहीं किया। उन्हीं छन्दों में से आठ घनाक्षरी और दो दोहे

इस ग्रंथ में रक्खे गए हैं, और दो घनाक्षरी बूँदी नरेश महाराज छत्रशाल हाडा विषयक इसमें हैं। इसकी मुद्रित प्रतियों में राव राजा बुद्धसिंह विषयक एक छंद भी था जो अब हमने स्फुट काव्य के तीसरे नंबर पर रख दिया है। उसके स्थान पर छंद नंबर ४ इसमें स्फुट कविता से लाकर हमने रक्खा है।

इस ग्रंथ का भी क्रम हमने इतिहास के विचार से पूर्वापर क्रमानुसार कर दिया है। बूँदी नरेश के दोनों छंद प्रथम रख देने का कारण भी स्पष्ट है। यद्यपि वे सन् १७१० के लगभग बनाए गए थे, तथापि उनमें घटना सन् १६५८ की वर्णित है। तृतीय छंद हमारे अनुमान में सन् १६७५ में बनाया गया था और उसी सन् में चतुर्थ और पंचम छंद बने (बुंदेलों के इतिहास संबंधी भूमिकाएं देखिए)। छंद नं० ६ सन् १६६० एवं नंबर सात १७०० की घटनाओं से संबंध रखता है। छंद नंबर आठ और नौ संभवतः सन् १७०८ में बने और नंबर दस सन् १७११ के लगभग बना।

इस ग्रंथ के छंद भूषण की कविता में सर्वोत्कृष्ट हैं, और एक भी छंद सिवाय उत्तम के मध्यम श्रेणी तक का इसमें नहीं है। भूषण ने शिवराज और छत्रशाल सरीखे भारतमुखोज्वल कारी युगल मित्रों का वर्णन करके देशवासियों और हिंदी रसिकों का बड़ा उपकार किया है। यह बात प्रसिद्ध है कि भूषणजी जब महाराज शिवराज के यहाँ से सम्मानित हो छत्रशाल के यहाँ पधारे, तो इन्होंने कविजी का बहुत आदर सत्कार किया

और चलते समय यह कह कर कि "अब हम आप को क्या विदाई दे सकते हैं!" उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया! तब भूषणजी अत्यंत प्रसन्न हो झट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस" कहते हुए उनकी प्रशंसासूचक कविता तत्काल बना चले। वेही कवित्त छत्रशाल-दशक के नाम से प्रसिद्ध हुए। परंतु जान पड़ता है कि भूषणजी ने इस समय कोई और ही छंद बनाए होंगे। इस ग्रंथ के छंद किसी ग्रंथ रूप में नहीं बने क्योंकि न तो इनमें वंदना है, न सन् संवत् का ब्योरा और न कोई क्रम विशेष, वरन् ये स्फुट कवित्त मात्र हैं और बाद को लोगों ने इन छंदों में भूषणकृत छत्रशाल विषयक दो एक और छंद मिलाकर "छत्रशाल दशक" नामक १०-१२ छंदों का "ग्रंथ" पूरा कर दिया, क्योंकि इसमें छत्रशालजी बूँदी नरेश के भी दो छंद हैं, जिनको छत्रशाल-बुंदेला के ग्रंथ में न होना चाहिए था। यह छोटा सा ग्रंथ ओज प्राबल्य में एकदम अद्वितीय है।

स्फुट काव्य

इसमें भूषण के १७ छंद (जो हमें मिले) लिखे गए हैं। इसमें कोई ऐतिहासिक क्रम नहीं रक्खा गया है, क्योंकि प्रथम नंबर पर शिवाजी की प्रशंसा का छंद रखना हमें भला मालूम पड़ा। इसके छंदों का ऐतिहासिक क्रम इस प्रकार है—

छंद संख्या	किस सन् का वर्णन अथवा किस सन् में बना।	छंद संख्या	किस सन् का वर्णन अथवा किस सन् में बना।
१	१६७६	६	१६७५
२	१६६५	७	१७१५
३	१७१०	८	१६८०
४	१७१५		
५	१६५७		

इन छंदों के विषय में विशेष हमें कुछ वक्तव्य नहीं है। जैसे प्रभावपूरित भूषणजी के और छंद हुआ करते हैं, वैसे ही ये भी हैं। स्फुट काव्य के संबंध में हमें केवल निम्नलिखित छंद पर विचार करना है—

मालती सवैया

"बालपने में तहौवरखान को सैन समेत अँचे गयो भाई।
ज्वाना में रंडी औ खुडी हने त्यों समुद्र अँचे कछु बार न लाई॥
वैस बुढापे कि भूँख बढ़ी गयो बगस बस समेत चबाई।
खाये मलिच्छन के छोकरा पै तवौ डोकरा को डकार न आई॥"

यह छंद मुद्रित प्रतियों में भूषण के स्फुट छंदों में लिखा हुआ है। इसमें छत्रशाल का वर्णन है, क्योंकि तहौवरखाँ, समुद्र (अब्दुस्समद) और बगश से वेही तीस वर्ष, चालीस वर्ष और उन्नासी वर्ष की अवस्थाओं में क्रमश: लड़े थे। बगश का युद्ध सन् १७२६ में हुआ था। सो यदि यह छंद भूषणकृत मानें तो उनकी पूरी अवस्था ११६ साल से कम नहीं मान सकते। अतः हमें बहुत संदेह है कि यह छंद भूषणकृत नहीं है। भूषणजी छत्रशाल से कई साल बड़े थे। सो वे बुँदेला महाराज को "डोकरा" कभी न कहते। यह छंद किसी छोटी अवस्था के कवि ने बनाया है। इसमें भूषण का नाम भी नहीं है।

भूषण की कविता का परिचय

हम भूषण महाशय के चारो ग्रंथों के विषय में अलग अलग अपने विचार प्रकट कर चुके। अब चारों ग्रंथ मिला कर इनकी समस्त रचना पर जो कुछ विशेष कथनीय है, वह नीचे लिखा जाता है।

भाषा—इनकी भाषा विशेषतया व्रजभाषा है, जैसी कि उस समय के प्रायः सभी कवियों की थी। जान पड़ता है कि उस समय के कुछ महाराष्ट्रवासी भी हिंदी भाषा को भली भाँति समझते थे। नहीं तो भूषण की कविता का ऐसा आदर शिवाजी की सभा में कैसे होता ? युद्धकाव्य लिखने के कारण भूषणजी

से बहुत कम इस भाषा का प्रयोग किया है। यह भूषण के कवित्व शक्ति संपन्न होने का प्रमाण है। वीर कविता में अन्य कवियों को प्राकृत भाषा का अधिक प्रयोग करना पड़ा है। फिर अन्य कवियों की युद्ध कविता में माधुर्य्य और प्रसाद गुणों की बड़ी न्यूनता रहती है, परंतु भूषण महाशय इन गुणों को भी अपनी कविता में बहुतायत से ला सके हैं।

प्राकृत मिश्रित भाषा और व्रजभाषा के अतिरिक्त भूषण ने कहीं कहीं बुंदेलखंडी तथा खड़ी बोली का भी प्रयोग किया है। प्राकृत भाषा के उदाहरणार्थ शि० भू० छंद नं० १४७ और खड़ी बोली के उदाहरणार्थ नं० १६१ तथा २०६ देखिए।

भूषणजी ने अपनी कविता में यत्र तत्र फ़ारसी के असाधारण शब्द रक्खे हैं, यथा—जावता करन हारे व तुज़ुक (शि० भू० नं० ३८), दरियाव (शि० भू० नं० १०८), गाजी, जशन, तुजुक व इलाम (शि० भू० नं० १६८), मुहीम (शि० भू० नं० १८०), वेइलाज (शि० भू० नं० २७६), गुसलखाना, सिलहखाना, हरमखाना, शुतुरखाना, करजखाना, व खिलवत खाना (शि० भू० नं० ३६१) इत्यादि। इससे विदित होता है कि भूषणजी फ़ारसी भी जानते थे, परतु अच्छी तरह नहीं जानते थे, क्योंकि उपर्युक्त उदाहरणों में भूषणजी ने जावता करन हारे, इलाम, तथा वेइलाज का प्रयोग वेमुहाविरे किया है। उपर्युक्त उदाहरणों के अतिरिक्त निम्नलिखित छन्दों में फारसी के असाधारण शब्द आए हैं। इनमें कई स्थानों

पर शब्दों का अशुद्ध प्रयोग है—शिवराज-भूषण छन्द नंबर २४, १०३, ११४, १५६, २०६, २४२, २५८, २८३, २९९, ३१५, ३६०, शिवाबावनी छुंद नंबर २, ६, १०, १४, १७, २०, २१, २२, २३, २६, ३०, ३३, ३४, ४०, ४१, छत्रशाल दशक, छुंद नंबर १०, स्फुट काव्य छुंद नंबर, ४, ५, ६, ७।

भूषण जी ने कहीं कहीं असाधारण एवं विकृत रूप शब्द भी लिखे हैं, यथा—छिया (१०), कुरुख (३४), कहाव (५१) जोव (५२, १४२१, १६८), धरवी (१५५ बुंदेलखंडी भाषा), छुंद नंबर ३५४, ३५५, ३५६, ३५७ का बृहदंश, श्रोम (३६०), जपत (१५), चकत्ता, खुमान, अमाल (७३), गारो (१८६), पेल (शिवा बा० न० २), वप (शि० बा० न० १५), इत्यादि।

उपर्युक्त उदाहरणों में जहाँ केवल अङ्क लिखे हैं और ग्रंथ का नाम नहीं लिखा है, वहाँ शिवराजभूषण के छुदों के नंबर समझने चाहिएँ।

परन्तु इतने ग्रंथ और विशेष करके युद्ध वर्णन में यदि उन्होंने इतने अथवा कुछ और शब्दों का अव्यवहृत एवं विकृत रूप में समावेश किया, तो आश्चर्य की बात नहीं है, वरन् आश्चर्य तो यह है कि भूषण ने इतने कम शब्द मरोड़ कर अपना काम कैसे चला लिया।

यदि इस कवि के कुल शब्द गिने जायँ तो अन्य अनेक ग्रंथ रचनेवालों की अपेक्षा इसका शब्द समूह बड़ा ठहरेगा। अँग-

रेजी के सुप्रसिद्ध कवि शेक्सपियर ने इंगलैंड के हर एक कवि से अधिक शब्दों का प्रयोग किया है और यह उसकी कविता का एक बड़ा गुण समझा जाता है। यही गुण भूषण में भी विद्यमान है। भूषण महाशय की कविता में अनुप्रास यद्यपि बहुतायत से आए हैं, तथापि वीरताप्रधान ग्रंथों के रचयिता होने के कारण इन पर कोई दोषारोपण नहीं कर सकता। फिर इन्होंने पद्माकर जी की भाँति अनुप्रास एवं यमक का स्वाँग भी नहीं बनाया है। उदाहरण ये हैं—शिवराजभूषण में छंद नंबर १, ३८, ४२, ४८, ५६, ६८, ७३, ७७, ८३, १०१, ११०, १३०, १३३, १३४, १६१, १६२, १६६, १८६, २१५, २२६, २४७, २५४, २६६, ३३६, ३४०, ३५१, ३५४, से ३५६ तक, ३६०, ३६१, ३६४, शिवाबावनी में छंद नंबर २, ३, ६, ८, २६, ३७, ३८, ४०, ४२, ४३, ४५, ४८, छत्रशालदशक के छंद नंबर १, ३, ४, ८, स्फुट काव्य के छंद नंबर २, ५, ६, ७।

भूषणजी ने कुल मिलाकर दस प्रकार के छंद लिखे हैं जिनके नाम नीचे लिखे जाते हैं। शिवराज भूषण के जिस नंबर के छंद के नोट में छंद विशेष का लक्षण दिया है, उसका ब्योरा ब्रैकेट में यहाँ लिख दिया गया है।

छंदों के नाम ये हैं

मनहरण (१), छप्पय (२), दोहा (३), मालती सवैया (१५), हरिगीतिका (१६), लीलावती (१३६), किरीटी सवैया

(३२०), अमृतध्वनि (३५४), माधवी सवैया (३६८), और गीतिका (३७१)। भूषण ने अपने ग्रंथों का मुख्यांश मालती सवैया और मनहरण में लिखा है। अलंकारों के लक्षण ये दोहे में लिखते थे। छप्पय भी कुछ अधिकता से पाए जाते हैं। शेष छंदों का प्रयोग बहुत कम हुआ है। उस समय के कवियों में इसी प्रकार के छंद लिखने का कुछ नियम सा पड गया था, जो प्राचीन प्रणाली के कवियों में आज तक चला आता है।

भूषणजी पदांत में विश्राम चिह्न रहित छंद बहुत कम लिखते थे, परंतु शि० भू० के छंद नंबर ३४६, ३६३ में ऐसा हुआ है। इसी को अँगरेजी में Run on-line कहते हैं।

भूषण की कविता में विश्राम चिह्नों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। कोई कोई छंद ऐसे हैं कि जिनमें विश्रामों पर ध्यान न देने से अर्थ में गडबड पड सकती है।

उदाहरण, शिवराजभूषण छंद नंबर १, ३, ४०, ४८, ८१, १०७, २४७, ३०६, ३६६, ३८१ इत्यादि।

कुल बातों पर ध्यान देने से विदित होता है कि भूषण की भाषा तथा शब्दयोजना की रीति बहुत ही प्रशंसनीय है।

भूषण महाराज ने विषय और विशेषतया नायक चुनने में बडी बुद्धिमत्ता से काम लिया है। शिवाजी और छत्रशाल से महानुभावों के पवित्र चरित्रों का वर्णन करनेवाले की जहाँ तक प्रशंसा की जाय, थोडी है। शिवाजी ने एक जिमींदार और बीजापुराधीश के नौकर के पुत्र होकर चक्रवर्ती राज्य स्थापित

करने की इच्छा को पूर्ण सा कर दिखाया और छत्रशाल बुंदेला ने जिस समय मुगलों का सामना करने का साहस किया था, उस समय उनके पास केवल पाँच सवार और पचीस पैदल थे। इसी "सेना" से इस महानुभाव ने दिल्ली का सामना करने की हिम्मत की और मरते समय अपने उत्तराधिकारियों के लिये दो करोड़ वार्षिक मुनाफे का स्वतंत्र राज्य छोड़ा।

भूषण महाराज अन्य कवियों की भाँति ऐसे छंद कम बनाते थे जो केवल नायक का नाम बदल देने से किसी की प्रशंसा के हो सकते हों। इनकी कविता में सहस्रों घटनाओं का समावेश है। हर स्थान पर इन्होंने कितने ही ऐतिहासिक व्यक्तियों और स्थानों का वर्णन छंदों में किया है। इतने लोगों के नाम काव्य में ये महाशय लाए हैं कि कितने ही के विषय में अनेक भारी भारी ऐतिहासिक ग्रंथ ढूँढने पर भी किसी तरह का पता लगाए नहीं लगता। मनुष्यों के नाम लिखने में प्राय उनके पिता का नाम, जाति और वासस्थान का भी पता भूषणजी लिख दिया करते थे। भूषण ने प्रबंधध्वनि (Allusions) भी बहुत रक्खी है।

ऐतिहासिक घटनाएँ लिखने के साथ ही साथ भूषण जी की सत्यप्रियता भी विशेष सराहनीय है। यद्यपि शिवाजी ने इन्हें लाखों रुपये दिए, तथापि इन्होंने उनके हारने तक का वर्णन किसी न किसी प्रकार कर ही दिया, और जो बातें उनकी सत्यता एवं महत्व के प्रतिकूल थीं, उन्हें भी कह दिया है

(शि० भू० छंद न० २१२, २१३, देखिए)। इसी प्रकार जब ये महाशय छत्रशाल के यहाँ बैठे थे, तब भी इन्होंने कहा कि "साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रशाल को"। इनके चित्त में साहू का ख्याल अधिक था और छत्रशाल उनके बाद। इस विचार को इन्होंने स्वय छत्रशाल तक पर प्रकट करने में सकोच नहीं किया। कमाऊँ महाराज के यहाँ भी अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर दी। इसको स्वतत्रता भी कह सकते हैं, परतु सत्यप्रियता का भी इन बातों में बहुत कुछ अंश है। इन्होंने शिवाजी के शत्रुओं को उनसे मेल करने की बहुत सलाह दी है। शि० भू० नबर १५०, २६१, २७६, २७६, ३१२ तथा शि० बा० न ३१ देखिए।

भूपण महाराज ने घटनाओं के साथ कभी कभी ख़याली अथवा भडकीला वर्णन कर दिया है, पर ऐसी बातों को उन्होंने सत्य बातों की भाँति नहीं कहा है और न उन्हें असत्य प्रमाणित करके उनकी सत्यप्रियता के प्रतिकूल कुछ कहना ही चाहिए। वे केवल कविता का चमत्कार दिखाने और शत्रुओं का उपहास करने के निमित्त कही गई हैं।

उदाहरण—शिवराजभूपण के छद नंबर ८६, ६०, ६३, ६४, ६६, १०५, २०६, २२८, २६३, २७०, २७६, ३२३ ३२४, व शिवाबावनी के छद नबर १३, २६, ४१।

भूपणजी ने शिवाबावनी के छंद नंबर १२ में अमीर औरतों के विपय में कहा है कि "किसमिस जिनको अहार" एव "नास-

पोती खातीं ते धनासपाति खाती हैं" । नाशपाती अथवा किशमिश का आहार कोई बडी बात नहीं है । या तो भूषण ने ये बातें मजाक में कही हैं या उस समय नाशपाती और किश मिश बहुमूल्य और अमीरपसंद वस्तुएँ होंगी।

भूषणजी ने कई जगह "गुसलखाना" का वर्णन किया है (शि० भू० नं० ३४, ७६, २०४, २०६, २६५, व शि० बा० न० १६ देखिए) परन्तु साफ साफ कहीं नहीं कहा कि गुसलखाने में क्या हुआ । यह भी कई जगह कहा गया है कि दरबार में जाकर शिवाजी ने औरंगजेब को सलाम नहीं किया (शि० भू० न० १८६, १६८, २०६ शि० बा० छद नबर १६) । एक उपन्यास में हमने यह देखा है कि औरंगजेब ने जब सुना कि शिवाजी का इरादा उसे सलाम करने का नहीं है, तो उसने फाटक में आराइश के कई सामान लगा कर उसे ऐसा छोटा कर दिया कि बिना सर झुकाए कोई मनुष्य उसके भीतर घुस न सके । इस पर शिवाजी ने तनकर अपना छाता इतना बाहर निकाल दिया कि सिर देह के बहुत पीछे हो गया । तब उसने पहले अपना पैर अदर रख के कुल देह अदर निकाल कर तब सर फाटक के भीतर किया जिससे कि उसे सिर झुकाना नहीं पडा । टाड राजस्थान में लिखा है कि सिरोही के महा राज ने लगभग सन् १६८० ई० में औरगजेब के ही राजत्व काल में बिलकुल ऐसा ही किया । इससे विदित होता है कि उस समय भी दरबार में जाकर अकड के कारण सलाम न

करना संभव था। इसी प्रकार मारवाड़ के प्रसिद्ध अमरसिंह ने शाहजहाँ के सामने उसके मुसाहब सलावतखाँ को दरबार में मार डाला था। तब शाहजहाँ मारे डर के जनाने में भाग गया था। अतः शिवाजी ने सलाम न किया हो तो कोई आश्चर्य नहीं। भूषणजी जब अपने नायक की ख्याति बढ़ाने को कोई असंभव अथवा असत्य बात कहते थे, तो उसे एकाध बार दबी जबान कहकर छोड़ देते थे (शि० भू० नं० ६२)। परन्तु उसे बार बार बड़ा जोर देकर नहीं कहते थे। फारस के अब्बास शाह से शिवाजी से कभी लड़ाई नहीं हुई, अतः एक बार कहकर फिर भूषण ने उसका नाम भी न लिया। परन्तु इस ग़ुसलख़ाने के विषय में भूषण ने कई छंद बड़े ज़ोर के कहे हैं और यही हालत सलाम की है। इतिहास भी इन बातों का बहुत कुछ समर्थन करता है। भूषण के कथन में केवल एक स्थान पर इतिहास से प्रतिकूलता पाई जाती है और वह यह है कि इतिहासों ने शिवाजी को भवानी का भक्त माना है और भूषण ने शिव का (शि० भू० नं० १४, १५८, २३६, ३२६ देखिए)। इसके विषय में एक बहुत बड़ा आश्चर्य यह होता है कि भूषणजी स्वयं भवानी के भक्त थे (शि० भू० नं २ देखिए) और कहा जाता है कि उनके पिता के चार पुत्र भवानी ही की कृपा से हुए थे। तब यदि शिवाजी भी भवानी के भक्त होवे तो भूषण ऐसा क्यों न कहते? भूषण ने शिवाजी को सिवाय शिव के और किसी का भक्त नहीं बताया है। इधर कई इतिहासों के अतिरिक्त स्वयं

रानडे महोदय ने उन्हें भवानी का भक्त कहा है। हमारे अनुमान में भूषण ने किसी गुप्त कारण से (जैसे शिवाजी की आज्ञा से) अपनी कविता में भवानी का वर्णन नहीं किया।

भूषण ने शिवाजी की और बडाइयों में उन्हें अवतार भी माना है (शि० भू० न० ११, १२, ७५, ८७, १०८, १४२, १६६, २२८, २६५, ३१२, ३४८, ३८१, देखिए)। यों तो प्रत्येक मनुष्य में आत्मा परमेश्वर का अंश है, और इसलिये हर आदमी अवतार कहा जा सकता है; परन्तु भूषण ने शिवाजी को कई बार हरि का अवतार कहा है। ऐसा करने में भूषण ने ठकुरसोहाती की सीमा के पार पहुँचा दिया। शि० भू० नं० ३२६ में शिवराज का बहुत ही यथार्थ वर्णन पाया जाता है।

इनकी कविता की उद्दंडता दर्शनीय है। इन्होंने शिवाजी की चढाइयों का बडा उद्दंड एवं शत्रुओं पर उनके प्रभाव का बडा भयानक वर्णन किया है।

उत्तम छंद

भूषणजी की कविता में बहुत से उत्तम छंद हैं। हम उनके परमोत्कृष्ट छंदों की एक सूची नीचे देते हैं। इनमें से कई छंदों में उद्दंडता भी पाई जायगी। शिवराजभूषण के उत्तम छंद १६ से २३ तक, ३५, ३७, ३८, ४२, ४८, ५६, ६८, ८७, ९७, ९९, १००, १२३, १२५, १३०, १३४, १५०, १७३, १७६, १८२, १८६, २००, २०६, २०७, २२६, २४५ २४७, २५२, २५४, २५८, २७५,

२८८, २६०, २६३, २६५, ३०१, ३०५, ३०७, ३१०, ३२६, ३२८, ३३१, ३३२, ३३४, ३४८, ३५०, ३६०, ३६१, ३७० । शिवाबावनी के छंद २, ३, ६, १७, २३, २४, २६, २७, ३२, ३५, ३७, ३८, ३६, ४०, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४६, ५०, ५१ । छत्रशाल दशक के छंद १ से १० तक सभी ।

स्फुट काव्य के छंद २, ४, ६, ७, ८, ६, १०, ११, १६, १७ ।

जातीयता

भूषण महाराज को जातीयता का सदैव बड़ा ध्यान रहता था (शि० भू० नं० १०, १२, ६१, ६३, ७३, १३०, १४३, १४६, २३६, २४५, २५८, २७५, २६३, ३३६, ३३७ । शि० बा० नं० २०, २१, २२, २५, ४८, ५१, ५२, । छत्र० दशक नं० ६ स्फुट नं० ६)। इनके जातीयता विषयक इतने छंद होते हुए भी किसी ने शि० बा० छंद नं० ४६ में "हिंदुवानो हिंदुन को हियो हहरत है" लिख दिया था । भूषण की लेखनी से ऐसे घृणित शब्द निकलने से "दहिलाने दहिलन हियो हहरत है" यथार्थ समझ पड़ता है । भूषण जी पूरे जातीय (National) कवि थे और टेनिसन की भाँति इन्हें भी प्रतिनिधि कवि (Representative poet) कहना चाहिए । जातीयता, जातिगौरव और हिंदूपने का जितना इन्हें ध्यान रहता था, उतना हिंदी के अधिकांश कवियों को नहीं था । इसका एक भारी प्रमाण यह भी है कि इन्होंने छत्रसाल बुँदेला के सुप्रसिद्ध पिता चंपतिराय पर (जिन्होंने

कुछ दिनों के लिये औरंगजेब की सेवा स्वीकार कर ली थी) एक भी कवित्त नहीं बनाया, पर उनके प्रतिद्वंद्वी छत्रसाल हाडा पर दो कवित्त कहे हैं, क्योंकि हाडा महाराज औरंगजेब से लड़े थे। औरंगजेब से भूषणजी इस कारण विशेष नाराज थे कि वह हिंदुओं को सताता था।

यद्यपि वर्त्तमान समय की दृष्टि से इस कवि की मुसलमानों के प्रति कटूक्तियाँ बहुत ही अनुचित एवं विषगर्भित ज्ञात होती हैं, तथापि हम लोगों को इनकी कविता को इस दृष्टि से न जाँचना चाहिए। उस समय औरंगजेब के अधम बर्ताव के कारण हिंदू मुसल्मानों में मूषक मार्जार की भाँति स्वाभाविक शत्रुता थी। अतः इन्होंने चाहे जो कुछ कहा, उस समय वह अनुचित न था। फिर उस काल में शत्रुओं के विषय में परम कटु शब्द कहने की कुछ रीति सी पड़ गई थी, यहाँ तक कि मुसल्मान इतिहासकार शिवाजी एवं मुसल्मानों के अन्य शत्रुओं के विषय में साधारणतः यों लिखा करते थे कि "वह कुत्ता खाँ साहब से पूना में लड़ा," "उस कुत्ते ने" अमुक स्थान पर अमुक खाँ साहब से लड़ कर पराजय पाई। "उस कुत्ते ने" फलाँ साहब सूबा को बड़ी बहादुरी से लड़ कर पराजित किया। मुसल्मान इतिहास लेखकों ने एक महारानी तक के विषय में लिखा है कि 'उस स्थान के कुल कुत्ते उस कुतिया पर बड़ी भक्ति रखते थे"। इस प्रकार के वर्णन ईलियट-कृत मुसल्मान समय के इतिहास के मुसलमानी इतिहासों के

उल्थाओं में प्रायः पाए जायँगे। जब उस काल के इतिहास लेखक ऐसे सभ्य थे, तब कवियों से कोई कहाँ तक आशा कर सकता है? भूषणजी की कविता में जहाँ देखिए, शिवाजी की विजयों से हिंदुओं का प्रभुत्व बढ़ता देख पड़ता है। जिन दो एक हिंदुओं से शिवाजी का युद्ध भी हुआ, उनके विषय में इन्होंने यही कहा कि "हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोउ टूटै"। शिवाजी ने राजा जयसिंह से युद्ध न करके अपनी हार मान ली और उन्हें अपने कुछ गढ़ दिए, परन्तु युद्ध करके हिंदू खून नहीं बहाया। इस पर यद्यपि शिवाजी की पराजय हुई, तथापि भूषण की राय में उसका यश वर्द्धित हुआ।

"तैं जयसिंहहिँ गढ़ दिये शिव सरजा जस हेत"।

फिर यद्यपि शाहजी मुसलमानों के नौकर थे, तथापि इन्हों ने उनके राजपद की प्रशंसा न करके उन्हें—

"साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया" (शि० भू० न० १०) कहा है। नौकरी के विषय में केवल इतना इशारा है कि "साहि निजाम सखा भयो"।

इनके नायक छत्रसाल थे, तथापि इन्होंने उनके पिता चंपतिराय पर एक भी छंद न बनाया, क्योंकि वे धौलपुर में औरंगजेब की ओर से लड़े थे जो हिंदुओं का घोर शत्रु था। उसी युद्ध में छत्रसाल हाड़ा यद्यपि चपति के प्रतिकूल लड़े थे, तो

भी इन्होंने चपंति की प्रशंसा न करके छत्रसाल हाडा की प्रशंसा की, क्योंकि वे महाराज हिंदुओं के शत्रु (औरंगजेब) के प्रतिकूल लडे थे। वास्तव में भूषण की कविता के नायक हिंदू हैं। जो मनुष्य हिंदुओं के पक्ष में लडता था, उसी का भूषण ने वर्णन किया है चाहे वह शिवराज हो या छत्रसाल हो रावबुद्ध, या अवधूत सिंह, शंभाजी हो या साहूजी। इनको जातीयता का ऐसा ध्यान था कि इन्होंने शिवाजी के हिंदू शत्रु उदयभानु आदि तक का प्रभावपूरित वर्णन किया है।

परिणाम

इन महाशय की कविता में कोई कहने योग्य दोष नहीं है। भाषा कवियों में इनका स्थान बहुत ऊँचा है और इनकी भाँति सम्मान कविता से किसी का नहीं हुआ। वास्तव में युद्धकाव्य करने में इन्होंने बडी ही कृतकार्य्यता पाई है। युद्ध का ऐसा उत्तम वर्णन किसी कवि ने नहीं किया।

भूषण के विषय में शिवसिंह सेंगर का मत यह है—"रौद्र, वीर, भयानक ये तीनों रस जैसे इनके काव्य में हैं, ऐसे और कवि लोगों की कविता में नहीं पाये जाते"—(इन्होंने) "ऐसे ऐसे शिवराज के कवित्त बनाये हैं जिनके बराबर किसी कवि ने वीर यश नहीं बना पाया।" इनकी युद्ध कविता के विषय में इतनाअवश्य कहा जा सकता है कि इन्होंने सर वाल्टर स्काट

की भाँति किसी युद्ध का पूरा वर्णन नहीं किया। स्यात् इनका ध्यान इस ओर कभी आकृष्ट नहीं हुआ, नहीं तो जब ये महाराज शिवराज के साथ रहा करते थे और कितने ही युद्ध इन्होंने अपने नेत्रों से देखे होंगे, तब उनका वर्णन करना इन जैसे बड़े कवि के लिये कितनी बात थी! यह हिंदी साहित्य का दुर्भाग्य था कि इन महाशय ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। आज कल कतिपय महाराष्ट्र महानुभाव हिंदी की अच्छी सेवा कर रहे हैं। सो मानों उनके उत्साह वर्द्धनार्थ भूषण ने पहले ही से हिंदी में महाराष्ट्र कुल-चूडामणि महाराज शिवाजी का यश वर्णन कर रक्खा है। जैसे अपने नायकों की प्रशंसा में भूषण ने केवल कोरी बड़ाई न करके सत्य घटनाओं का वर्णन किया है, वैसे ही यदि अन्य कविगण भी करते तो हिंदुओं की ओर से भी भारतवर्ष का यथार्थ इतिहास लिखने में कोई कठिनाई न पड़ती। इस कवि की नरकाव्य करने में कुछ ऐसी इथौटी सी बँध गई थी कि जिसका यह कवि यश वर्णन करता था, उसका रोम रोम प्रफुल्लित हो जाता था। इसी कारण इनका हर जगह असाधारण सत्कार होता था।

सब मिला कर निष्कर्ष यह निकलता है कि भूषण महाराज का काव्य वास्तव में हिंदी साहित्य का भूषण है। स्थिर लक्षणानुसार चाहे इनकी कविता को कोई महाकाव्य संस्कृत रीति ग्रंथों में न कह सके, परंतु तो भी इन्हें हम बिना महाकवि कहे नहीं रह सकते।

हमारा ग्रंथ-संपादन

भूषणजी की इस ग्रंथावली के संपादन करने में हमने निम्नलिखित पुस्तकों से विशेष सहायता ली है—

(१) भूषण ग्रथावली, बगवासी प्रेस, कलकत्ता ।

(२) शिवराजभूषण, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ ।

(३) „ „ पूनावाली प्रति ।

(४) „ „ निर्णयसागर प्रेस, बम्बई ।

(५) श्री शिवाबावनी व छत्रसालदशक (व स्फुट कविता) श्री कल्पतरु प्रेस, बंबई ।

(६) शिवराजभूषण, बाराबंकी में मुद्रित ।

(७) „ „ हस्तलिखित स्वर्गीय प० युगलकिशोरजी मिश्र के पुस्तकालय गंधोली (सीतापुर) की प्रति

(८) „ „ हस्तलिखित स्वर्गीय कवि गोविंद गिल्ला भाई जी काठियावाड के पुस्तकालय की ।

(९) ग्रेंट डफ कृत महाराष्ट्र जाति का इतिहास ।

(१०) रानडे महोदय-कृत महाराष्ट्र शक्ति का अभ्युदय ।

(११) टाड-कृत राजस्थान ।

(१२) शिवसिंह-सरोज ।

(१३) बुंदेलखंड गजेटियर ।

(१४) ईलियट-कृत मुसलमानों के समय का इतिहास ।

(१५) लाल कवि कृत छत्र प्रकाश ।

(१६) हन्टर कृत भारतीय इतिहास।
(१७) बर्नियर के ग्रंथ में औरंगज़ेब का हाल।
(१८) प्रो० यदुनाथ सरकार कृत औरंगजेब तथा शिवाजी।
(१९) केलूसकर तथा तकाखव कृत शिवाजी।
(२०) मध्य भारत, रीवाँ, पन्ना, ओरछा, छतरपुर, बाँदा तथा हमीरपुर के गजेटियर।
(२१) मुंशी श्यामलाल कृत बुन्देलखंड का इतिहास।
(२२) नंदकुमार देव कृत वीरकेसरी शिवाजी।

इन सब में केलूसकर महाशय कृत शिवाजी का ग्रंथ बहुत ही प्रशंसनीय तथा सर्वश्रेष्ठ है

सप्तम और अष्टम ग्रंथों से और विशेषतया अष्टम से हमें बहुत सहायता मिली है। छंद सब से अधिक गिल्ला भाई जी वाली प्रति में मिले, परन्तु सब से शुद्ध प्रति पं० युगल किशोरजीवाली पाई गई। तो भी कहना ही पड़ता है कि बहुत शुद्ध कोई भी प्रति न थी और कतिपय तो महा नष्ट भ्रष्ट थीं। अत हमें अनेक छंद अपनी ओर से सब प्रतियों को मिला कर एवं अपने कंठस्थ छंदों द्वारा संशोधित करने पड़े। कतिपय छंद किसी भी प्रति में शुद्ध नहीं मिले। ऐसी दशा में विवश होकर हमें ये छंद अपनी ओर से शुद्ध करने पड़े हैं।

स्वर्गीय कविवर गोविंद गिल्ला भाईजी के प्रति हम कहाँतक प्रकाश करें जिन महाशय ने हम लोगों से भेंट न होने पर भी कृतज्ञता अपनी अमूल्य हस्तलिखित प्रति कृपा कर के हमारे

पास भेज दी और कई महीनों तक उसे हमारे पास रहने दिया। पंडित युगलकिशोर जी हमारे निकटस्थ भतीजे ही थे, अतः उनके धन्यवाद के विषय में हमें मौनावलंबन ही उचित है।

सहृदय पाठकों को ग्रंथावलोकन से विदित हो गया होगा कि इसमें शब्दों के लिखने में उनको शुद्ध संस्कृत के स्वरूप में न लिख कर परिवर्तित हुए हिंदी रूप में लिखा गया है। यथा-स्रम (श्रम), सकति (शक्ति), भूषन (भूषण), दुग्ग (दुर्ग), छिति (क्षिति) इत्यादि।

इसके विषय में हमें केवल यही वक्तव्य है कि भाषा में जो रूप अच्छा समझा जाता है और जो रूप भूषण जी एवं अन्य कविगण पसंद करते हैं, वही लिखा गया है।

भाषा के कविगण केवल श्रुतिकटु बचाने एवं श्रुतिमाधुर्य्य लाने के लिये ऐसा किया करते हैं और इसमें कोई दूषण भी नहीं। इस प्रकार कविगण प्रायः निम्नलिखित वर्णों अपने काव्य में न आने देने का प्रयत्न करते हैं—ट वर्ग, व, श, ड, ऋ, ष, युक्त वर्ण, आधी रेफ इत्यादि।

हमारे विचार में तो भाषा में इन संस्कृत व्याकरण संबंधी झगड़ों के हटा देने से कोई दोष नहीं। फारसी में स्वाद, से, सीन, जो, ज्वाद, जाल, जे, अलिफ, ऐन आदि के व्यवहार में जो कठिनाइयाँ पड़ती हैं, वे सब पर विदित हैं। भाषा में ऐसी बातों के स्थिर रखने की कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। हमें "कार्य्य, मर्म्म, लङ्क, मञ्ज, कण्ठ, अन्त, कवि" इत्यादि को

हिंदी (देवनागरी) में कार्य या कारज, मर्म या मरम, लंक, मंच कठ, अंत, कवि," लिखने में कोई विशेष हानि नहीं प्रतीत होती। भाषा की लिखावट सुगम होनी चाहिए। यदि कोई मनुष्य बिना भाष्य पर्यंत पढ़े देवनागरी लिपि तथा हिंदी भी न लिख सके तो वह सर्वव्यापिनी कैसे हो सकती है?

हमने इस संस्करण में अपनी टिप्पणियाँ दे दी हैं। कदाचित् वे हमसे भी कम हिंदी परिचित महाशयों के काम आवें और हमारा साल डेढ़ साल का श्रम सुफल हो जाय। हर्ष का विषय है कि केवल २० वर्ष के अंदर हमारे इस ग्रथ को चतुर्थ संस्करण का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भूषण महाराज की कविता ऐसे ही आदर के योग्य है भी।

४-४-१९०७
६ १. २२
३० ६ २६

श्यामविहारी मिश्र
शुकदेवविहारी मिश्र

भूषणग्रंथावली



शिवराज-भूषण



मंगलाचरण

कवित्त शुद्ध घनाक्षरी अथवा मनहरण[1]

विकट[2] अपार भव पथ के चले को स्रम हरन करन बिजना से ब्रह्म ध्याइए। यहि लोक परलोक सुफल करन कोकनद से चरन हिए आनि कै जुड़ाइए॥ अलि कुल कलित कपोल, ध्यान ललित, अनंद रूप सरित मैं भूषन अन्हाइए। पाप तरु भंजन बिघन गढ़ गंजन जगत मनरंजन द्विरदमुख गाइए॥ १॥

---

१ यह उस दंडक का नाम है जिसमें इकतीस वर्ण होते हैं, लघु गुरु का कोई क्रम नहीं होता, केवल अंतिम वर्ण अवश्य गुरु होता है, जिसमें सोलहवें वर्ण पर प्रथम यति होती है और अंत के वर्ण पर द्वितीय। देवजी के मतानुसार १४ वें अथवा १५ वें वर्ण पर भी यति हो सकती है, पर वे मध्यम एवं अधम यतियाँ हैं।

२ यह छंद मुद्रित प्रतियों में नहीं छपा है।

छप्पय अथवा षटपद[1]

जै जयति जै आदिसकति जै कालि कपर्दिनि ।
जै मधुकैटभ छलनि देवि जै महिष विमर्दिनी ॥
जै चमुंड जै चंड मुंड भंडासुर खंडिनी ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल[2] बिहंडिनि ॥
जै जै निसुंभ सुंभद्दलनि भनि भूषन जै जै भननि ।
सरजा समत्थ सिवराज कहँ देहि बिजै जै जग-जननि ॥२॥

दोहा[3]

तरनि[4] जगत जलनिधि तरनि[5] जै जै आनँद ओक ।
कोक कोकनद सोकहर, लोक लोक आलोक[6] ॥३॥

अथ राजवंश वर्णन

राजत है दिनराज को बंस अवनि अवतंस ।
जामैं पुनि पुनि अवतरे कंसमथन प्रभु अंस ॥४॥

---

१ इस छंद में ६ पद होते हैं जिनमें प्रथम चार काव्य छंद और अंतिम दो उल्लाला छंद होते हैं। काव्य छंद में प्रत्येक पद २४ कला (मात्रा) का होता है और उसकी ११ वीं कला पर प्रथम यति होती है। पद चार होते हैं। उल्लाला छंद २८ कला का होता है जिसमें प्रथम यति १५ वीं कला पर होती है।

२ चामुंडा देवी की। बिडाल की कथा दुर्गा में है और भंडासुर की उपपुराण में।

३ "प्रथम कला तेरह धरौ पुनि गेरह गनि लेहु। पुनि तेरह गेरह गनौ दोहा लच्छन एहु" ॥ लघु अक्षर की एक कला (मात्रा) होती है और गुरु की दो।

४ सूर्य। ५ नौका। ६ रोशनी अथवा दर्शन।

महावीर ता वंस मैं भयो एक अवनीस।
लियो विरद "सीसौदिया"[1] दियो ईस को सीस ॥५॥
ता कुल मैं नृपवृंद सब उपजे बखत बुलंद।
भूमिपाल तिन मैं भयो बडो "माल मकरंद"[2] ॥६॥
सदा दान किरवान मैं जाके आनन आभु[3]।
साहि निजाम[4] सखा भयो दुग्ग देवगिरि खंभु ॥७॥
ताते सरजा[5] विरद भो सोभित सिंह प्रमान।

---

१ "सीसोदिया" क्षत्रिय सभी क्षत्रियों के सिरमौर हैं। इसी वंश के क्षत्रिय उदयपुर एवं नेपाल में राज्य करते हैं। इनका हाल "टाड" कृत "राजस्थान" में देखने योग्य है। इनके पूर्व पुरुष "सीसोद" निवासी थे, जिससे इनकी यह अल्ल पड़ी।

२ किसी किसी प्रति में इनका नाम "मालमकरद" लिखा है, पर शुद्ध यही माल मकरंद है, क्योंकि इतिहास में इनका नाम "मालो जी" दिया है। इनका जन्मकाल सन् १५५० था।

३ पानी। दान और कृपाण (बहादुरी) में जिसके मुँह पर सदा पानी (आब) रहता है।

४ निजामशाही बादशाह। मालो जी निजामशाही बादशाह के सहायक और मित्र थे।

५ मालोजी का "सर आह" खिताब था, इसी से "सरजा" निकला। प्रयोजन लब्धप्रतिष्ठ से है। भूषण इसे सिंह के अर्थ में भी लिखते हैं, क्योंकि यह भी वन का राजा है।

रन-भू सिला सु भौंसिला[1] आयुषमान खुमान[2] ॥८॥
भूपन भनि ताके भयो भुव-भूषन नृप साहि[3]।
रातौ दिन संकित रहैं साहि सबै जग माहि ॥९॥

कवित्त—मनहरण

एते हाथी दीन्हे मालमकरंद जू के नंद जेते गनि सकति

---

१ शिवाजी के घराने की "भौंसिला" उपाधि थी।

२ भूषण जी शिवराज को "सरजा, भौंसिला, खुमान" इत्यादि नामों से पुकारते हैं, सो इन उपाधियों की यहाँ पर इन्होंने व्युत्पत्ति सी की है।

३ शाहजी, महाराज शिवराज के पिता। भूषण जी महाराज शिवाजी को उदयपुर के सुप्रसिद्ध 'सीसोदिया" कुलोद्भव बतलाते हैं और यह ठीक भी जान पड़ता है। यद्यपि सुनते हैं कि आज कल कुछ अदूरदर्शी लोग भ्रमवश शिवाजी के वंशज महाराज कोल्हापुर को क्षत्रिय तक मानने में आनाकानी करते हैं, जिसका पूरा बखेड़ा ही उठ खड़ा हुआ है, पर टाड-कृत 'राजस्थान" में इनके वंश का "सीसोदिया" घराने से यों संबंध लिखा है—

"अजयसी (महाराजा उदयपुर सन् १३०१ ईसवी), सुजन जी, दलीप जी, सिव जी, भोरा जी, देवराज, उग्रसेन, माहोल जी, खेलो जी, जनको जी, सत्तो जी, संभा जी, शिवा जी।" (इण्डियन पबलीकेशन सोसायटी, कलकत्ता द्वारा सन् १८९९ ई० में बंगाल प्रेस में मुद्रित प्रति की जिल्द १ पृष्ठ २८२ देखिए) इसमें शिवजी के पिता का नाम शमा जी और मालो जी का माहोल जी लिखा है, कदाचित् उन महानुभावों के ये उपनाम हों। शाह जी सन् १५९४ में उत्पन्न होकर जनवरी १६६४ में स्वर्गगामी हुए।

बिरच हू की न तिया[1]। भूपन भनत जाकी साहिबी सभा के देखे लागैं सब और छितिपाल छिति मैं छिया[2] ॥ साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर, सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया। जाहिर जहान भयो साहिजू खुमान बीर साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया ॥ १० ॥

दोहा

दसरथ जू के राम भे बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के श्री सिवराज[3] भुवाल ॥ ११ ॥
उदित होत सिवराज के मुदित भये द्विजदेव।
कलियुग हट्यो मिट्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव ॥ १२ ॥

कवित्त—मनहरण

जा दिन जनम लीन्हो भू पर भुसिल[4] भूप ताही दिन जीत्यो अरि उर के उछाह को। छठी छत्रपतिन को जीत्यो भाग अनायास जीत्यो नामकरन में करन प्रवाह को ॥ भूपन भनत बाल लीला गढकोट जीत्यो साहि के सिवाजी करि चहूँ चक्र

---

१ बिरचि हू की तिया न = सरस्वती भी नहीं।

२ अत्यन्त मैले, तिरस्करणीय।

३ अर्थात् भौंसिला।

४ महाराज शिवाजी का जन्म काल १० अप्रैल सन् १६२७ और मृत्युकाल ५ अप्रैल सन् १६८० था।

साह को। बीजापुर गोलकुंडा जीत्यो लरिकाइ ही मैं ज्वानी आप जीत्यो दिलीपति पातसाह को ॥

दोहा

दच्छिन के सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार विलास।
सिव सेवक सिव गढपती कियो रायगढ़ बास[1] ॥ १४ ॥

अथ रायगढ़ वर्णन

मालती सवैया[2]

जा पर साहि तनै सिवराज सुरेस कि ऐसि सभा सुभ साजै। यों कवि भूषन जंपत[3] है लखि संपति को अलकापति लाजै ॥ जा मधि तीनिहु लोक कि दीपति ऐसो बड़ो गढराय

---

१ राजगढ़ को शिवाजी ने म्होरबुध पहाड़ी पर १६४७ ई० में बनाया था और १६६५ में उन्हें वह जयसिंह को दे देना पड़ा। शिवाजी के पश्चात् मरहटों ने इसे १६९२ ई० में फिर से जीत लिया। सन् १६६२ ई० में शिवाजी ने राजगढ़ छोड़ कर रायगढ़ को अपना वासस्थान बनाया। यह कदाचित् रायगढ़ ही का वर्णन है—भूमिका देखिए। यहीं शिवाजी अंत तक रहे।

२ इसमें सात भगण और दो अंतिम अक्षर गुरु होते हैं। इसका रूप यह है ("मुनिभगग" SIISIISIISIISIISIISIISS) भगण में एक गुरु और दो लघु अक्षर होते हैं। कड़ाई से देखने पर बहुत कम सवैया शुद्ध निकलेंगी, परन्तु छंद बिगड़ने में गुरु अक्षर को भी मृदु उच्चारण से लघु करके पढ़ लिया जाता है।

३ जाता है, बार बार कहता है।

विराजै। धारि पताल सी मानो मही अमरावति की छवि ऊपर छाजै॥ १५॥

हरिगीतिका छंद[1]।

मनिमय महल सिवराज के इमि रायगढ़[2] में राजहीं।
लखि जच्छ किन्नर असुर सुर गंधर्ब्ब हौंसनि साजहीं॥
उत्तंग मरकत[3] मंदिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं।
घन-समै[4] मानहु घुमरि करि घन घनपटल[5] गलगाजहीं[6]॥१६॥
मुकतान की झालरिन मिलि मनि माल छज्जा छाजहीं।
सन्ध्या समै मानहुँ नखत गन लाल अंबर राजहीं॥
जहँ तहाँ ऊरध उठे हीरा किरन घन समुदाय हैं।
मानो गगन तंबू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं॥ १७॥

---

१ इसका लक्षण यों है "जहँ पाँच चौकल बहुरि पद कल अंत एक गुरु आनिए। पद विरति नव मुनि भानु पर रचि कला सो रवि ठानिए।" इसमें २८ कला होती है और अंत का अक्षर गुरु होता है। सोलहवीं कला पर पहली यति और जैसा कि सभी छंदों में होता है, अंत में दूसरी यति पड़ती है।

२ छं० नं० १४ देखिए।   ३ नीलम।

४ समय पर अर्थात् ठीक समय अथवा वर्षा काल में।

५ दल, पटल।

६ गल = गले से अर्थात् जोर से। ग्राम्य भाषा में "गलगाजै" का अर्थ प्रसन्नतापूर्वक बोलने का लिया जाता है, सो भी यहाँ पर ठीक उतरता है।

भूषन भनत जहँ परसि के मुनि पुहुपरागन[1] की प्रभा ।
प्रभु पीत पट की प्रगट पावत सिंधु मेघन की सभा ॥
मुख नागरिन के राजहीं कहुँ फटिक महलन संग में ।
विकसत कोमल कमल मानहु अमल गंग तरंग में ॥१८॥
आनंद सों सुंदरिन के कहुँ बदन इंदु उदोत हैं ।
नभ सरित के प्रफुलित कुमुद मुकुलित कमल कुल होत हैं ॥
कहुँ बावरी सर कूप राजत बद्धमनिसोपान हैं ।
जहँ हंस सारस चक्रवाक विहार करत सनान हैं ॥१९॥
कितहूँ बिसाल प्रवाल जालन जटित अंगनि भूमि है ।
जहँ ललित बागनि द्रुमलतनि मिलि रहे झिलमिलि झूमि[2] है ॥
चंपा चमेली चारु चंदन चारिहू दिसि देखिए ।
लवली[3] लवंग यलानि[4] केरे लाखहों लगि लेखिए ॥ २० ॥
कहुँ केतकी कदली करौंदा कुंद अरु करवीर[5] हैं ।
कहुँ दाख[6] दाड़िम[7] सेव कटहल तूत अरु जंभीर हैं ॥
कितहूँ कदंब कदंब[8] कहुँ हिंताल[9] ताल तमाल[10] हैं ।

---

१ पुखराग अथवा पुखराज । २ झिलमिला प्रकाश ।

३ कोमल वल्कला, नेवाड़ी, एक फूल वृक्ष ।

४ एला, इलायची । ५ कनेर । ६ मुनक्का । ७ अनार ।

८ समूह ।

९ पुंगरोट वृक्ष ।

१० आबनूस ।

पीयूष तें मीठे फले कितहूँ रसाल[1] रसाल[2] हैं ॥ २१ ॥
पुन्नाग[3] कहुँ कहुँ नागकेसरि कतहुँ बकुल असोक हैं।
कहुँ ललित अमर गुलाब पाटल[4] पटल[5] बेला थोक हैं ॥
कितहुँ नेवारी माधवी[6] सिंगारहार[7] कहुँ लसैं।
जहँ भाँति भाँतिन रंग रंग बिहग आनंद सों रसैं ॥ २२ ॥

षट्पद

लसत बिहंगम बहु लवनित बहु भाँति बाग महँ।
कोकिल कीर कपोत केलि कल कल करत तहँ।
मंजुल महरि मयूर चटुल[8] चातक चकोर गन।
पियत मधुर मकरंद[9] करत झंकार भृंग घन ॥
भूपन सुवास फल फूल युत छहूँ ऋतु बसत बसंत जहँ।
इमि रायदुग्ग राजत रुचिर सुखदायक सिरराज कहँ ॥ २३ ॥

---

१ आम का पेड़।
२ रसीला।
३ देववल्लभ, एक बड़ा पुष्पवृक्ष।
४ गोला बिरंग, एक लाल और सफ़ेद फूल।
५ तरु।
६ चन्द्रवल्ली, एक लता।
७ हरसिंगार, एक पुष्पवृक्ष।
८ चंचल।
९ पुष्परस।

दोहा

तहँ नृप रजधानी[1] करी जीति सकल तुरकान।
सिव सरजा रुचि दान में कीन्हों सुजस जहान ॥ २४ ॥

अथ कविवंश वर्णन

देसन देसन तें गुनी आवत जाचन ताहि।
तिनमें आयो एक कवि भूषन कहियतु जाहि ॥ २५ ॥
दुज[2] कनौज कुल कस्यपी रतनाकर सुत धीर।
बसत तिविक्रमपुर सदा तरनितनूजा तीर ॥ २६ ॥
बीर बीरबर[3] से जहाँ उपजे कवि अरु भूप।
देव बिहारीश्वर जहाँ विश्वेश्वर तद्रूप ॥ २७ ॥
कुल सुलंक चितकूटपति साहस सील समुद्र।
कवि भूषन पदवी दई हृदयराम सुत रुद्र[4] ॥२८॥

---

१ सन् १६६२ से मरण पर्यंत शिवाजी की राजधानी रायगढ़ में रही।

२ इन दोहों से स्पष्ट है कि भूषण जी कान्यकुब्ज ब्राह्मण, कश्यपगोत्री (त्रिपाठी) श्री रत्नाकरजी के पुत्र, त्रिविक्रमपुर में यमुना जी के किनारे रहते थे जहाँ बीरबलजी हो गए थे और बिहारीश्वर ग्रामदेव थे। इसकी विशेष व्याख्या भूमिका में देखिए।

३ राजा बीरबल मौजा अकबरपुर बीरबल जिला कानपुर में उत्पन्न हुए थे। यह अकबरपुर तहसील अकबरपुर नहीं वरन् एक और गाँव यमुनाजी के किनारे है। भूमिका देखिए।

४ "हृदयराम" सुत "रुद्र" के विषय में स्फु० का० छं० नं० २ का नोट देखिए। गहोरा चित्रकूट से १२ मील पर है। हृदयराम गहोरा के शासक

सिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषन के चित्त।
भाँति भाँति भूषननि[1] सों भूषित करों कवित्त ॥२९॥
सुकविन हूँ की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ।
भूषन भूषनमय[2] करत "शिवभूषन" सुभ ग्रंथ ॥३०॥
भूषन सब भूषननि में उपमहि उत्तम चाहि।
याते उपमहि आदि दै बरनत सकल निबाहि ॥३१॥

अथ ग्रंथ प्रारंभ

उपमा

लक्षण-दोहा

जहाँ दुहुन की देखिए सोभा बनति समान।
उपमा भूषन ताहि को भूषन कहत सुजान ॥३२॥
जा को बरनन कीजिए सो उपमेय प्रमान।
जाकी सरबरि कीजिए ताहि कहत उपमान[2] ॥३३॥

थे। इनके राज्य में १०४३ ग्राम थे जिनकी वार्षिक आय बीस लाख रुपए थी। इनका राज्य सन् १६७१ के लगभग बुन्देला महाराज छत्रसाल ने छीन लिया था। रुद्र भी राजा हुए था नहीं, सो अज्ञात है। भूमिका देखिए।

१ अलंकारों।

२ यदि कहें "मुख चंद्र सा मनोहर है" तो "मुख" उपमेय होगा और "चंद्र" उपमान। उपमा में वाचक और धर्म (गुण) भी होते हैं सो यहाँ 'सा' वाचक है और 'मनोहर' धर्म है।

उदाहरण—मनहरण दंडक

मिलतहि कुरुख[1] चकत्ता[2] को निरखि कीन्हों सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराज को। भूषन कुमिस[3] गैरमिसिल[4] खरे किए को किये म्लेच्छ मुरछित करि कै गराज को॥ अरे ते गुसुलखाने बीच ऐसे उमराय लै चले मनाय महराज सिव राज को। दावदार निरखि रिसानो दीह दलराय जैसे गड़दार[5] अड़दार[6] गजराज को॥२४॥

अन्यत्र—मालती सवैया

सासता[7] खाँ दुरजोधन सो औ दुसासन सो

---

१ कुरुख कीन्हों=मुँह बिगाड़ दिया, क्रोधांध कर दिया।

२ चगताई के वंशज अर्थात् औरंगजेब को।

३ बुरे बहाने से।

४ अनुचित साथियों में (पंज हजारियों की पंक्ति में)।

५ वे सोंटेमार लोग जो मस्त हाथी को पुचकार कर आगे बढ़ाते हैं।

६ पेंड़दार, मस्त। इन दो पदों का आशय यह है कि शिवाजी को गुसलखाने में अड़ने (अर्थात् ठिठकने) देख (औरंगजेब पर जोखों आ जाने के भय से) दरबार के अमीर उमरा लोग उन्हें (अर्थात् शिवाजी को) यों मना ले चले जैसे किसी दावदार मस्त हाथी को मस्ताया हुआ देख सोंटेमार लोग पुचकार कर आगे ले चलते हैं। गुसलखाने के विषय पर भूमिका देखिए। यह घटना सन् १६६६ ईसवी की है।

७ शाइस्ताखाँ दिल्ली का एक बड़ा सरदार था। चाकन को जीतता हुआ वह पूना को विजय करके वहीं ठहरा। ५ अप्रैल की रात को शिवाजी केवल २००

जसवंत[1] निहारयो। द्रोन सो भाऊ[2] करण[3] करन सो और

योद्धाओं के साथ उनके महल में तरकीब से घुस गए और गड़बड़ में इन्होंने कई यवनों तथा शाइस्ताखाँ के लड़के को मार डाला। शाइस्ताखाँ जान बचाने को खिड़की से बाहर कूदने लगा कि शिवाजी ने दौड़ कर उसे एक तलवार मारी जिससे उसका सिर तो बच गया पर एक हाथ की कुछ उँगलियाँ कट गईं, किन्तु वह भाग गया। लौटते हुए हजारों दुश्मनों के बीच से शिवाजी केवल उन्हीं २०० आदमियों के साथ मशाल जलाए सिंहगढ़ चले गए। यह सन् १६६३ ईसवी का हाल है। शाइस्ताखाँ औरंगजेब का मामा था और पीछे बंगाल का गवर्नर हुआ था।

१ जसवंतसिंह मारवाड़ के महाराज थे। ये शाइस्ताखाँ के साथ सन् १६६१ ई० में दक्षिण गए थे। कहते हैं कि ये गुप्त रीत्या शिवाजी से मिल गए थे और इन्हीं की सलाह से शाइस्ताखाँ की दुर्गति हुई। पहले तो औरंगजेब ने शाइस्ताखाँ व जसवंत सिंह दोनों को वापस बुला लिया था, परंतु पीछे से शाइस्ताखाँ को बंगाल का गवर्नर करके भेज दिया और जसवंत को शाहजादा मुअज्जम की मातहती में फिर दक्खिन भेजा। जसवंतसिंह ने सन् १६६३ ई० में सिंहगढ़ घेरने का नाम मात्र प्रयत्न किया था, परंतु फिर उसे छोड़ दिया था (देखो शिवाबावनी छं० २८ "जाहिर है जग में जसवंत लियो गढ़ सिंह में गीदर बानो")। इन्हें सन् १६६५ में औरंगजेब ने वापस बुला लिया।

२ बूँदी के छत्रसाल (बुंदेलखंड के नामी छत्रसाल नहीं) के पुत्र भाऊसिंह। इतिहास में इनका किसी प्रसिद्ध युद्ध में शिवाजी से लड़ना नहीं पाया जाता, तो भी दक्षिण में ये औरंगजेब की ओर से अवश्य गए थे और अप्रसिद्ध युद्धों में शिवाजी से यह जरूर लड़े थे। ये बूँदी की गद्दी पर सन् १६५८ में बैठे थे और सन् १६८२ में औरंगाबाद में इनका शरीरान्त हुआ।

३ बीकानेर के महाराज रायसिंह के पुत्र महाराज करण सन् १६३२ ई० में गद्दी पर बैठे और लगभग १६७४ तक राज्य करते रहे। इनका दो हजारी मनसब था।

सबै दल सो दल भाख्यो ॥ ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि भूषन औनि छता यों पछाख्यो । पारथ कै पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय जयद्रथ[1] माख्यो ॥ ३५ ॥

लुप्तोमा

लक्षण-दोहा

उपमा वाचक पद, धरम, उपमेयो, उपमान ।
जामैं सो पूर्णोपमा लुप्त घटत लो मान ॥ ३६ ॥

उदाहरण-(धर्मलुप्ता)-मालती सवैया

पावक तुल्य अमीतन को भयो, मीतन को भयो धाम सुधा को[2] । आनँद भो गहिरो समुदै कुमुदावलि तारन को बहुधा को ॥ भूतल माहिँ बली सिवराज भो भूषन भाखत शत्रु सुधा[3] को । चंदन[4] तेज त्यों चदन[5] कीरति सोंधे सिँगार बधू बसुधा को ॥ ३७ ॥

अन्यच्च मनहरण

आए दरबार बिललाने छरीदार देखि जापता करनहारे

---

१ जयद्रथ दुर्योधन का बहनोई था । उसे अर्जुन ने शकट व्यूह के अदर घुस कर मारा था ।

२ चद्र पर उक्ति ।

३ फ़ुज़ूलियात, वाहियात बातें, झूठ । ४ ईंगुर ।

५ चाँदनी अथवा शीतल।

नेक हू न मनके¹। भूपन भनत भासिला के आय आगे ठाढे बाजे भए उमराय तुजुक² करन के ॥ साहि रह्यो जकि सिव साहि रह्यो तकि और चाहि रह्यो चकि बने ब्यौंत अनबन के। ग्रीषम के भानु सो खुमान को प्रताप देखि तारे सम तारे गए मूँदि तुरकन के ॥ ३८ ॥

अनन्वय

लक्षण—दोहा

जहाँ करत उपमेय को उपमेयै उपमान।
तह अनन्वै कहत हैं भूपन सकल सुजान ॥ ३९ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहि तनै सरजा तव द्वार प्रतिच्छन दान कि दुंदुभि बाजै। भूपन भिच्छुक भीरन को अति भोजहु ते बढ़ि मौजनि साजै ॥ रोजन को गन, राजन! को गनै? साहिन मैं न इती छवि छाजै। आजु गरीबनेवाज मही पर तो सो तुही सिवराज बिराजै ॥ ४० ॥

प्रथम प्रतीप

लक्षण—दोहा

जहँ प्रसिद्ध उपमान को करि बरनत उपमेय।
तहँ प्रतोप उपमा कहत भूपन कविता प्रेय ॥ ४१ ॥

---

१ चार न की, हिले तक नहीं। २ अदब।

उदाहरण-मालती सवैया

छाय रही जितही तितही अतिही छबि छीरधि रंग करारी।
भूषन सुद्ध सुधान के सौधनि[1] सोधति सी धरि ओप उज्यारी॥
यों तम तोमहि चाबिकै चंद चहूँ दिसि चाँदनि चारु पसारी।
ज्यों अफजल्लहि[2] मारि मही पर कीरति श्री सिवराज बगारी॥ ४२॥

द्वितीय प्रतीप

लक्षण-दोहा

करत अनादर वर्न्य[3] को, पाय और उपमेय।
ताहू कहत प्रतीप जे भूषन कविता प्रेय॥४३॥

उदाहरण-दोहा

शिव ! प्रताप तव तरनि सम, अरि पानिप हर मूल।
गरब करत केहि हेत है बड़वानल तो तूल[4] ॥४४॥

तृतीय प्रतीप

लक्षण-दोहा

आदर घटत अवर्न्य[5] को, जहाँ वर्न्य के जोर।

---

१ महलों को।

२ यह बीजापुरी सरदार था। विशेष हाल छंद नं० ६२ के नोट में देखिए। इस अवसर पर शिवाजी के साथ प्रधान लोगों में तानाजी मलूसरे, यशाजी कंक और जीव महालय थे। हाल सन् १६५९ ई० का है।

३ उपमेय। ४ तुल्य। ५ उपमान।

तृतिय प्रतीप बखानहीं तहँ कविकुलसिरमोर ॥४५॥

उदाहरण-दोहा

गरब करत कत चाँदनी हीरक छीर समान ।
फैली इती समाज गत कीरति सिवा खुमान ॥४६॥

चतुर्थ प्रतीप

लक्षण-दोहा

पाय बरन उपमान को, जहाँ न आदर ओर ।
कहत चतुर्थ प्रतीप हैं भूषन कवि सिरमौर ॥४७॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

चंदन मैं नाग, मद भरो इंद्र नाग, विष भरो सेसनाग कहै उपमा अबस को ? भोर ठहरात न कपूर बहरात, मेघ सरद उडात बात लागे दिसि दस को ॥ शंभु नील ग्रीव, भौंर पुंडरीक ही बसत, सरजा सिवा जी सन भूषन सरस को ? छीरधि मैं पंक, कलानिधि मैं कलंक, याते रूप एक टंक ए लहैं न तव जस को ॥ ४८ ॥

पंचम प्रतीप

लक्षण-दोहा

हीन होय उपमेय सों नष्ट होत उपमान ।
पंचम कहत प्रतीप तेहि भूषन सुकवि सुजान ॥४९॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

तो सम हो सेस सो तो बसत पताल लोक ऐरावत गज

सो तो इन्द्र लोक सुनियै। छुटे हस मानसर ताहि मैं कैलास धर सुधा सुरवर सोऊ छोड़ि गयो दुनिये॥ सूर दानी सिरताज महाराज सिवराज रावरे सुजस सम आजु काहि गुनियै? भूषन जहाँ लौं गनो तहाँ लौं भटकि हार्यो लखिये कछू न केती बातें चित चुनिये ॥ ५० ॥

अपरंच-मालती सवैया

कुंद कहा पय वृंद कहा अरु चंद कहा सरजा जस आगे?। भूषन भानु कृसानु कहाब[1] खुमान प्रताप महीतल पागे?॥ राम कहा द्विजराम कहा बलराम कहा रन मैं अनुरागे?। बाज कहा मृगराज कहा अति साहस मैं सिवराज के आगे?॥५१॥

यौं सिवराज को राज अडोल कियो सिव जोय[2] कहा ध्रुव[3] धू[4] है?। कामना दानि खुमान लये न कछू सुर-रूख न देव गऊ है? भूषन भूषन मैं कुल भूषन भौंसिला भूप धरे सब भू है। मेरु कछू न कछू दिगदंति न कुंडलि[5] कोल कछू न कछू है ॥ ५२ ॥

---

१ कहा अब।

२ जो अब।

३ निश्चय करके।

४ ध्रुव नक्षत्र।

५ सर्प, यहाँ शेष जी।

उपमेयोपमा

लक्षण—दोहा

जहाँ परस्पर होत है उपमेयो उपमान।
भूषन उपमेयोपमा ताहि बखानत जान ॥ ५३ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

तेरो तेज, सरजा समत्थ ! दिनकर सो है, दिनकर सोहै तेरे तेज के निकर सो। भौसिला भुवाल ! तेरो जस हिमकर सोहै हिमकर सोहै तेरे जस के अकर[1] सो ॥ भूषन भनत तेरो हियो रतनाकर सो रतनाकरो है तेरे हिय सुखकर सो। साहि के सपूत सिव साहि दानि ! तेरो कर सुरतरु सोहै, सुरतरु तेरे कर सो ॥ ५४ ॥

मालोपमा

लक्षण—दोहा

जहाँ एक उपमेय के होत बहुत उपमान।
ताहि कहत मालोपमा भूषन सुकवि सुजान ॥ ५५ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

इंद्र जिमि जंभ पर बाडव सुअंभ पर रावन सदंभ पर रघुकुल राज है। पौन बारिबाह[2] पर संभु रतिनाह पर ज्यौं

---

१ आकर, कान (खानि)।
२ बादल।

सहसबाहु पर राम द्विजराज है ॥ दावा द्रुम दंड पर चीता मृगझुंड पर भूषन वितुंड पर जैसे मृगराज है । तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर त्यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज है ॥ ५६ ॥

ललितोपमा

लक्षण-दोहा

जहँ समता को दुहुन की लीलादिक पद होत ।
ताहि कहत ललितोपमा सकल कविन के गोत ॥५७॥
विहसत, निदरत, हँसत जहँ छवि अनुसरत बखानि ।
सत्रु मित्र इमि औरऊ लीलादिक पद जानि ॥ ५८ ।

उदाहरण-कवित्त मनहरन

साहि तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरुवारी सुर की सभा को निदरति है । भूषन भनत जाके एक एक सिखर ते केते धौं नदी नद की रेल[1] उतरति है । जोन्ह को हँसति जोति हीरा मनि मंदिरन कंदरन मैं छवि कुहू[2] कि उछरति है । ऐसो ऊँचो दुरग महाबली[3] को जामैं नखतावली सौं बहस दिपावली धरति है ॥ ५९ ॥

---

१ रेला, बड़ा बहाव ।

२ अमावस्या की (अर्थात् कंदरों से अमावस्या की छवि उछल जाती है या भाग निकलती है, अर्थात् उनका अँधेरा दूर हो जाता है) ।

३ बड़ा बलवान अर्थात् शिवाजी ।

रूपक

लक्षण-दोहा

जहाँ दुहुन को भेद नहिं बरनत सुकवि सुजान।
रूपक भूषण ताहि को भूषण करत बखान[1] ॥६०॥

उदाहरण-छप्पय

कलिजुग जलधि अपार उद्ध अधरम्म ऊर्म्मि[2]मय। लच्छनि लच्छ मलिच्छ कच्छ अरु मच्छ मगर चय॥ नृपति नदीनद वृंद होत जाको मिलि नीरस। भनि भूषन सब भुम्मि घेरि किन्निय सुअप्प बस॥ हिंदुवान पुन्य गाहक बनिक तासु निबाहक साहि सुव[3]। बर बादवान किरवान धरि जस जहाज सिवराज तुव॥ ६१॥

साहिन मन समरत्थ जासु नवरंग[4] साहि सिरु। हृदय जासु अब्बास साहि[5] बहुबल बिलास थिरु॥ एदिल[6] साहि

---

१ भूषणजी ने रूपक का वही लक्षण दिया है जो अन्य कवियों ने "अभेद रूपक" का दिया है। रूपक का लक्षण रघुनाथ कवि का बहुत उत्तम है—"विषई जहाँ अभेद है विषय जहाँ तद्रूप"।

२ ऊर्मि, लहर। ३ सुत।

४ औरंगजेब, दिल्ली का सुप्रसिद्ध बादशाह।

५ यह उस समय फारस का बादशाह था। इसी से इसको "हृदय" कहा गया है। इसका शाहजहाँ और औरंगजेब से मेल और लिखा पढ़ी थी।

६ आदिल शाह बीजापुर के बादशाहों की पदवी थी। इनके यहाँ शिवाजी के पिता शाहजी भोंसिला नौकर थे, पर शिवाजी ने युद्ध ठान दिया और इन्हें खूब ही छकाया।

कुतुब्ब[1] जासु जुग भुज भूषन भनि। पाय म्लेच्छ उमराय काय तुरकानि आन गनि॥ यह रूप अवनि अवतार धरि जेहि जालिम जग दण्डियव। सरजा सिव साहस खग्ग गहि कलिजुग सोइ खल खण्डियव॥ ६२॥

अपरंच—कवित्त मनहरन

सिंह[2] थरि जाने बिन जावली जंगल भटी हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो। भूषन भनत देखि भभरि भगाने सब हिम्मत हिये में धारि काहुवै न हटक्यौ॥ साहि के सिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा मदगल अफजलै[3] पंजा बल पटक्यो।

---

१ कुतुब शाह गोलकुंडा के "बादशाह" की पदवी थी। दक्षिण में पाँच खुदमुख्तार "बादशाहियाँ" थीं, अर्थात् बीदर, अहमदनगर, एलिचपुर, बीजापुर और गोलकुंडा। प्रथम तीन को औरंगजेब ने सिंहासन पर बैठने के पहले ही जीत लिया और अंतिम दो को १६८८ ई० में छीन लिया। इनको शिवाजी ने खूब ही सताया था।

२ जावली देश के जंगल को सिंह के रहनेवाली भट्ठी न जान कर हठी आदिलशाह हाथी रूपी अफजलखाँ को भेज कर चूक गया। थरि = सिंह की भट्ठी।

३ अफजलखाँ एक बीजापुरी सरदार था और आदिल शाह की ओर से शिवाजी से लड़ने गया था। युद्ध के पहले ही अफजल खाँ ने शिवाजी के पिता को अपना मित्र मानला कर उनसे कहला भेजा कि "तुम हमारे मित्र-पुत्र अर्थात् भतीजे हो, इससे हम से अकेले आकर मिलो। फिर चाहे लड़ना चाहे साथ करना"। शिवाजी यह विचार कर कि कदाचित् अफजल कोई छल करे, सादे कपड़ों के नीचे

ता विगिर¹ है करि निकाम निज धाम कह आकुत² महाउत सुअंकुस लै सटक्यो ॥ ६३ ॥

रूपक के दो अन्य भेद (न्यूनाधिक)

लक्षण–दोहा

घटि बढि जहँ बरनन करै करिकै दुहुन अभेद ।
भूषन कवि औरो कहत द्वै रूपक के भेद ॥६४॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहि तनै सिवराज भूषण सुजस तव बिगिर कलंक चंद उर आनियतु है । पंचानन एक ही बदन गनि तोहि गजानन गज बदन बिना बखानियतु है ॥ एक सीस ही सहससीस कला करिबे को दुहूँ दृग सों सहसदृग मानियतु है । दुहूँ कर

जिरहबखतर पहिन कर और व्याघ्रनख छिपा कर उससे मिलने गए। अफ़ज़ल ने भेंटने के बहाने से शिवाजी को बगल में ज़ोर से दबा कर कटार से मारना चाहा, पर शिवाजी बच गए और उन्होंने व्याघ्रनख से अफ़ज़ल की पसली नोच ली (छंद नं० २५२ देखिए) और तलवार से उसका काम तमाम किया। उन्होंने पहले ही से अपनी सेना लगा रक्खी थी, सो एक दम वह अफ़ज़ल की फौज पर टूट पड़ी और उसे तितर बितर कर दिया। यह घटना सन् १६५६ ईस्वी की है।

१ बगैर, बिना।

२ याकूत खाँ इतिहास में कई थे। एक याकूत खाँ शाहजहाँ का सरदार था। यहाँ बीजापुरी सरदार उस सिद्दी कासिमयाकूत खाँ से प्रयोजन है जो सन् १६७१ में शिवाजी की सेना से दण्डराजपुर में लड़ा था।

सों सहसकर मानियतु तोहि दुहूँ बाहु सों सहसबाहु जानियतु है ॥ ६५ ॥

जेते हैं पहार भुव माहिँ पारावार तिन सुनि कै अपार कृपा गहे सुख फैल है। भूपन भनत साहि तनै सरजा के पास आइबे को चढी उर हौंसनि की पेल[1] है ॥ किरवान वज्र सों विपच्छ्छ करिबे के डर आनिकै कितेक आए सरन की गैल है। मघवा[2] मही मैं तेजवान सिवराज वीर कोट करि सकल सपच्छ किए सैल हे ॥ ६६ ॥

परिणाम

लच्छण—दोहा

जहँ अभेद करि दुहुन सों करत और स्वे[3] काम।
भनि भूपन सब कहत हैं तासु नाम परिनाम ॥ ६७ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

भौंसिला भूप बली भुव को भरु भारी भुजंगम सों भुज लीनो। भूपन तीखन तेज तरन्नि सों वैरिन को कियो पानिप हीनो ॥ दारिद दौ[4] करि बारिद सों दलि त्यों धरनीतल

---

१ पेल = वृथा (ग्राम्य भाषा "अहिलो")।

२ इंद्र ने पहाड़ों के पंख वज्र से काट डाले थे, उसी पर उक्ति है।

३ अपना।

४ दौरदा, सूखे जंगल में चारों तरफ से लगने वाली आग। (दरिद्र रूपी दौरदा को गज (दान) रूपी मेघ से नाश करके)।

सीतल कीनो। साहितनै फुल चंद सिवा जस चद सों चांद कियो छुवि छीनो ॥ ६८ ॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

घोर बिजैपुर के उजोर निसिचर गोलकुडावारे घूघू ते उड़ाए हैं जहान सों। मंद करी मुजरुचि चंद चकता की, कियो भूषन भूषित द्विज चक्र खानपान सों ॥ तुरकान मलिन कुमुदिनी करी है हिंदुवान नलिनी खिलायो विविध विधान सों। चारु सिव नाम को प्रतापो सिव साहि सुर तापी सब भूमियों कृपान भासमान सों ॥ ६९ ॥

उल्लेख

लक्षण—दोहा

कै बहुते कै एक जहँ एक वस्तु को देखि।
बहु विधि करि उल्लेख हैं सो उल्लेख उलेखि ॥ ७० ॥

उदाहरण—मालती सवैया

एक कहे कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै। एक कहैं अवतार मनोज को यों तन में अति सुंदरता है। भूषन एक कहैं महि इंदु यों राज विराजत बाढ़्यो महा है। एक कहैं नरसिंह है संगर एक कहैं नरसिंह सिवा है ॥ ७१ ॥

पुनरपि यथा—मनहरण दंडक

कवि कहे करन,[1] करनजीत[2] कमनैत, अरिन के उर

१ कर्ण (बड़ा दानी था)।
२ अर्जुन जिसने कर्ण जैसे महावीर को जीत लिया।

मा द की-ह्यो इमि छेन है। कहत धरेस सब धराधर सेस वैसो और 'धराधरन को मेह्यो अहमेव है ॥ भूपन भनत महाराज सिवराज तेरो राज काज देखि कोऊ पावत न भेव है। कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहै, वहरी निजाम के जिनैया कहैं देव है ॥ ७२ ॥

पैज प्रतिपाल भूमिभार को हमाल[1] चहुँ चक्क को अमाल[2] भयो दंडक जहान को। साहिन को साल भयो ज्वाल को जवाल भयो हर को कृपाल भयो हार के विधान को ॥ बीर रस ख्याल सिवराज भुवपाल तुव हाथ को विसाल भयो भूपन बखान को ? तेरो करवाल भयो दच्छिन को ढाल भयो हिंदु को दिवाल भयो काल तुरकान को ॥ ७३ ॥

स्मृति

लक्षण—दोहा

सम सोभा लखि आन की सुधि आवति जेहि ठौर ।
स्मृति भूपन तेहि कहत हैं भूपन कवि सिरमौर ॥७४॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

तुम सिवराज ब्रजराज अवतार आजु तुमही जगत काज पोषत भरत हौ। तुम्हैं छोडि याते काहि विनती सुनाऊँ मैं तुम्हारे गुन गाऊँ तुम ढीले क्यों परत हौ ? ॥ भूपन भनत

---

१ बोझ उठानेवाला, हामिल।

२ आमिल, हाकिम।

बँहिकुल¹ मैं नयो गुनाह नाहक समुझि यह चित मैं धरत हौ। और बाँभनन देखि करत सुदामा सुधि मोहिं देखि काहे सुधि भृगु की करत हौ ? ॥ ७५ ॥

भ्रम

लक्षण—दोहा

आन बात को आन मैं होत जहाँ भ्रम आय ।
तासों भ्रम सब कहत हैं, भूषन सुकवि बनाय ॥ ७६ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

पीय पहारन पास न जाहु यों तीय बहादुर सौं कहै सोपे ।
कौन बचैहै नबाब तुम्हैं भनि भूषन भौंसिला भूप के रोपै ? ॥
बंदि सहस्तखँह को कियो जसवंत से भाऊ करन्न² से छोपै ।
सिंह सिवा के सुबीरन सौं गो अमीर न बाचि गुनीजन चोपै³ ॥ ७७ ॥

---

१ वंस (ब्राह्मण अर्थात् भृगु जी के) कुल में । भूषण कहते हैं कि मुझपर ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने का नया गुनाह आप लगाते हैं और विष्णु के अवतार होने के कारण मुझ पर आप नाराज होते हैं, क्योंकि भृगु जी ने विष्णु जी को लात मारी थी।

२ करणसिंह बीकानेर के महाराज थे। ये दो हजारी थे। इनका युद्ध शिवाजी से सन् १६५७ में अहमदनगर में हुआ था। ये कारतलब खाँ तथा खान दौरां नौरोरी खाँ के साथ सेनानायक थे।

३ घेपणा करता है।

संदेह

लक्षण—दोहा

कै यह कै वह यों जहाँ होत आनि संदेह ।
भूषन सो संदेह है या मैं नहिं संदेह ॥७८॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

आवत गुसुलखाने ऐसे कछु त्योर ठाने जाने अवरंग जू के प्रानन को लेवा है। रस खोट[1] भए ते अगोट आगरे में सातौ चौकी डाँकि आनि घर कीन्हीं हद रेवा है॥ भूषन भनत वह चहूँ चक्क चाहि कियो पातसाहि चकता की छाती माहिं छेवा है। जान्यो न परत ऐसे काम है करत कोऊ गंधरब देवा है कि सिद्ध है कि सेवा है ॥ ७९ ॥

शुद्ध अपन्हुति = शुद्धापन्हुति

लक्षण—दोहा

आन बात आरोपिए साँची बात दुराय ।
शुद्धापन्हुति कहत हैं भूषन सुकवि बनाय ॥८०॥

---

१ रस खोटा होना (औरंगजेब ने जिन बातों से शिवाजी को बुलाया था उनका पालन न होने से रस जाता रहा और आगरे में [illegible] कर शिवाजी ने औरंगजेब की सातों चौकियाँ लाँघ कर रेवा (नर्मदा नदी) पार आ उसी को अपने राज्य की सीमा बनाया ।

उदाहरण—मनहरण दंडक

चमकती चपला न, फेरत फिरंगै[1] भट इंद्र को न चाप रूप बैरष[2] समाज को। धाए धुरवा न, छाए धूरि के पटल, मेघ गाजियो न बाजिबो है दुन्दुभि दराज को॥ भौंसिला के डरन डरानी रिपुरानी कहैं, पिया भजौ, देखि उदौ पावस के साज को। घन की घटा न, गज घटनि सनाह साज भूषण भनत आयो सेन सिवराज को॥ ८१॥

हेतु अपन्हुति = हेत्वपन्हुति

लक्षण—दोहा

जहाँ जुगुति सौं आन को कहिए आन छपाय।
हेतु अपन्हुति कहत हैं ताकहँ कवि समुदाय॥८२॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा के कर लसै सो न होय किरवान।
भुज भुजगेस भुजंगिनी भखति पौन अरि प्रान॥८३॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

भाखत सकल सिव जी को करवाल पर भूषन कहत यह करि कै विचार को। लीन्हो अवतार करतार के कहे तें कलि म्लेच्छन हरन उद्धरन भुव भार को॥ चडी है घुमडि अरि चंड मुंड चावि करि पीवत रुधिर कछु लावत न बार को। निज

---

१ शायद भाला या विलायती तलवार।

२ झंडी।

भरतार भूत भावन की भूख मेटि भूपित करत भूतनाथ भरतार को ॥ ८४ ॥

पर्यस्त अपन्हुति = पर्यस्तापन्हुति[१]

लक्षण—दोहा

वस्तु गोय ताको धरम आन वस्तु मैं रोपि ।
पर्यस्तापन्हुति कहत कवि भूषन मति घोपि ॥ ८५ ॥

उदाहरण—दोहा

काल करत कलिकाल मैं नहिँ तुरकन को काल ।
काल करत तुरकान को सिव सरजा करवाल ॥८६॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

तेरे ही भुजान पर भूतल को भार कहिबे को सेसनाग दिग्नाग हिमाचल है। तेरो अवतार जग पोसन भरनहार कछु करतार को न तामधि अमल है ॥ साहिन मैं सरजा समत्थ सिवराज कवि भूषन कहत जीबो तेरोई सफल है। तेरो करवाल करै म्लेच्छन को काल बिनु काज होत काल बदनाम धरातल है ॥ ८७ ॥

---

१ इस अलंकार में सिवाय लक्षण में दी हुई बातों के यह भी आवश्यक है कि एक पद दोहरा कर आवे। कवि के उदाहरण में यह बात विद्यमान है, पर लक्षण से छूट रही है।

भ्रांत अपन्हुति = भ्रांतापन्हुति

लक्षण—दोहा

संक आन को होत ही जहँ भ्रम कीजे दूरि ।
भ्रांतापन्हुति कहत हैं तहँ भूषन कवि भूरि ॥८८॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहितनै सरजा के भय सों भगाने भूप मेरु में लुकाने ते लहत जाय थोत[1] हैं। भूषन तहाऊँ मरहट्टपति के प्रताप पावत न कल अति कौतुक उदोत हैं ॥ "सिव आयो सिव आयो" संकर के आगमन सुनि कै परात ज्यों लगत अरि गोत हैं[2]। "सिव सरजा न यह सिव है महेस" करि यौंहीं उपदेस जच्छ रच्छक से होत हैं ॥ ८९ ॥

पुन —मालती सवैया

एक[3] समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधाए। "आवत है सरजा सम्हरौ" एक ओर ते लोगन बोल जनाए ॥ भूषन भो भ्रम औरँग के सिव भौंसिला भूप कि धाक धुकाए । धायकै "सिंह" कह्यो समुझाय करौलनि[4] आय अचेत उठाए ॥ ९० ॥

---

१ ओट, घर।

२ गोत। ३ भयानक रस।

४ शिकार खेलानेवाले।

छेक अपन्हुति = छेकापन्हुति

लक्षण—दोहा

जहाँ और को संक करि साँच छिपावत बात।
छेकापन्हुति कहत हैं भूषन कवि अवदात ॥६१॥

उदाहरण—दोहा

तिमिर बंस हर अरुन कर आयो, सजनी भोर?
सिव सरजा, चुप रहि सखी, सूरज-कुल सिरमोर ॥६२॥
दुरगहि बल पंजन प्रबल सरजा जिति रन मोहिं।
औरँग कहै देवान सों सपन सुनावत तोहिं ॥६३॥
सुनि सु उजीरन यों कह्यो "सरजा, सिव महराज?"
भूषन कहि चकता सकुचि 'नहिं', सिकार मृगराज"॥६४॥

कैतव अपन्हुति = कैतवापन्हुति

लक्षण—दोहा

जहँ कैतव[१], छल, ब्याज मिसि इन सों होत दुराव।
कैतवपन्हुति ताहि सों भूषन कहि सतिभाव ॥ ६५ ॥

उदाहरण—कवित्त दंडक (मनहरण)

साहिन[२] के सिच्छक सिपाहिन के पातसाह संगर में सिंह

---

१ धोखा।

२ भयानक रसपूर्ण। कवि गोविंद गिल्ला भाई जी की हस्तलिखित प्रति में यह छंद पर्यायोक्ति के उदाहरण में दिया गया है, पर अन्य सभी प्रतियों में कैतवा-

फैसे जिनके सुमार हैं। भूषन भनत सिव सरजा की धाक ते वै काँपत रहत चित गहत न चाव हैं॥ अफजल की अगति सासता की अपगति बहलोल[1] विपति सों डरे उमराव हैं।

पह्नुति ही के उदाहरण में पाया जाता है। पर्यायोक्ति में भिस गौण रूप से होता है, प्रकट नहीं जैसा कि इस छंद में है, पर कैतवापह्नुति में वह प्रकट ही होता है।

१ बहलोल खाँ सन् १६३० ई० में निजामशाही बादशाह के यहाँ था और शाहजहाँ बादशाह की सेना इसे न दबा सकी। सन् १६६१ में इसने बीजापुर सरकार की सेवा ग्रहण कर ली और शिवाजी से युद्ध करने को यह भेजा गया। इस बीच में सिद्दी जौहर नामक सेनापति बीजापुर सरकार से बिगड़ खड़ा हुआ और बहलोल ने (जिसका पूरा नाम अब्दुलकरीम बहलोल खाँ था) उसे परास्त किया। मार्च सन् १६७३ में इसे खवास खाँ वजीर ने शिवाजी से लड़ने को भेजा। पहले इसने पनाले पर मरहठों को मुगलों की सहायता से हराया, किन्तु पीछे से उसी युद्ध में स्वयं शिवाजी ने आकर इसे हराकर पनाला छीन लिया। थोड़े ही दिनों में पनाला वापस लेने को यह फिर मरहठों से लड़ने गया परन्तु मरहठों ने इसे घेर कर खूब ही तंग किया और बड़ी कठिनाई से उनका पिंड छोड़ा (उन्होंने इसे वास्तव में बंदी नहीं बना पाया जैसा कि छंद नं० ३५ में लिखा है)। फरवरी मार्च सन् १६७४ में इसे शिवाजी के सेनापति हसाजी मोहिते ने जेसारी पर हराया। सन १६७५ में बहलोल के इशारे से खवास खाँ मार डाला गया और उसके ठौर बहलोल बीजापुर के नाबालिग बादशाह का वली (Regent) बनाया गया। इसने खानजहाँ बहादुर को परास्त कर मुगलों से

पक्का मतो करिकै मलिच्छ मनसब छोड़ि मक्का ही के मिस[1] उतरत दरियाव हैं ॥ ९६ ॥

साहि तनै सरजा खुमान सलहेरि[2] पास कीन्हों कुरुखेत खीझि मीर अचलन सों। भूषन भनत बलि करी है अरीन धर

मेल किया। सन १६७७ में शिवाजी ने कुतुबशाह से मेल किया जिसमें एक शर्त यह भी थी कि बहलोल बीजापुर के राज्याधिकार से हटा दिया जाय। इस पर बहलोल मुगल सरदार खानजहाँ बहादुर को साथ ले कुतुबशाह पर चढ़ धाया, पर उसे मदन्न पंत ने, जो कुतुबशाह का वजीर था, घोर युद्ध करके परास्त किया। छंद न० १६१ और २१६ देखिये। सन १६७७ में यह मरा भी।

१ शिवा जी मक्का जानेवाले सैयदों को प्राय नहीं सताते थे।

२ सलहेरि के किले को शिवा जी के प्रधान मंत्री मोरोपंत ने १६७१ ई० में जीत लिया था। तभी से इस पर शिवा जी का अधिकार हुआ। दूसरे ही साल १६७२ ई० में दिल्ली के सेनापति दिलेरखाँ (जिसे लोग दलेल खाँ भी कहते हैं) और खाँजहाँबहादुर ने इसे घेरा और शिवा जी ने मोरोपंत और प्रतापराव गूजर के आधिपत्य में एक महती सेना उससे लड़ने को भेजी। ये सेनापति स्वयं तो न लड़े पर इन्होंने इखलास खाँ को एक बहुत बड़ी सेना सहित लड़ने को भेजा। इस बड़े ही विकट संग्राम में मुगलों को बड़ी हानि पहुँची और उनके मुख्य सेनानायकों में से २२ मारे गए और अनेक बंदी हुए एवं समस्त सेना एकदम तितर बितर हो गई। तभी तो भूषण जी ने इसका ऐसा मथकर वर्णन भी किया है (छंद न० २२६, २६२, ३३१, ३५५ एवं शिवाबावनी के न० २५ व २६)।

धरनी पै डारि नभ प्रान दै बलन सों ॥ अमर[१] के नाम के बहाने गो अमरपुर चन्दावत लरि सिवराज के दलन सों। कालिका प्रसाद के बहाने ते खवायो महि बाबू उमराव राव पसु के छलन सों ॥ ९७ ॥

उत्प्रेक्षा

लक्षण—दोहा

आन बात को आन मैं जहँ संभावन होय।
वस्तु, हेतु, फल जुत कहत उत्प्रेक्षा है सोय ॥९८॥

उदाहरण। वस्तूत्प्रेक्षा—मालती सवैया

दानव आयो दगा करि जावली[२] दीह भयारो महामद भाख्यो। भूषन बाहुबली सरजा तहि भेटिबे को निरसंक पधाख्यो ॥ बीछू के घाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही सिवराज निहाख्यो। दाबि यों बैठो नरिंद अरिंदहि मानो मयंद गयंद पछाख्यो ॥ ९९ ॥

---

१ अमरसिंह चन्दावत भी इसी युद्ध में मारा गया था। यह भारी सरदार था। भूषण जी ने बराबर इसके विषय में सम्मानपूर्वक लिखा है और शिवा जी की प्रशंसा करते हुए यहाँ तक कहा है कि "हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोउ टूटै" (छंद नं० १५५, २२५, २३६, २७८, देखिए)। मेवाड़ (उदयपुर) के प्रसिद्ध चन्दा जी के वंशधर लोग "चन्दावत" कहलाते हैं।

२ अफजलखाँ जावली में मारा गया था।

साहि तनै सिवसाहि निसा में निसाँक लियो गढ़सिंह[1] सोहानो। राठिवरो को सँहार भयो लरिकै सरदार गिरयो

---

१ इसका नाम पहले कोंडाने था, पर जब यह किला १६४७ में शिवा जी के अधिकार में आया, तब उन्होंने इसका नाम सिंहगढ़ रख दिया। १६६५ में शिवाजी ने इसे जयसिंह को दे दिया। यह सह्याद्रि पर्वतमाला के पूरबी किनारे पर था जहाँ से पुरंधर पहाड़ी दक्षिण (Deccan) की ओर मुड़ जाती है। यह बड़ा ही अभेद्य दुर्ग था, पर शिवाजी को दबकर इसे जयसिंह को देना ही पड़ा। सन् १६७० ई० की माघ बदी ६ की रात को इसे फिर जीत लेने के लिये शिवाजी के बहादुर सरदार वीरवर तानाजा ने तैयारी की। इस अवसर पर शिवाजी ने, जो किलेदार उदयभानु राठौर को बहादुरी को भली भाँति जानते थे, अपने दरबार में पान का बीड़ा रख कर अपने सरदारों से कहा था कि "कौन ऐसा वीर है जो यह बीड़ा उठावे और उदयभानु से लड़कर सिंहगढ़ छीन ले?" किसी की हिम्मत न पड़ी पर ताना जी ने बीड़ा उठाया। यह बात सुनकर उनके भाई शैलार (उपनाम सुरबाजी) ने उसे समझाया कि उदयभानु बड़ा वीर है पर जब ताना जा ने एक न मानी तब शैलर भी उसके साथ हो लिया और दोनों भाई सेना सहित किले पर जा टूटे। तीन सौ मरहठे किले के ऊपर पहुँच गए और तब उदयभानु को इसका पता लगा। बस फिर क्या था, घोर युद्ध प्रारंभ हुआ जिसमें उदयभानु के साथी भाग निकले। तब उदयभानु ने तानाजी को द्वंद युद्ध के लिये ललकारा और बहादुरी के जोश में तानाजी अपने साथियों को पीछे छोड़ अकेला ही उससे जा भिड़ा पर दुर्भाग्यवश ये दोनों लड़ कर मर गये। तब तो बड़े वेग से शैलर ससैन्य जा टूटा और इसने सारी सेना का काम ही तमाम कर दिया तथा

उदैभानौ॑ ॥ भूपन यों घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो मसानौ। ऊँचे[२] सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात की मानौ ॥ १०० ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

दुरजनदार भजि भजि वेसम्हार चढ़ीं उत्तर पहार[३] डरि सिवजी नरिंद ते। भूपन भनत विन भूपन वसन, साधे भूखन पियासन हैं नाहन को निंदते॥ वालक अयाने वाट बीचही विलाने कुम्हिलाने मुख कोमल अमल अरविंद ते। दृगजल[४] कज्जल कलित बढ़्यो कढ़्यो मानो दूजा सोत तरनितनूजा को कलिंद[५] ते ॥ १०१ ॥

अपरंच—दोहा

महाराज सिवराज तव सुघर धवल धुव किच्चि।
छवि छटान सों छुवति सी छिति अंबर दिग भित्ति॥१०२॥

किला मरहटों के हाथ लगा। जब शिवाजी ने यह समाचार सुना, तब उन्होंने बड़े शोक में आकर कहा कि "भट्ठी तो मिली पर हाय! सिंह (ताना जी एवं उदयभानु) जाते रहे।" यह किला तब से सदा शिवाजी के पास रहा।

१ उदयभानु किलेदार जिसका हाल पिछले पृष्ठ के नोट में लिखा गया है।

२ इस युद्ध में तानाजी मलुसरे किले के छज्जों से आँगन में ससैन्य कूदा था।

३ हिमाचल।

४ भयानकरसपूर्ण। उस समय की कठोरता को देखिए कि कोमलचित्त ब्राह्मण होकर भी भूषण जी को बेचारे बालकों पर भी दया न आई और उनकी महा दुर्गति का आप कैसे आनन्दपूर्वक वर्णन कर रहे हैं।

५ वह पहाड़ जिससे यमुनाजी निकली है। इसीसे उनका नाम कालिंदी है।

हेतूत्प्रेक्षा—कवित्त मनहरण

लूट्यो खानदौरा[1] जोरावर[2] सफजंग[3] अरु लह्यो कार-
तलबखाँ[4] मनहुँ अमाल है। भूषन भनत लूट्यो पूना मैं
सइस्तखान[5] गढ़न मे लूट्यो त्यों गढोइन[6] को जाल है॥
हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार घेरि घेरि लूट्यो सब कटक

---

१ खानदौरां को शाहजहां ने १६३४ ई० में दक्षिण का सूबेदार नियत किया था। बादशाह की ओर से उसने बीजापुरवालों से युद्ध कर लाभदायक संधि की। बाद को औरंगजेब ने इसे इलाहाबाद का किला जीतने भेजा था। इसका नाम नौशेरी खाँ था (छंद नं० २०७ देखिए) पर मुगलों के लिये अनेक किले जीतने पर इसे खानदौरां की पदवी मिली। यह सन १६५० में अहमदनगर में शिवाजी से लड़ा था।

२ यह नाम इतिहास में नहीं मिलती। या तो यह शब्द विशेषण मात्र है अथवा इस नाम का कोई साधारण सरदार होगा।

३ और ४ कारतलबखाँ सन् १६५४ में अहमद नगर पर शिवाजी से लड़ा था। किसी किसी प्रति में पाठ कार के स्थान पर मार है, पर शुद्ध कार ही समझ पड़ता है। सफजंग का नाम छत्र प्रकाश में छत्रसाल जी से लड़नेवालों में लिखा है। यह दिल्ली का सरदार था और इसका ठीक नाम सफदरजंग था। इसका कोई युद्ध शिवाजी से नहीं मिलता।

५ शाइस्ता खाँ (छंद नं० ३५ नोट देखिए)।

६ गढ़पतियों अथवा किलेदारों को।

कराल है। मानो हय हाथी उमराव करि साथी अवरंग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाल' है ॥ १०३ ॥ १

फलोत्प्रेक्षा—मनहरण दण्डक

जाहि पास जात सो तौ राखि ना सकत याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है। भूषन भनत सिवराज तव कित्ति सम और की न कित्ति कहिबे को कॉधियतु है ॥ इंद्र कौ अनुज तें उपेंद्र अवतार याते तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है। पाय तर आय नित निडर बसायबे को कोट बाँधियतु मानो पाग बाँधियतु है ॥ १०४ ॥

दोहा

दुवन सदन सब के बदन सिव सिव आठो याम।
निज बचिबे को जपत जनु तुरकौ हर को नाम ॥१०५॥

गमगुप्तोत्प्रेक्षा (गम्योत्प्रेक्षा)

लक्षण—दोहा।

माना इत्यादिक बचन आवत नहिं जेहि ठौर।
उत्प्रेक्षा गम गुप्त सो भूषण कहत अमौर ॥१०६॥

उदाहरण—मनहरण

देखत ऊँचाई उदरत' पाग, सूधी राह ढोल हू मे चढ़ै ते

---

१ दरमाह, खिराज, या जो किसी के पास भेजा जावे।

२ गिरती है उतरती है।

जे साहस निकेत हैं। सिवाजी हुकुम तेरो पाय पैदलन सलहेरि परनालो[1] ते वै जीते जनु[2] खेत हैं ॥ सावन भादों की भारी कुहू की अँध्यारी चढ़ि दुग्ग पर जात मावलीदल[3] सचेत हैं। भूपन[4] भनत ताकी बात मैं विचारी तेरे परताप रवि की उज्यारी गढ़ लेत हैं ॥१०७॥

पुनः दोहा

और गढोई नदी,नद सिव गढपाल दरयाव[5]।
दौरि दौरि चहुँ ओर ते मिलत आनि यहि भाव ॥१०८॥

---

१ यह किला १६५९ के अन्त में शिवाजी के अधिकार में आया। बीजापुर की ओर से सिद्दी जौहर ने इसे मई १६६० में फिर छीन लेने के विचार से घेरा, पर यह सफल मनोरथ न हुआ। तब स्वयं बीजापुराधीश ने १६६१ में इसे घेर कर जीत लिया, परन्तु शिवाजी ने इसे मार्च १६७३ ई० में फिर से छीनकर अपने अधिकार में कर लिया। सन १६७६ में एक बार शिवाजी ने इसे फिर खोया और जीता।

२ जैसे साफ मैदान हो। अर्थात् इतने ऊँचे किलों पर पैदल गए यों चढ़ गए जैसे कोई समथल भूमि पर दौड़े।

३ पहाड़ी देश के रहनेवाले शिवाजी के पैदल सिपाही।

४ इस छंद में गम्योत्प्रेक्षा अलंकार बहुत साफ नहीं है, किंतु निकल आता है।

५ समुद्र।

रूपकातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

ज्ञान करत उपमेय को जहँ केवल उपमान।
रूपकातिशय-उक्ति सो भूषन कहत सुजान ॥ १०९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

वासव से विसरत विक्रम की कहा चली, विक्रम लखत बीर बखत बुलंद के। जागे तेज वृंद सिवा जी नरिंद मसनंद माल मकरंद कुलचंद साहिनंद के॥ भूषन भनत देस देस वैरि नारिन मैं होत अचरज घर घर दुख दंद के। कनकलतानि[1] इंदु, इंदु माहिं अरविंद, झरैं अरविंदन ते बुंद मकरंद के॥११०॥

भेदकातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जेहि थर आनहि भाँति की बरनत बात कछूक।
भेदकातिसय-उकि सो भूषन कहत अचूक ॥१११॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

श्रीनगर[2] नयपाल जुमिला[3] के छितिपाल भेजत रिसा-

---

१ सोने की बाँहों (सी देह) में चन्द्रमा (सा मुख), चन्द्रमा (से मुख) में कमल (से नेत्र) और कमन (जैसे नेत्रों) से मकरंद (के समान आँसू) बूँद झर रही है।

२ काश्मीर की राजधानी।

३ इस नाम के किसी स्थान का पता नहीं चलता। एक स्थान जलना

ल[१] चौर यह कुही बाज की। मेवार[२], ढुँढार[३] मारवाड़[४] औ बुंदेलखंड[५] भारखंड[६] बाँधौ धनी[७] चाकरी इलाज की ॥ भूषन जे पूरब पछाँह नरनाह ते वै ताकत पनाह दिलीपति सिरताज की। जगत को जैतवार जीत्यो अवरंगजेब न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की ॥ ११२ ॥

था जो औरंगाबाद के पूरब की ओर जयदेव राय मनसबदार दिल्ली के देश में बसा था। अथवा यह फारसी शब्द जुमला (अर्थात् सब कहीं के) हो सकता है।

१ हरसाल, खिराज।

२ उदयपुर की रियासत।

३ रियासत अंबर अर्थात् जयपुर।

४ रियासत जोधपुर।

५ इसमें अब चार सरकारी जिले झाँसी, बाँदा, हमीरपुर और जालौन, एवं जिला इलाहाबाद की तीन तहसीलें और २०–२२ देशी रियासतें हैं। छत्रसाल के पिता चंपतिराय ने कुछ दिनों मुगलों की सेवा स्वीकार की थी और बुंदेलखंड के अन्य सरदार भी औरंगजेब के वशीभूत हो गए थे। इसका विस्तृत हाल भूमिका में देखिए।

६ उड़ीसा में गोंड़वाने के पूरब में है। इस उड़ीसा को कासी कहते हैं, क्योंकि यहाँ पहले संस्कृत की बड़ी चर्चा थी।

७ बांधव का राजा। भूषण जी का तात्पर्य यह है कि इतने इतने नामी देशों के राजा महाराज औरंगजेब को कर देते, उसकी सेवा तक स्वीकार करते एवं उसकी शरण में रहते थे, पर शिवाजी का ढंग कुछ न्यारा ही था। वे बादशाह की बिल्कुल परवा न करते और उनसे सदा लड़ाई झगड़ा करते थे।

अक्रमातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु अरु काज मिलि होत एक ही साथ।
अक्रमातिसय-उक्ति सो कहि भूषन कविनाथ ॥ ११३ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

उद्धत अपार तव दुंदुभी धुकार सग लघैं पारावार बाल वृंद रिपुगन के। तेरे चतुरग के तुरगन के रँगेरज[1] साथही उड़ात रजपुंज[2] हैं परन[3] के॥ दच्छिन के नाथ सिवराज! तेरे हाथ चढ़ैं धनुष के साथ गढ़ कोट दुरजन के। भूषन असीसैं, तोहिं करत कसीसैं[4] पुनि बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के ॥ ११४ ॥

चंचलातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु चरचाहि मैं काज होत ततकाल।
चंचलातिसय-उकि सो भूषन कहत रसाल ॥ ११५ ॥

---

१ घोड़ों के धूल से रँग जाने से अर्थात् धावे के लिए चलने ही से।

२ राज्यश्री का ढेर।

३ शत्रुओं के। इस पद में पूरा भयानक रस है।

४ कशिश करते ही अर्थात् बाण खींचते ही।

उदाहरण—दोहा

आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नावँ।
वैरि नारि दृग जलन सौं बूडि जात अरि गावँ॥ ११६॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

गढनेर[1] गढ[2] चाँदा[3] भागनेर[4] बीजापुर नृपन कि नारी रोय हाथन मलति हैं। करनाट[5] हबस[6] फिरंगहू[7] विलायत[8]

---

१ व २ गढनेर अर्थात् नगरगढ नामक एक देश कड़ा मानिकपुर के समीप था जिसमें पहाड़ियाँ और जंगल बहुत थे। इसे मुगलों ने १५६० में जीत लिया।

३ इसे मरहठों ने अपने अधिकार में कर लिया था और अंत को कर्नल ऐडम्स ने उनसे मई सन् १८१८ में जीत लिया।

४ भागनेर अर्थात् भागनगर को गोलकुंडावाले मुहम्मद कुतुबुल्मुल्क ने अपनी प्रिय पत्नी भागमती के नाम पर चार मील पर बसाया था। यही वर्तमान हैदराबाद शहर है।

५ करनाटक पर शिवाजी ने १६७६–७८ ई० में धावा किया था। यहाँ पर उस धावे का कथन नहीं है वरन् केवल आतंक का है। कर्नाटक दो थे, एक पूर्वी और दूसरा पश्चिमी। पूर्वी करनाटक पर सन् १६७६–७८ में धावा हुआ था, किंतु पश्चिमी पर सन् १६७३ के पूर्व कई बार लूट पाट तथा धावे हुए थे।

६ हबशियों का स्थान अबिसीनिया।

७ योरप अथवा बाहर का देश फिरंगाना।

८ मुसलमानों की विलायत (अफगानिस्तान, तुर्किस्तान, फारस इत्यादि)।

बलख[1] रूम[2] अरितिय छतियाँ दलति हैं ॥ भूषन भनत साहि तनै सिवराज एते मान तव धाक आगे दिसा उबलति हैं। तेरी चमू चलिबे की चरचा चले ते चक्रवर्तिन की चतुरंग चमू बिचलति हैं ॥ ११७ ॥

अत्यंतातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु ते प्रथम ही प्रगट होत है काज।
अत्यतातिसयोक्ति सो कहि भूषन कविराज ॥ ११८ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

मंगन मनोरथ के प्रथमहि दाता तोहिं कामधेनु कामतरु सो गनाइयतु है। याते तेरे गुन सब गाय को सकत कवि, बुद्धि अनुसार कछु तऊ गाइयतु है ॥ भूषन भनत साहि तनै सिवराज निज बखत बढ़ाय करि तोहि ध्याइयतु है। दीनता को डारि औ अधीनता बिडारि दीह दारिद को मारि तेरे द्वार आइयतु है ॥ ११९ ॥

पुन—दोहा

कवि तरुवर सिव सुजसरस सींचे अचरज मूल।
सुफल होत है प्रथम ही पीछे प्रगटत फूल[3] ॥ १२० ॥

---

१ अफगानिस्तान का एक प्रसिद्ध शहर।

२ टरकी।

३ फूलना, प्रसन्नता। श्लेष में कथन है।

सामान्य विशेष

लक्षण-दोहा

कहिवे जहँ सामान्य है कहै जु तहाँ विशेष।
सो सामान्य विशेष है बरनत सुकवि अशेष॥ १२१॥

उदाहरण-दोहा

और नृपति भूषन कहैं करैं न सुगमौ काज।
साहि तनै सिव सुजस तो करै कठिनऊ आज॥ १२२॥

पुनः—मालती सवैया

जीति लई बसुधा सिगरी घमसान घमंड कै बीरन हू की। भूषन भौंसिला छीन लई जगती उमराव अमीरन हू की॥ साहि-तनै सिवराज कि धाकनि छूटि गई धृति धीरन हू की। मीरन के उर पीर बढ़ी यौं जु भूलि गई सुधि पीरन हू की॥ १२३॥

तुल्ययोगिता

लक्षण-दोहा

तुल्यजोगिता तहँ धरम जहँ बरन्यन[1] को एक।
कहुँ अबरन्यन[2] को कहत भूषन बरनि बिबेक॥ १२४॥

उदाहरण-मनहरण दंडक

चढ़त तुरंग चतुरंग साजि सिवराज चढ़त प्रताप दिन

---

१ उपमेयों का।

२ उपमानों का।

दिन अति जग मैं। भूपन चढत मरहट्टन के चित्त चार खग्ग खुलि चढत हे अरिन के अग मैं॥ भोसिला के हाथ गढ कोट हैं चढत अरिजोट हैं चढत एक[1] मेरु गिरि खृग मैं। तुरकान गन व्योमयान हैं चढत बिनु मान है चढ़त बदरंग[2] अवरंग मैं॥ १२५॥

अन्यच्च-दोहा

सिव सरजा भारी भुजन भुव भरु धर्‌यो सभाग।
भूपन अब निहचिंत हैं सेसनाग दिगनाग॥ १२६॥

द्वितीय-लक्षण दोहा

हित अनहित को एक सो जहँ बरनत व्यवहार।
तुल्यजोगिता और सो भूपन ग्रंथ विचार॥ १२७॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

गुनन[3] सौं इनहूँ को बाँधि लाइयतु पुनि गुनन[4] सौं उनहूँ को बाँधि लाइयतु है। पाय[5]गहि इनहूँ को रोज ध्याइयतु अरु पाय[6]गहि उनहूँ को रोज ध्याइयतु है॥ भूपन भनत

---

१ अरिन के जोड़े एक होकर अर्थात् बहुत से अरि साथ साथ।

२ बिनमाा औरंग में बदरंग चढ़ता है।

३ गुण अर्थात् अपने अच्छे गुणों के कारण।

४ रस्सियों से।

५ पैर छूकर।

६ पाकर, पकड़ कर।

महराज सिवराज रस रोस तो हिये मैं एक भाँति पाइयतु है। दोहाई[1] कहे ते कवि लोग ज्याइयतु अरु दोहाई[2] कहे ते अरि लोग ज्याइयतु है ॥ १२८ ॥

दीपक

लक्षण—दोहा

वर्न्य अवर्न्यन को धरम जहँ बरनत हैं एक।
दीपक ताको कहत हैं भूषन सुकवि विवेक ॥ १२९ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

कामिनि कंत सों जामिनि चंद सों दामिनि पावस मेघ घटा सों। कीरति दान सों सूरति ज्ञान सों प्रीति बड़ी सनमान महा सों ॥ भूषन भूषन सों तरुनी नलिनी नव पूषनदेव[3] प्रभा सों। जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिंदुवान खुमान सिवा सों ॥ १३० ॥

दीपकावृत्ति

लक्षण—दोहा

दीपक पद के अरथ जहँ फिरि फिरि करत बखान।
आवृति दीपक तहँ कहत भूषन सुकवि सुजान ॥ १३१ ॥

---

१ दोहा (छंद) कहने से।

२ दोहाई करने से, शरण आने से।

३ सूर्य्य देवता।

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव दान को करि को सकत बखान ?
बढ़त नदीगन दान जल उमडत नद गजदान ॥ १३२ ॥

पुन—मालती सवैया

चक्कवती चकता चतुरंगिनि चारिउ चापि लई दिसि चक्का। भूप दरीन दुरे भनि भूषन एक अनेकन बारिधि नक्का॥ औरँग साहि सों साहि को नंद लरो सिव साहि बजाय कै डंका। सिंह की सिंह चपेट सहै गजराज सहै गजराज को धंका॥ १३३॥

अन्यच—मनहरण दंडक

अटल रहे हैं दिगअंतन के भूप धरि रैयति को रूप निज देस पेस करि कै। राना[1] रह्यो अटल बहाना करि चाकरी को बाना तजि भूषन भनत गुन भरि कै॥ हाडा[2] रायठौर[3] कछवाहे[4] गौर[5] और रहे अटल चकत्ता को चमाऊ[6] धरि डरि कै।

---

१ महाराणा उदयपुर।

२ हाडा क्षत्रिय बूँदी और कोटा में राज्य करते हैं।

३ जोधपुर के महाराज।

४ कछवाहे अर्थात् कुशवंशी क्षत्रिय जैसे अम्बर (जयपुर) वाले।

५ गौरों की रियासत छोटी थी जिसकी राजधानी सुपुर (राजपूताना) में थी। सिंधिया ने उसके बहुतेरा पर कब्जा कर लिया। पृथ्वीराज के समय में गौर राजाओं का बड़ा मान और प्रभुत्व था। ६ चँवर।

अटल सिवाजी रह्यो दिल्ली को निदरि धीर धरि ऐंड धरि तेग धरि गढ धरि कै ॥ १३४ ॥

प्रतिवस्तूपमा

लक्षण-दोहा

'वाक्यन को जुग होत जहँ एकै अरथ समान ।
जुदो जुदो करि भाषिए प्रति वस्तूपम जान ॥ १३५ ॥

उदाहरण—लीलावती छंद[1]

मद जल धरन द्विरद बल राजत, बहु जल धरन जलद छवि साजै। पुहुमि धरन फनि नाथ लसत अति, तेज धरन ग्रीषम रवि छाजै ॥ खग्ग धरन सोभा वहँ राजत, रुचि भूषन गुन धरन समाजै। दिल्लि दलन दच्छिन दिसि थंभन, ऐंड[2] धरन सिवराज बिराजै ॥ १३६ ॥

दृष्टांत

लक्षण-दोहा

जुग वाक्यन को अरथ जहँ प्रतिबिंबित सो होत ।
तहाँ कहत दृष्टांत हैं भूषन सुमति उदोत ॥ १३७ ॥

---

१ इसका लक्षण यह है—"लघुगुरु को जहँ नेम नहिं बत्तिस कल सब जान ।
तरल तुरंगम चाल सो लीलावती बखान ॥"

२ "ऐंड एक सिवराज निबाही । करै आपने चित [illegible] आठ पातसाही
झकझोरै । सूबन पकरि दण्ड लै छोरै ॥" (अनर्घ [illegible]

उदाहरण-दोहा

सिव ! औरंगहि जिति सकै और न राजा राव।
हत्थिमत्थ पर सिंह बिनु आन न घालै घाव ॥ १३८ ॥
चाहत निरगुन सगुन को ज्ञानवंत गुनधीर।
यही भाँति निरगुन गुनिहि सिवा नेवाजत वीर ॥ १३९ ॥

पुन—मालती सवैया

देत तुरी गन गीत सुने बिनु देत करी गन गीत सुनाए।
भूषन भावत भूप न आन जहान खुमान कि कीरति गाए॥
मगन को भुवपाल घने पै निहाल करै सिवराज रिझाए। आन
ऋतैं बरसैं सरसै उमड़ैं नदियाँ ऋतु पावस पाए[1] ॥ १४० ॥

निदर्शना[2]

लक्षण-दोहा

सदृश वाक्य जुग अरथ को करिए एक अरोप।
भूषन ताहि निदर्शना कहत बुद्धि दे ओप ॥ १४१ ॥

उदाहरण-मालती सवैया

मच्छहु कच्छ मैं कोल नृसिंह मैं बावन मैं भनि भूषन जो

१ इस छंद से विदित होता है कि भूषणजी ने शिवराज से बहुत कुछ दान पाया था।

२ दृष्टांत और निदर्शना में भेद यह है कि पहले में वाचक नहीं होता, पर दूसरे में होता है। प्रतिवस्तूपमा और इन दोनों में यह अन्तर है कि उसमें दोनों समवाक्य स्वतंत्र होते हैं, पर इन दोनों में नहीं होते।

है। जो द्विजराम में जो रघुराम में जोव कह्यो बलरामहु को है॥ बौद्ध में जो अरु जो कलकी महँ विक्रम ह्वैबे को आगे सुनो है। साहस भूमि-अधार सोई अब श्री सरजा सिवराज में सो है॥ १४२॥

अपरंच—कवित्त मनहरण

कीरति सहित जो प्रताप सरजा में वर मारतंड माँझ तेज चाँदनी सो जानी मैं। सोहत उदारता औ सीलता खुमान में सो कंचन में मृदुता सुगंधता बखानी मे॥ भूषन कहत सब हिंदुन को भाग फिरै चढे ते कुमति चकता हू की निसानी मैं। सोहत सुबेस दान कीरति सिवा में सोई निरखी अनूप रुचि मोतिन के पानी मैं॥ १४३॥

अन्यच्च-दोहा

औरन को जो जनम है, सो याको यक रोज।
औरन को जो राज सो, सिव सरजा की मौज॥ १४४॥
साहिन सों रन माँडिबो कीबो सुकबि निहाल।
सिव सरजा को ख्याल है औरन को जजाल॥ १४५॥

व्यतिरेक[1]

लक्षण—दोहा

सम छबिवान दुहून में, जहँ बरणन बढ़ि एक।
भूषण कबि कोविद सबै, ताहि कहत व्यतिरेक॥ १४६॥

---

१ इसमें अन्य कवि प्राय उपमेय उपमान का भी संबंध जोड़ते हैं।

उदाहरण—छप्पय

त्रिभुवन मैं परसिद्ध एक अरि बल वह खंडिय।
यहि अनेक अरि बल विहंडि रन मंडल मंडिय॥
भूषन वह ऋतु एक पुहुमि पानिपहि बढावत।
यह छहु ऋतु निसि दिन अपार पानिप सरसावत॥
सिवराज साहि सुव सत्य नित हय गय लक्खन संचरइ।
यकइ गयंद यकइ तुरँग किमि सुरपति सरवरि करइ॥१४७॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

दावन[1] दुगुन दुरजोधन ते अवरंग भूषन भनत जग राख्यो छल मढ़ि के। धरम धरम, बल भीम, पैज अरजुन, नकुल अकिल, सहदेव तेज चढ़ि कै॥ साहि के सिवाजी गाजी, करचो आगरे में चंड पांडवनहू ते पुरुषारथ सुबढि कै। सूने लाख भौन ते कढे वै पाँच राति, तैंजु धोस लाख चौकी ते अकेलो आयो कढि कै॥१४८॥

सहोक्ति

लक्षण—दोहा

वस्तुन को भासत जहाँ, जन रंजन सह भाव।

---

१ दुर्योधन ने छल से पांडवों को लाक्षागृह में जलाने का प्रबंध किया था। सो धमराज के धर्म, भीमसेन के बल, अर्जुन की पैज, नकुल की बुद्धि और सहदेव के तेज से पांडवों का उद्धार हुआ। इसी पर उक्ति करके कवि सिवाजी के दिल्ली से निकल आने पर उनकी तुलना पाँचो भाइयों से करता है।

ताहि सहोक्ति बखानहीं, जे भूषन कबिराव ॥ १४९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

छूट्यो है हुलास आमखास एक संग छूट्यो हरम सरम एक संग बिनु ढंग ही। नैनन[1] ते नीर धीर छूट्यो एक संग छूटो सुख रुचि मुख रुचि त्योंही बिन रंग ही॥ भूषन बखाने सिवराज मरदाने तेरी धाक बिललाने न गहत बल अंग ही। दक्खिन को सूबा पाय दिल्ली के अमीर तजैं उत्तर को आस जीव आस एक संग ही॥ १५० ॥

विनोक्ति

लक्षण—दोहा

बिना कछू जहँ बरनिए कै हीनो कै नीक।
ताको कहत विनोक्ति है कवि भूषन मति ठीक ॥ १५१ ॥

उदाहरण—दोहा

सोभमान जग पर किए सरजा सिवा खुमान।
साहिन सों बिनु डर अगड[2] बिनु गुमान को दान ॥१५२॥

पुन—मालती सवैया

को कविराज विभूषन होत बिना कवि साहितनै को कहाए?। को कविराज सभाजित होत सभा सरजा के बिना गुन गाए?॥ को कविराज भुवालन भावत भौंसिला के मन

१ भयानक रसपूर्ण।

२ अकड़।

मैं बिनु भाए ?। को कविराज चढ़ै गज बाजि सिवाजि कि मौज मही बिनु पाए ?॥ १५३॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

बिना लोभ को बिवेक बिना भय युद्ध टेक साहिन सों सदा साहि तनै सिरताज के। बिना ही कपट प्रीति बिना ही कलेस जीति बिना ही अनीति रीति लाज के जहाज के॥ सुकवि समाज बिन अपजस काज भनि भूषन भुसिल[1] भूप गरीबनेवाज के। बिना ही भुराई ओज बिना काज घनो फौज बिना अभिमान मौज राज सिवराज के॥ १५४॥

कीरति को ताजी करी बाजि चढ़ि लूटि कीन्हीं भई सब सेन बिनु बाजी बिजैपुर[2] की। भूषन भनत भौंसिला भुवाल धाक ही सों धीर धरत्री[3] न फौज कुतुब के धुर की॥ सिंह उदैभान बिन अमर सुजान बिन मान बिन कीन्ही साहियी त्यों दिलीपुर की। साहिसुव महाबाहु सिवाजी सलाह बिन कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी॥ १५५॥

समासोक्ति

लक्षण—दोहा[4]

बरनन[4] कीजै आन को ज्ञान आन को होय।

---

१ भौंसिला। २ बीजापुर। ३ धरैगी (बुंदेलखंडी बोली)।

४ यह लक्षण असमथ है। प्रस्तुत के वर्णन में जहाँ अप्रस्तुत की स्फुर्ति मात्र हो, वहाँ समासोक्ति अलंकार होता है।

समासोकि भूपन कहत कवि कोविद सब कोय ॥ १५६ ॥

उदाहरण—दोहा

बड़ो डील लखि पील[1] को सबन तज्यो बन थान।
धनि सरजा तू जगत में ताको हर्यो गुमान ॥१५७॥
तुही साँच द्विजराज है तेरी कला प्रमान।
तो पर सिव किरपा करी जानत सकल जहान ॥ १५८ ॥

अपरंच—कवित्त मनहरण

उत्तर पहार विधनोल[2] खँडहर[3] झारखंडहु[4] प्रचार चारु केली है विरद की। गोर[5] गुजरात अरु पूरब पछाँह ठौर जंतु जंगलीन की बसति मारि रद की ॥ भूपन जो करत न जाने बिनु घार सोर भूलि गयो आपनी ऊँचाई लखे कद की। खोइयो प्रबल मदगल गजराज एक सरजा सों बैर कै बड़ाई निज मद की ॥ १५९ ॥

---

१ हाथी, यहाँ औरंगजेब।

२ इसका नाम बिदरूर या बिदनूर भी था। यह मंगलोर (मैसूर) के पास इसी नाम के प्रांत की राजधानी थी। इसे शिवाजी ने सन् १६६४ में जीता था।

३ चंबल और नर्मदा के बीच सुलतानपुर के समीप एक कस्बा।

४ छंद नं० ११२ का नोट देखिए।

५ गोर नामक शहर अफगानिस्तान में था जहाँ से शहाबुद्दीन गोरी आया था।

परिकर—परिकरांकुर

लक्षण—दोहा

साभिप्राय विसेषननि भूषन परिकर मान।
साभिप्राय विसेष्य ते परिकर अंकुर जान॥ १६०॥

उदाहरण। परिकर। कवित्त मनहरण

बचैगा न समुहाने बहलोलखाँ[1] अयाने भूषन बखाने दिल आनि मेरा बरजा। तुझ ते सवाई तेरा भाई[2] सलहेरि पास कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा॥ साहिन के साहि उसी औरँग के लीन्हे गढ़ जिसका तू चाकर औ जिसकी है परजा। साहिकाललन दिलीदलका दलन अफजल का मलन सिवराज आया सरजा॥ १६१॥

जाहिर जहान जाके धनद समान पेखियतु पासवान यों खुमान चित चाय हैं। भूषन भनत देखे भूख न रहत सब

---

१ छंद ६६ का नोट देखिए। बहलोल औरंगजेब का चाकर या प्रजा न था। एक बहलोल नामक छोटा सरदार दिल्ली का भी था। बीजापुरी बहलोल दो बार मुगलों की सहायता लेकर शिवाजी से लड़ कर हारा था। इसी से व्यंग्य से भूषण उसे दिल्ली का चाकर और प्रजा कहते हैं, मानो वह अपने स्वामी बीजापुर-नरेश की भक्ति न करके दिल्ली की करता था।

२ यह कौन भाई था, सो अज्ञात है। सम्भवतः बहलोल का सगा, चचेरा, ममेरा, मौसेरा, पगड़ी बदल आदि भाइयों में से कोई बड़ा भाई सलहेरि के युद्ध में पकड़ा गया होगा।

आपही सों जात दुख दारिद बिलाय हैं॥ खीझे ते खलक माहिं खलभल डारत है रीझे ते पलक माहिं कीन्हे रंक राय हैं। जग जुरि अरिन के अग को अनंग कीवो दीबो सिव साहब के सहज सुभाय हैं ॥ १६२ ॥

अन्यच्च—दोहा

सूर सिरोमनि सूर कुल सिव सरजा मकरंद ।
भूषन क्यों औरँग जिते कुल मलिच्छ कुल चंद ॥१६३॥

परिकरांकुर—दोहा

भूषन भनि सबही तबहिं जीत्यो हो जुरि जंग ।
क्यों जीते सिवराज सों अब अंधक[1] अवरंग ? ॥१६४॥

श्लेष

लक्षण—दोहा

एक बचन में होत जहँ बहु अर्थन को ज्ञान ।
स्लेस कहत हैं ताहि को भूषन सुकबि सुजान ॥१६५॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सीता[2] संग सोभित सुलच्छन[3] सहाय जाके भूपर

---

१ अंधक दैत्य को शिव (शंकरजी) ने मारा था।

२ सीता जी संग हैं अथवा श्री अर्थात् लक्ष्मी सा (उसके) संग है।

३ लक्ष्मणजी अथवा सु (सुंदर) लक्षण अर्थात् गुण।

भरत[1] नाम भाई[2] नीति चारु है। भूषन भनत कुल सूर कुल भूषन हैं दासरथी[3] सब जाके भुज भुव भारु है॥ अरि लंक[4] तोर जोर जाके संग बानर[5] रहे सिंधुर[6] हैं बाँधे जाके दल को न पारु है। तेगहि[7] कै भेंटे जौन[8] राकस मरद जाने सरजा सिवाजी राम ही को अवतारु है॥ १६६॥

पुन

देखत सरूप को सिहात न मिलन काज जग जीतिबे की जामैं रीति छल बल की। जाके पास आवै ताहि निधन करति वेगि भूषन भनत जाकी संगति न फल की॥ कीरति कामिनि राची सरजा सिवा की एक बस कै सकै न बस करनी सकल

---

१ भरतजी अथवा भरता है नाम अर्थात् नाम व्याप्त करता है।

२ भाई अर्थात् भ्राता अथवा भायी अर्थात् पसन्द आई।

३ दशरथजी के पुत्र अथवा सब रथी जिसके दास (हैं)।

४ लंका अथवा कमर।

५ बानर अर्थात् बंदर हैं अथवा बाण रहैं।

६ सिंधु अर्थात् समुद्र बाँधा रहे (सेतु बंधन) अथवा सिंधुर अर्थात् हाथी बाँधे रहें।

७ ते गहि अर्थात् उन्हें पकड़ कर अथवा तलवार ही से।

८ जौन राकस मरद जानै अर्थात् जो राक्षसों को मर्दना जानता है अथवा जो नर (मनुष्य) अकस (शत्रु) बन बनता है उसे तेगहा से भेंटता है अर्थात् मार डालता है। इस कविता के अर्थ चाहे राम पक्ष में लगाइए चाहे शिवाजी पर।

की। चचल सरस एक काहू पै न रहै दारी[1] गनिका समान सुबेदारी दिली दल की ॥ १६७ ॥

अप्रस्तुत प्रशंसा

लक्षण—दोहा

प्रस्तुत लीन्हे होत जहँ, अप्रस्तुत परसंस।
अप्रस्तुत परसंस सो कहत सुकवि अवतंस ॥ १६८ ॥

उदाहरण—दोहा

हिंदुनि सों तुरकिनि कहैं तुम्हैं सदा संतोष।
नाहिन तुम्हरे पतिन पर सिव सरजा कर रोष ॥ १६९ ॥
अरितिय भिल्लिनि सों कहैं धन धन जाय इकंत।
सिव सरजा सों वैर नहिं सुखी तिहारे कंत ॥ १७० ॥

पुनः मालती सवैया

काहु पै जात न भूषन जे गढपाल कि मौज निहाल रहे हैं।
आवत हैं जु गुनी जन दच्छिन भौंसिला के गुन गोत लहे हैं॥
राजन राव सबै उमराव खुमान कि धाक धुके यों कहे हैं।
सक नहीं, सरजा सिवराज सों आजु दुनी में गुनी निरमै हैं ॥ १७१ ॥

---

१ छिनाल स्त्री। इस छंद को गणिका एवं दक्षिण की सूबेदारी दोनों ही पक्षों में ले सकते हैं।

पर्य्यायोक्ति

लक्षण—दोहा

बचनन की रचना जहाँ बर्णनीय पर आनि।
परजायोकति कहत हैं भूषन ताहि बखानि॥ १७२॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

महाराज सिवराज तेरे बैर देखियतु घन बन है रहे हरम हबसीन के। भूषन भनत तेरे बैर रामनगर[1] जवारि[2] पर बह-बहे रुधिर नदीन के॥ सरजा समत्थ बीर तेरे बैर बीजापुर बैरी बैयरनि[3] कर चीन्ह न चुरीन के। तेरे रोस देखियत आगरे दिल्ली में बिन सिंदूर के बुंद मुख इंदु जमनीन[4] के॥ १७३॥

---

१ इस नाम के कई नगर हैं। यह रामनगर कदाचित् रामगिरि एवं रामगढ़ के निकटवाला है। इसी को रामनेर भी कहा है।

२ छं० नं० २०६ देखिए। शिवाजी ने सन् १६७१ में एक रामनगर जीता तथा दूसरे साल अन्य रामनगर तथा जौहर राज्य जीते।

३ स्त्रियों के (पच्छिमी बोली)।

४ इस छंद में मुसलमानों की स्त्रियों के मस्तक पर सिंदूर का अभाव दिखला कर उनकी वैधव्यावस्था व्यंजित की गई है। अब कुछ मुसलमानों के यहाँ ब्याह के दिन सिंदूर के बुंदे से सोहाग लिया जाता है, पर तत्पश्चात् उसका व्यवहार नहीं होता। उन दिनों सम्भव है कि मुसलमानों में भी सधवा स्त्रियाँ सदा सिंदूर लगाती हों।

व्याजस्तुति

लक्षण—दोहा

सुस्तुति में निंदा कढ़ै निंदा में स्तुति होय।
व्याजस्तुति ताको कहत कवि भूषन सब कोय ॥ १७४ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

पीरी पीरी ह्वै तुम देत हौ मँगाय हमैं सुवरन[1] हम सौं परखि करि लेत हौ। एक पलही मैं लाख[2] रूखन सौं लेत लोग तुम राजा ह्वै कै लाख दीबे को सचेत हौ॥ भूषन भनत महराज सिवराज बड़े दानी दुनी ऊपर कहाए केहि हेत हौ ?। रीझि हँसि हाथी[3] हमैं सब कोऊ देत कहा रीझि हँसि हाथी एक तुमहियै देत हौ ? ॥ १७५ ॥

तू तो रातो दिन जग जागत रहत वेऊ जागत रहत राती दिन वनरत हैं। भूषन भनत तू बिराजै रज भरो वेऊ रज भरे देहिन दरी[4] मैं बिचरत है ॥ तूतो सूर गन को बिदारि बिहरत

---

१ सोना अथवा सुंदर वर्ण (अक्षर) अर्थात् छंद के शब्द।

२ लाख जो पलाशादि से निकलती है।

३ हाथ मिलाना। अर्थ हथेली का है।

४ पहाड़ी गुफा।

सुर-मंडलै[1] बिदारि वेऊ सुरलोक रत हैं। काहे ते सिवाजी गाजी तेरोई सुजसु होत तोसों अरिवर सरिवरि सी करत हैं ॥१७६॥

आक्षेप

लक्षण—दोहा

पहिले कहिये बात कछु, पुनि ताको प्रतिषेध।
ताहि कहत आक्षेप हैं भूषन सुकवि सुमेध[2] ॥१७७॥

उदाहरण—मालती सवैया

जाय भिरौ न भिरे बचिहौ भनि भूषन भौंसिला भूप सिवा सों। जाय दरीन दुरौ दरिओ नजिके दरियाव लँघौ लघुता सों॥ सोछन काज वजीरन को कहैं बोल यों वदिल साहि सभा सों। छूटि गयो तो गयो परनालो सलाह कि राह गहौ सरजा सों॥ १७८॥

द्वितीय लक्षण—दोहा

जेहि निषेध अभ्यास ही भनि भूषन सो और।
कहत सकल आक्षेप हैं जे कविकुल सिरमौर॥ १७९॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

पूरब के उत्तर के प्रबल पछाहँ हु के सब बादसाहन के गढ़

---

१ युद्ध में मरे हुए लोग, कहा जाता है कि, सूर्य मंडल भेद कर स्वर्ग सिधारते हैं।

२ अच्छी मेधा अर्थात् बुद्धिवाले।

कोट हरते। भूपन कहैं यों अवरंग सों वजीर जीति लीवे को पुरतगाल सागर उतरते ।। सरजा सिवा पर पठावत मुहीम काज हजरत हम मरिबे को नहिं डरते। चाकर हैं उजुर कियो न जाय नेक पै कछू दिन उबरते तौ घने काज करते ।।१८०।।

विरोध (द्वितीय विषम)

लक्षण—दोहा

द्रव्य क्रिया गुन में जहाँ उपजत काज विरोध।
ताको कहत विरोध हैं भूपन सुकवि सुबोध ।। १८१ ।।

उदाहरण—मालती सवैया

श्री सरजा सिव तो जस सेत सों होत हैं वैरिन के मुँह कारे। भूपन तेरे अरुन्न प्रताप सफेद लखे कुनवा नृप सारे ॥ साहि तनै तव कोप कृसानु ते वैरि गरे सब निप वारे। एक अचभव होत वडो तिन ओठ गहे अ[illegible] ॥

उदाहरण—मालती सवैया

दच्छिननायक[1] एक तुही, भुव भामिनि को अनुकूल[2] है भावै। दीनदयाल न तो सो दुनी पर म्लेच्छ के दीनहिँ मारि मिटावै। श्री सिवराज भनै कवि भूषन तेरे सरूप को कोउ न पावै। सूर सुयस में सूरसिरोमनि हैकरि तू कुलचंद कहावै॥ १८४॥

विभावना

लक्षण—दोहा

भयो काज बिन हेतुही, बरनत हैं जेहि ठौर।
तहँ विभावना होति है, कवि भूषन सिरमौर॥ १८५॥

उदाहरण—मालती सवैया

बीर बड़े बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को गन भारो। भूषन आय तहाँ सिवराज लियो हरि औरँगजेब को गारो[3]॥ दीन्हों कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हों वजीरन को मुँह कारो। नायो न माथहि दक्खिननाथ न साथ में फौज न हाथ हथ्यारो॥ १८६॥

---

१ वह पति जिसके कई स्त्रियाँ हों और जो सब से बराबर प्रेम रखता हो। अथवा दक्षिण देश का राजा।

२ वह पति जो एक-ही स्त्री हो अथवा मुआफ़िक़।

३ गर्व, अभिमान।

पुनः—दोहा

साहितनै सिवराज की सहज टेव यह ऐन।
अनरीझे दारिद हरै, अनखीझे अरि सैन ॥ १८७ ॥

और दो विभावना

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु पूरन नहीं, उपजत है पर काज।
कै अहेतु ते और यों द्वै विभावना साज ॥ १८८ ॥

उदाहरण

कारण अपूरे काज की उत्पत्ति। कवित्त मनहरण

दच्छिन को दावि करि बैठो है सइस्त खान पूना माहिं दूना करि जोर करवार[1] को। हिंदुवानखंभ गढ़पति दलथभ भनि भूषन भरैया कियो सुजस अपार को॥ मनसबदार चौकीदारन गँजाय महलन में मचाय महाभारत के भार को। तो सो को सिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों जित्यो जंग सरदार सौ हजार असवार को॥ १८९ ॥

अहेतु ते कारज की उत्पत्ति। कवित्त मनहरण

ता दिन अखिल खलभलै खल खलक में जा दिन सिवा जी गाजी नेक करखत हैं। सुनत नगारन अगार तजि अरिन की दारगन भाजत न बार परखत हैं॥ छूटे बार बार छूटे बारन ते

१ करवाल, तलवार।

लाल देखि भूषन सुकवि बरनत हरखत हैं। क्यों न उतपात होहिं बैरिन के झुंडन में कारे घन उमड़ि अँगारे बरखत हैं ॥१६०॥

और विभावना

लक्षण—दोहा

जहाँ प्रगट भूषन भनत हेतु काज ते होय।
सो विभावना औरऊ कहत सयाने लोय ॥१६१॥

उदाहरण—दोहा

अचरज भूषन मन बढ़्यो, श्री सिवराज खुमान।
तव कृपान धुव धूम ते, भयो प्रताप कृसान ॥ १६२ ॥

पुन.—कवित्त मनहरण

साहि तनै सिव! तेरो सुनत पुनीत नाम धाम धाम सबही को पातक कटत है। तेरो जस काज आज सरजा निहारि कविमन भोज बिक्रम कथा ते उचटत है॥ भूषन भनत तेरो दान संकलप जल अचरज सकल मही में लपटत है। और नदी नदन ते कोकनद होत तेरो कर कोकनद नदी नद प्रगटत है ॥ १६३ ॥

विशेषोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु समरथ भयहु प्रगट होत नहिँ काज।
तहाँ विसेसोकति कहत भूषन कविसिरताज ॥ १६४ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

दै दस पाँच रुपैयन को जग कोऊ नरेस उदार कहायो। कोटिन दान सिवा सरजा के सिपाहिन साहिन को बिचलायो॥ भूषन कोऊ गरीबन सों भिरि भीमहुँ ते बलवंत गनायो। दौलति इंद्र समान बढ़ी पै खुमान के नेक गुमान न आयो॥ १९५॥

असंभव

लक्षण—दोहा

अनहुवे की बात कछु प्रगट भई सी जानि।
तहाँ असंभव बरनिए सोई नाम बखानि॥ १९६॥

उदाहरण—दोहा

औरँग यों पछितात मैं करतो जतन अनेक।
सिवा लेइगो दुरग सब को जाने निसि एक॥ १९७॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

जसन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोव इंद्र आवै सोऊ लागै औरँग की परजा। भूषन भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी[1] तिनको तुजुक[2] देखि नेकहू न लरजा॥ ठान्यो न

---

१ मुसलमानों में गाजी वह कहलाता था जो एक काफिर को मार डाले और यह बड़ी सम्मान की पदवी थी। इसी सम्मान के कारण भूषणजी कदाचित् शिवाजी के नाम के साथ अनेक ठौर गाजी लगा दिया करते थे, नहीं तो सच पूछिए तो इसे अशुद्ध ही समझना चाहिए। गजनेवाला भी अर्थ हो सकता है। संभव है, भूषण मुसलमानों को मारनेवाले हिन्दू को गाजी कहते हों। २ शान, महत्व।

सलाम मान्यो साहि को इलाम[1] धूम धाम कै न मान्यो राम सिंहहू[2] को बरजा। जासों वैर करि भूप बचै न दिगन्त ताके दंत तोरि तखत तरे ते आयो सरजा ॥ १६८ ॥

असंगति (प्रथम)

लक्षण—दोहा

हेतु अनत ही होय जहँ काज अनत ही होय।
ताहि असंगति कहत हैं भूषन सुमति समोय ॥ १६६ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

महाराज सिवराज चढ़त तुरंग पर ग्रीवा जाति नै करि गनीम अतिबल की। भूषन चलत सरजा की सैन भूमि पर छाती दरकति है खरी अखिल खल की ॥ कियो दौरि घाव उमरावन अमीरन पै गई कटि नाक सिगरेई दिली-दल की। सूरत[3] जराई कियो दाहु पातसाहु उर स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी ॥ २०० ॥

---

१ फ़रमान, इश्तिहार, (यहाँ पर) हुक्म।

२ ये जयपुराधीश महाराज मिर्ज़ा जयसिंह के पुत्र थे। जयसिंह के साथ जब शिवाजी दिल्ली को गए, तब येही दिल्लीश्वर की ओर से उनकी अगवानी को आए थे और उन्हें दिल्ली से निकल भागने में इन्होंने भी छिपकर सहायता दी थी।

३ पहले सन् १६६४ में और फिर १६७० में शिवाजी ने सूरत शहर को लूटा था। दोनों बार करोड़ों का माल इनके हाथ लगा और बादशाह की बड़ी बदनामी हुई। यहाँ के केवल मुसल्मानों को इन्होंने लूटा था।

असंगति (द्वितीय)

लक्षण—दोहा

आन ठौर करनीय सो करै और ही ठौर।
ताहि असगति और कवि भूषन कहत सगौर ॥ २०१ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

भूपति सिवाजी तेरी धाक सों सिपाहिन के राजा पात साहिन के मन ते अहं[1] गली। भौंसिला अभंग तू तौ जुरतो जहाँई जंग तेरी एक फते होति मानो सदा संग ली ॥ साहि के सपूत पुहुमी के पुरहूत कवि भूषन भनत तेरी खरग उदगली। सत्रुन की सुकुमारी थहरानी सुंदरी औ सत्रु के अगारन में राखे जंतु जगली ॥ २०२ ॥

असंगति (तृतीय)

लक्षण—दोहा

करन लगै औरै कछू करै औरई काज।
तहाँ असगति होति है कहि भूषन कविराज ॥२०३॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहितनै सरजा सिव के गुन नेकहु भाषि सक्यो न प्रवीनो। उद्यत होत कछू करिवे को करै कछु वीर महा रस

---

१ अहंकार गल गया।

मीनो ॥ ह्याँते गयो चकतै[1] सुख देन को गोसलखाने[2] गयो दुख दीनो। जाय दिली दरगाह सुसाह को भूपन वैरि बनाय ही लीनो ॥ २०४ ॥

विषम

लक्षण—दोहा

कहाँ बात यह कहँ वदै, यौं जहँ करत बखान।
तहाँ विषम भूपन कहत, भूपन सुकवि सुजान ॥२०५॥

उदाहरण—मालती सवैया

जावलि[3] बार सिंगारपुरी[4] औ जवारि[5] को राम के नेरि[6] को गाजी। भूपन भौंसिला भूपति ते सब दूरि किए करि

---

१ चकत्ता अर्थात् चगताइयों के वंशज औरंगजेब को।

२ गुसलखाने की घटना भूमिका में देखिए।

३ चन्द्रराव मोरे जावली का राजा था। उसे जीतकर शिवाजी ने सन् १६५५ ई० में राज्य छीन लिया। इसी स्थान पर शिवाजी ने सन् १६५६ में अफजलखाँ को मारा (छ० न० ६३ नोट देखिए)।

४ कोंकण देश में रत्नागिरि शहर के पश्चिम-दक्षिण सिंगारपुर है। इसे १६६१ ई० में शिवाजी ने अपने अधिकृत किया।

५ रामनगर के निकट एक छोटा सा स्थान है। इसे जयपुर (राजपूताने वाला नहीं) भी कहते हैं। शायद यह चौहर हो जिसे शिवाजी ने १६७८ में जीता था।

६ छंद न० १७१ का नोट देखिए।

कीरति ताजो ॥ बैर कियो सिवजी सों खवासखाँ[1] डोडियै सैन बिजैपुर[2] बाजो । बापुरो एदिल साहि कहाँ कहाँ दिल्लि को दामनगीर सिवाजी ? ॥ २०६ ॥

लै[1] परनालो सिवा सरजा करनाटक[3] लौं सब देस बिमूँचे । बैरिन के भगे बालक बृन्द कहै कवि भूषन दूरि पहूँचे ॥ नाँघत नाँघत घोर घने बन हारि परे यों कटे मनो कूँचे । राजकुमार कहाँ सुकुमार कहाँ बिकरार पहार वे ऊँचे ? ॥ २०७ ॥

---

१ सन् १६७३ की घटना है ।

२ यह बीजापुर के प्रधान मन्त्री खान मुहम्मद का लड़का था और स्वयं मन्त्री भी था । जब प्रसिद्ध बादशाह अलीआदिलशाह (एदिल साही) मृतशय्या पर था, तब उसने खवासखाँ को अपने नाबालिग पुत्र सुल्तान सिकंदर का वली व पालक (Regent and guardian) सन् १६७२ में बनाया । सिवाजी से इसने कई समर किए पर यह स्वयं युद्ध में न गया । सन् १६७५ में यह छिपकर औरंगजेब से मिल गया और इसी कारण बहलोलखाँ (छन्द नं० ९९ का नोट देखिए) इत्यादि के इशारे पर मारा गया ।

३ छन्द नम्बर १०७ का नोट देखिए । यह छन्द सन १६५९ के परनाला विजय तथा १६६१–६२ के करनाटक विद्रोह का कथन करता है । पश्चिमी करनाटक में शिवाजी ने जो गड़बड़ मचाई थी, उसका भी हवाला इस छन्द में माना जा सकता है । छन्द नं० ११७ का नोट देखिए ।

४ छन्द नं० ११७ का नोट देखिए ।

सम

लक्षण—दोहा

जहाँ दुहूँ अनुरूप को करिए उचित बखान।

सम भूषन तासों कहत भूषन सकल सुजान॥ २०८॥

उदाहरण—मालती सवैया

पंज हजारिन[1] बीच खड़ा किया मैं उसका कुछ भेद न पाया। भूषन यों कहि औरँगजेब उजीरन सों बेहिसाब रिसाया॥ कम्मर की न कटारी दई इसलाम ने गोसलखाना बचाया। जोर सिवा करता अनरत्थ भली भई हत्थ हथ्यार न आया॥ २०९॥

पुन—दोहा

कछु न भयो केतो गयो, हार्‌यो सकल सिपाह।

भली करे सिवराज सों, औरँग करे सलाह॥ २१०॥

विचित्र

लक्षण—दोहा

जहाँ करत हैं जतन फल, चित्त चाहि विपरीत।

भूषन ताहि विचित्र कहि, बरनत सुकवि विनीत॥२११॥

---

१ पाँच हजार सेना जिस सरदार के अधिकार में हो। शिवा जी औरंगजेब के दरबार में पंजहजारियों में खड़े किए गए थे जिस पर वे बिगड़ उठे थे।

उदाहरण—दोहा

तैं जयसिंहहिं[1] गढ़ दिये, सिव सरजा जस हेत।
लीन्हें कैयो बरस मैं, बार न लागी देत॥ २१२॥

अन्यच—कवित्त मनहरण

वेदर[2] कल्यान[3] दै परेंडा[4] आदि कोट साहि एदिल गँवाय

---

१ ये जयपुर के महाराज थे, और औरंगजेब ने इन्हें "मिर्ज़ा" की उपाधि दी थी जिससे इनको "मिर्ज़ा जयसिंह" अथवा "मिर्ज़ा राजा" भी कहते हैं। ये सन् १६२१ ई० में गद्दी पर बैठे थे। (इनके बहुत दिनों बाद सवाई जयसिंह १६९९ में गद्दी पर बैठे और उन्होंने जयपुर शहर बसाया)। मिर्ज़ा जयसिंह और दिलेर खाँ सन् १६६५ में शिवाजी से लड़ने भेजे गए। जयसिंह ने सिंहगढ़ को घेरा और दिलेर खाँ ने पुरंधर को, और शिवाजी ने जयसिंह से दब कर सन्धि की जिसमें शिवाजी ने मुगलों के जितने किले जीते थे, वे सब और निज़ामशाही बादशाहों से जीते हुए ३२ किलों में से २० किले मिर्ज़ा राजा को भेंट किए और शिवाजी स्वयं मार्च १६६६ में आगरे गए, पर दिसम्बर में निकल आए। सन् १६६७ में इनका देहांत हुआ। ये शश (छ) हजारी मनसबदार थे।

२ बहमनीवंशज "बादशाहों" की राजधानी। इसे तथा कल्याणी को १६५७ में औरंगजेब ने जीता। पीछे यह शिवाजी को मिला।

३ कल्यान का सूबा कोंकण में था। पहले यह अहमदनगर के निज़ामशाही "बादशाहों" का था, पर सन् १६३६ में यह बीजापुर के अधिकार में आया और सन १६४८ में शिवाजी ने इसे बीजापुर के "बादशाह" आदिल शाह (एदिल) से जीत लिया।

४ इस (परेंडा) नाम का कोई किला या स्थान इतिहास में नहीं मिलता,

है नवाय निज सीस को। भूपन भनत भागनगरी[1] कुतुब साई[2] दै करि गँवायो रामगिरि[3] से गिरीस को॥ भौंसिला भुवाल साहि तने गढ़पाल दिन दोउ ना लगाय गढ लेत पँचतीस[4] को। सरजा सिवाजी जयसाह मिरजा को लीने सौ गुनी बड़ाई[5] गढ दीन्हे हैं दिलीस को॥ २१२॥

हाँ, एक किला परेंदा नामक था जिसका अपभ्रंश परेंसा जान पड़ता है। यह था पहले अहमदनगर का था और फिर आदिल शाह का हो गया जिससे सन् १६६० में इसे मुगलों ने जीता जिससे दूसरे ही साल शिवाजी ने इसे छीन लिया।

१ छंद नं० ११७ का नोट देखिए। शिवाजी ने यहाँ कर वसूल किया पर अधिकार नहीं पाया।

२ कुतुबशाह। छंद नं० ६२ का नोट देखिए।

३ इस नाम का एक परगना था जिसमें इसी (रामगिरि) नाम की एक पहाड़ी है और इसी के पास रामगढ़ अथवा रामगेरि का किला भी था।। यह गोलकुंडा की रियासत में था। छन्द नं० १७३ देखिए।

४ शायद पैंतीस किले शिवाजी ने मिर्जा जयसिंह को भेंट किए थे।

५ अर्थात् आपने जयसिंह को दब कर किले नहीं दिए वरन् हिंदू-रुधिर बहाने के ठौर अपना हार मान कर वे दे गढ़ दिए जिससे आपको बड़ाई हुई और यश मिला। छंद के पहलेवाले दोहे में भूपण जी ने यह शिवाजी के यश बढ़ाने का कारण कहा है पर बड़ी ही चतुराई से इसे "विचित्र" अलंकार के उदाहरण में लिखा।

प्रहर्षण

लक्षण—दोहा

जहँ मन वांछित अरथ ते प्रापति कछु अधिकाय ।
तहाँ प्रहरषन कहत हैं भूषन जे कविराय[1] ॥२१४॥

उदाहरण—मनहरण दंडक ।

साहि तनै सरजा कि कीरति सों चारो ओर चाँदनी बितान छिति छोर छाइयतु है । भूषन भनत ऐसो भूप भौंसिला है जाको द्वार भिच्छुकन सों सदाई भाइयतु है ॥ महादानि सिवाजी खुमान या जहान पर दान के प्रमान जाके यों गनाइयतु है । रजत की हौंस किए हेम पाइयतु जासों हयन की हौंस किए हाथी पाइयतु है ॥ २१५ ॥

विषादन

लक्षण—दोहा

जहँ चितचाहे काज ते उपजत काज विरुद्ध ।
ताहि विषादन कहत हैं भूषण बुद्धि विसुद्ध ॥२१६॥

उदाहरण—मालती सवैया

दारहि[2] दारि[3] मुरादहि[4] मारि कै संगर

---

१ वास्तव में यहाँ दूसरे प्रहर्षण के लक्षण और उदाहरण हैं। भूषण ने पहला और तीसरा प्रहर्षण नहीं लिखा है।

२, ३, ४, ये तीनों औरंगजेब के भाई थे। इनका हाल प्रसिद्ध ही है कि इन्हें मारकर औरंगजेब सिंहासन पर बैठा।

साह' सुजै बिचलायो। कै कर में सब दिल्लि कि दौलति [illegible] देस घने अपनायो॥ बैर कियो सरजा सिव सों यह [illegible] के न भयो मन भायो। फौज पठाई हुती गढ़ लेन को [illegible] के गढ़ कोट गँवायो॥ २१७॥

अपरच—दोहा

महाराज सिवराज तव बैरी तजि रस रुद्र।
बचिबे को सागर तिरे बूड़े सोक समुद्र॥२१८॥

आधिक

लक्षण-दोहा

जहाँ बड़े आधार ते बरनत बढ़ि आधेय।
ताहि अधिक भूषन कहत जानि सुबुद्धि अमेय॥२१९॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव हाथ को नहिं बखान करि जात।
जाको बासी सुजस सब त्रिभुवन मैं न समात॥२२०॥

पुन—कवित्त मनहरण

सहज सलील सील जलद से नील डील पब्बय से [illegible] देत नाहिँ अकुलात हैं। भूषन भनत महाराज सिव[illegible] कंचन को ढेर जो सुमेरु सो लखात है॥ सरजा [illegible]

---

१ पीस का। [illegible]

२ गाँठ के [illegible]

यह मुहाविरा [illegible] है।

करि कविताई तव हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है ? जाको जस टक सात दीप नव खंड महि मंडल की कहा ब्रह्मंड ना समात है ॥ २२१ ॥

अन्योन्य

लक्षण-दोहा

अन्योन्या उपकार जहँ यह बरनन ठहराय ।
ताहि अन्योन्या कहत हैं अलंकार कविराय ॥२२२॥

उदाहरण—मालती सवैया

तो कर सौं छिति छाजत दान है दान हू सौं अति तो कर छाजै । तैंही गुनी की बड़ाई सजै अरु तेरी बड़ाई गुनी सब साजै ॥ भूषन तोहि सौं राज बिराजत राज सौं तू सिवराज बिराजै । तो बल सौं गढ कोट गजै अरु तू गढ कोटन के बल गाजै ॥ २२३ ॥

विशेष

लक्षण-दोहा

बरनत हैं आधेय को जहँ बिनही आधार ।
ताहि विसेप बखानहीं भूषन कवि सरदार ॥२२४॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा सौं जग जुरि चदावत[1] रजवंत ।

---

[1] अमरसिंह चंदावत। छंद नं० ६७ का नोट देखिए।

राव अमर[1] गो अमरपुर समर रही रज तंत ॥२२५॥

पुन—कवित्त मनहरण।

सिवाजी खुमान सलहेरि में दिलीस दल कीन्हों कतलाम करवाल[2] गहि कर मैं। सुभट सराहे चदावत कछवाहे मुगलौ पठान ढाहे फरकत परे फर मैं ॥ भूपन भनत भौंसिला के भट उद्भट जीति घर आए धाक फैली घर घर मैं। मारु के करैया अरि अमर पुरै गे तऊ अजौं मार मारु सोर होत है समर मैं ॥ २२६ ॥

व्याघात

लक्षण—दोहा

और काज करता जहाँ करै औरई काज[3]॥
ताहि कहत व्याघात हैं, भूपन कवि सिरताज ॥२२७॥

---

१ राव तो अमरपुर चला गया पर उसकी राज्यश्री (यहाँ पर वीरता) निराधार युद्धस्थल में रह गई।

२ 'हाथ में तलवार लेकर" शिवाजी इस युद्ध में नहीं लड़े थे। वे तो इस युद्ध में थे [illegible] नहीं और उनके मंत्री मोरोपंत नामक ब्राह्मण ने यह युद्ध जीता था। हाँ "लड़े सिपाही और नाम हो सरदार का।" इसका हाल छ० न० ९७ के नोट में देखिए।

३ यह लक्षण अशुद्ध प्रतीत होता है। "हितकारी वस्तु को अहित" वर्णन करने में व्याघात अलंकार होता है (दूलह-कृत "कविकुलकंठाभरण" देखिए) उदाहरण शुद्ध है।

उदाहरण—मालती सवैया

ब्रह्म रचै पुरुषोत्तम पोसत संकर सृष्टि सँहारनहारे। तू हरि को अवतार सिवा नृप काज सँवारे सबै हरिवारे ॥भूषन यों अवनी यवनी कहैं "कोऊ कहै सरजा सों हहारे। तू सबको प्रतिपालनहार विचारे भतार न मारु हमारे" ॥ २२८ ॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

फसत मैं यार घार वैसोई बुलद होत वैसोई सरस रूप समर भरत है। भूषन भनत महराज सिवराज मनि, सघन सदाई जस फूलन धरत है ॥ बरछी कृपान गोली तीर केते मान, जोरावर गोला बान तिनहू को निदरत है। तेरो करवाल भयो जगत को ढाल, अब सोई हाल[1] म्लेच्छन के काल को करत है ॥ २२९ ॥

(कारण माला) गुम्फ

लक्षण—दोहा

पूरब पूरब हेतु कै उत्तर उत्तर हेतु।
या विधि धारा बरनिए गुम्फ कहावत नेतु ॥२३०॥

उदाहरण—मालती सवैया

शंकर की किरपा सरजा पर जोर बढी कवि भूषन गाई। ता किरपा सों सुबुद्धि बढ़ी भुव भौंसिला साहि तनै की

---

१ इस समय।

सवाई ॥ राज सुबुद्धि सों दान बढ्यो अरु दान सों पुन्य समूह सदाई । पुन्य सों बाढ्यो सिवाजि खुमान खुमान सों बाढी जहान भलाई ॥ २३१ ॥

पुनः—दोहा

सुजस दान अरु दान धन धन उपजै किरवान ।
सो जग में जाहिर करी सरजा सिवा खुमान ॥२३२॥

एकावली[1]

लक्षण—दोहा

प्रथम बरनि जहँ छोडिए जहाँ अरथ की पाँति ।
बरनत एकावलि अहै कवि भूषन यहि भाँति ॥२३३॥

उदाहरण—हरिगीतिका छंद

तिहुँ भुवन में भूषन भनै नरलोक पुन्य सुसाज में । नरलोक[2] में तीरथ लसै महि तीरथौं कि समाज में ॥ महि में बडी महिमा भली महिमैं[3] महारज लाज में । रज लाज राजत आजु है महराज श्री सिवराज में ॥ २३४ ॥

---

१ कारणमाला में कारण-कार्य का संबंध होता है, पर एकावली में नहीं होता, तथा मालादीपक में पदार्थादि दीपक का संबंध होता है सो भी एकावली में नहीं होता ।

२ नरलोक में तीरथों की समाज में महि (एक) तीरथ लसै ।

३ महिमै (महिमावाली) में रजलाज (बडी) । यहाँ दूरान्वयी दूषण है ।

मालादीपक एवं सार

लक्षण—दोहा

दीपक एकावलि मिले मालादीपक होय ।
उत्तर उत्तर उतकरष सार कहत है सोय ॥२३५॥

उदाहरण

माला दीपक—कवित्त मनहरण

मन कवि भूषन को सिव की भगति जीत्यो सिव की भगति जीत्यो साधु जन सेवा ने । साधु जन जीते या कठिन कलि काल कलिकाल महावीर महाराज महिमेवा ने[1] ॥ जगत में जीते महावीर महाराजन ते महाराज बावन हू पातसाह लेवा ने । पातसाह बावनी दिली के पातसाह दिल्लीपति पातसाहै जीत्यो हिंदुपति सेवा ने ॥ २३६ ॥

सार यथा—मालती सवैया

आदि बड़ी रचना है बिरंचि कि जामैं रह्यौ रचि जीव जड़ो[2] है । ता रचना महँ जीव बड़ो अति काहे ते ता उर ज्ञान गड़ो है ॥ जीवन मैं नर लोग बड़े कवि भूषन भाषत पैज अड़ो है । है नर लोग मैं राज बड़ो सब राजन में सिवराज बड़ो है ॥ ॥ २३७ ॥

---

१ महिमावान् ।

२ जीवधारी और जड़ पदार्थ ।

यथासंख्य

लक्षण—दोहा

क्रम सों कहि तिनके अरथ क्रम सों बहुरि मिलाय।
यथासंख्य ताको कहैं भूषन जे कविराय ॥ २३८ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

जेई चहौ तेई गहौ सरजा सिवाजी देस संके दल दुवन के जे वै बडे उर के। भूषन भनत भौंसिला सों अब सनमुख कोऊ ना लरैया है धरैया धीर धुर के ॥ अफजल[1] खान रुसतमै[2] जमान फत्ते[3] खान कूटे कूटे लूटे ए उजीर बिजैपुर के। अमर[4] सुजान मोहकम[5] इखलास[6] खान खाँडे छाँडे डाँडे उमराय दिलीसुर के ॥ २३९ ॥

---

१ छंद न० ६३ का नोट देखिए।

२ सन १६५९ के दिसम्बर में इसकी शिवाजी से परनाले के निकट मुठभेड़ हुई और शिवाजी ने इसकी सेना का बड़ा ही भयंकर कतलआम किया तथा इसे कृष्णानदी के उस पार तक खदेड़ा। इसका शुद्ध नाम रुस्तमे जमाँ था। भीतर से यह शिवाजी से मिला हुआ था।

३ यह सन् १६७० में शिवाजी से जंजीरा के किले में लड़ा। यह शिवाजी से मिल गया और इस कारण इसके तीन साथियों ने इसे बंदी कर लड़ाई जारी रक्खी।

४ छं० नं० ९७ का नोट देखिए।

५ मोहकमसिंह अमरसिंह का लड़का था। सन् १६७१ में सलहेरि के युद्ध में मरहठों ने इसे बंदी करके छोड़ दिया तथा इसके पिता अमरसिंह को मार डाला था।

६ किसी किसी प्रति में इखलासखाँ की जगह में बहलोलखाँ पाठ है, किन्तु

पर्याय

लक्षण—दोहा

एक अनेकन में रहै एकहि में कि अनेक।
ताहि कहत परयाय हैं भूषण सुकवि विवेक ॥ २४० ॥

उदाहरण—दोहा

जीति रही अवरंग में सबै छत्रपति छाँड़ि।
तजि ताहू कौ अब रही शिवसरजा कर माँडि ॥ २४१ ॥

पुन.—कवित्त मनहरण

कोट गढ दै कै माल मुलुक में बीजापुरी गोलकुंडा वारो पीछे ही को सरकतु है। भूषन भनत भौंसिला भुवाल भुजबल रेवा ही[1] के पार अवरंग हरकतु है॥ पेसकसें[2] भेजत इरान[3] फिरगान[4] पात उनहूँ के उर याकी धाक धरकतु है। साहितनै

कथन सलहेरि पर हारे हुए दिल्ली के सरदारों का है। इखलासखाँ ऐसा सरदार था। बहलोलखाँ बीजापुर का सरदार था और सलहेरि में लड़ा भी न था।

१ नर्म्मदा नदी के उत्तर ओर ही।

२ पेशकश, नज़र, खिराज।

३ ईरान, फ़ारस।

४ योरपवाले जैसे अंगरेज़, पोर्चुगीज़ इत्यादि। ये युरोपियन सौदागर शिवाजी की लूट से बचने के लिये उन्हें वार्षिक कर भेजते थे। यह बात सन् १६६७ से प्रारम्भ हुई थी, जिस सन् में शिवाजी ने पुर्तगालवालों की ६००० सेना काट डाली थी। बाबर के पिता का राज्य भी फिरगाना कहलाता था।

सिवाजी खुमान या जहान पर कौन पातसाह के न हिए खर-कतु है ? ॥ २४२ ॥

अगर के धूप धूम उठत जहाँई तहाँ उठत बगूरे अब अति ही अमाप हैं। जहाँई कलावंत अलापे मधुर स्वर तहाँई भूत प्रेत अब करत विलाप हैं ॥ भूषन सिवाजी सरजा के बैर बैरिन के डेरन में परे मनो काहु के सराप हैं। बाजत हे जिन महलन में मृदंग तहाँ गाजत मतंग सिंह बाघ दीह दाप हैं ॥ २४३ ॥

परिवृत्ति

लक्षण—दोहा

एक बात को दै जहाँ आन बात को लेत।
ताहि कहत परिवृत्ति हैं भूषन सुकवि सचेत ॥ २४४ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

दच्छिन धरन धीर धरन खुमान, गढ लेत गढ़ धरन सों धरम दुवार[1] दै। साहि नर नाह को सपूत महा बाहु लेत मुलुक महान छीनि साहिन को मारु दै ॥ सगर मैं सरजा सिवाजी अरि सैनन को सारु हरि लेत हिंदुवान सिर सारु दै। भूषन भुसिल जय जस को पहारु लेत हरजू को हारु हरगन को अहारु दै ॥ २४५ ॥

---

१ सन् १६४७ में शिवाजी ने तीन भाइयों का आपसी झगड़ा ते करने को जाकर पुरंदर किला प्राप्त किया था। इसी से धर्म द्वार देकर गढ़ लेना कहा जा सकता है। यह भी अर्थ होना है कि धर्मराज का द्वार (मृत्यु) देकर गढ़ लेते हैं।

परिसंख्या

लक्षण—दोहा

अनत बरजि कै बस्तु बस्तु जहँ बरनत एकहि ठौर।
तेहि परिसंख्या कहत हैं भूषन कवि दिलदौर॥ २४६॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

अति मतवारे जहाँ दुरदे निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है। भूषन भनत जहाँ पर लगे बानन में कोक पच्छि नहि माहिँ बिछुरन रीति है॥ गुनि गन चोर जहाँ एक चित्त ही के, लोक बंधैं जहाँ एक सरजा की गुनप्रीति है। कंप[1] कदली मैं बारि बुंद बदली मे सिवराज अदली के राज मैं यों राजनीति है॥ २४७॥

विकल्प

लक्षण—दोहा

उदाहरण[1]—मालती सवैया

मोरँग[2] जाहु कि जाहु कुमाऊँ[3] सिरोनगरै[4] कि कवित्त बनाए। बाँधव[5] जाहु कि जाहु अमेरि[6] कि जोधपुरै कि चितौरहिं[7] धाए॥ जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि दिलीसहु पै किन जाहु बोलाए। भूषन गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह सिवाहि रिझाए॥ २४६॥

---

१ ये दोनों ही उदाहरण (छं० नं० २४६, २५०) अशुद्ध हैं। विकल्प में संदेह ही रहना चाहिए, पर इन दोनों छंदों में अन्त में संदेह हटा कर एक बात निश्चयात्मक कह दी गई है। कदाचित् अपने नायक की पूर्ण प्रशंसा ही के लिये भूषणजी ने अपने ठीक उदाहरण अन्त में जान बूझ कर अशुद्ध कर दिए हों, पर यह अन्य प्रकार से भी संभव था।

२ इस नाम की रियासत कूचबिहार के पश्चिम और पुर्निया के उत्तर में थी। इसे मुगलों ने सन् १६६४ तथा १६७६ में जीता था। यह पहाड़ी राज्य था।

३ कमाऊँ (गढ़वाल) की रियासत में भूषणजी गए थे। इस विषय में भूमिका देखिए। ४ काश्मीर।

५ बांधव की रियासत। (रीवाँ)

६ जयपुर में इस नाम का प्रसिद्ध किला है जहाँ शक्ति शिलामयी देवी है। "जय जय शक्ति शिलामयी जय जय गढ़ आमेर। जय जयपुर सुरपुर सरिस जाहिर चहूँ फेर"॥

७ चित्तौर अर्थात् मेवाड़ अथवा उदयपुर।

परिसंख्या

लक्षण—दोहा

अनत बरजि कछु वस्तु जहँ बरनत एकहि ठौर।
तेहि परिसंख्या कहत हैं भूषन कवि दिलदौर ॥ २४६ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

अति मतवारे जहाँ दुरदे निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है। भूषन भनत जहाँ पर लगे बानन में कोक पच्छि नहि माहिँ बिछुरन रीति है ॥ गुनि गन चोर जहाँ एक चित्त ही के, लोक बंधैं जहाँ एक सरजा की गुन प्रीति है। कप[1] कदली में बारि बुंद बदली मैं सिवराज अदली के राज मैं यों राजनीति है ॥ २४७ ॥

विकल्प

लक्षण—दोहा

कै वह कै यह कीजिए जहँ कहनावति होय।
ताहि विकल्प बखानहीं भूषन कवि सब कोय ॥ २४८ ॥

---

१ इसका दूसरा पाठ यों है "कप. ...सिवराज अदला में अदली का राज नीति है"।

समुच्चय

लक्षण—दोहा

एक बारही जहँ भयो बहु काजन को बंध।
ताहि समुच्चय कहत हैं भूषन जे मतिबंध ॥ २५३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

माँगि पठायो सिवा कछु देस वजीर अजानन बोल गहे ना। दौरि लियो सरजै परनालो[1] यों भूषन जो दिन दोय लगे ना ॥ धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आय गो खान[2] खवास के फेना[3]। भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि कि सेना ॥ २५४ ॥

द्वितीय समुच्चय

लक्षण[4]—दोहा

वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एकहि ठौर।
दुतिय समुच्चय ताहि को कहि भूषन कविमौर ॥ २५५ ॥

---

१ छं० नं० १०७ का नोट देखिए। मार्च सन् १६७३ की घटना है।

२ छं० नं० २०६ का नोट देखिए।

३ भयानक रसपूर्ण।

४ अन्य कवि इसका लक्षण यों देते हैं—"द्वितीय समुच्चय में एक काज को करैं कारण पुष्ट करते है।"

पुन॰ मालती सवैया

देसन देसन नारि नरेसन भूषन यों सिख देहिँ दया सों। मगन ह्वै धरि, दंत गहो तिन, कंत तुम्हैं है अनत महा सों॥ कोट गहौ कि गहौ बन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता सों। और करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहौ न सिवा सों॥२५०॥

समाधि

लक्षण—दोहा

और हेतु मिलि कै जहाँ होत सुगम अति काज।
ताहि समाधि बखानहीं भूषन जे कबिराज॥ २५१॥

उदाहरण—मालती सवैया

बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैठो। योहीं मलिच्छहि छाँडै नहीं सरजा मन तापर रोस मैं पैठो॥ भूषन क्यों अफजल्ल बचै अठपाव[२] कै सिंह को पाँव उमैठो। बीछू के घाय धुक्योई[३] धरक ह्वै तौ लगि धाय धराधर बैठो॥ २५२॥

---

१ सौंहें, कसम।

२ उपद्रव, शरारत। "करौ तुम अठपाव पार्थ हम गारी गाँव में" (रघुनाथ—रसिकमोहन)। बुन्देलखंड में इसे अठाव कहते हैं।

३ धुकधुकाया, कलेजा काँपा।

के ? ॥ हिंदुन के[1] पति सों न विसाति सतावत हिंदु गरीबन पाय कै । लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर[2] कहाय कै ॥ २५८ ॥

पुन.—कवित्त मनहरण

गौर[3] गरबीले अरबीले राठउर[4] गह्यो लोह[5] गढ सिंहगढ हिम्मति हरष ते । कोट के कँगूरन में गोलदाज तीरंदाज राखे हैं लगाय, गोली तीरन बरषते । कै कै सावधान किरवान कसि कम्मरन सुभट अमान चहुँ ओरन करषते । भूषन भनत तहाँ सरजा सिवा तें चढो राति के सहारे ते अराति अमरष[6] ते ॥ २५९ ॥

भरभरा कर ढेर हो गया । आश्चर्य है कि औरंगजेब जैसे राजनीतिज्ञ शासक ने ऐसी प्रचंड भूलें कीं ! अस्तु । सन् १६६६ ई० की घटना है । बीभत्स रस ।

१ मेवाड़ (उदयपुर) के राणा "हिंदूपति" कहलाते हैं । शिवाजी को उसी घरा के होने से भूषणजी ने इस नाम से पुकारा ।

२ औरंगजेब का यह भी नाम था जिसका अर्थ है संसार भर पर अधिकार कर लेनेवाला ।

३ छं० नं० २३४ का नोट देखिए ।

४ जोधपुर के राजा । यहाँ उदयभानु राठौर (छं० नं० १०० देखिए) ।

५ सिंहगढ़ (छं० नं० १०० देखिए) के गढ अर्थात् किले में लोह अर्थात् तलवार गही ।

६ शत्रु पर क्रोध करके ।

उदाहरण—मालती सवैया

सुंदरता गुरुता प्रभुता भनि भूषन होत है आदर जामें। सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलकै परजा में ॥ दान कृपानहु को करिबो करिबो अभै दीनन को बर जामें। साहन सों रन टेक बिबेक इते गुन एक सिवा सरजा में ॥ २५६ ॥

प्रत्यनीक

लक्षण—दोहा

जहँ जोरावर सत्रु के पच्छी पै कर जोर।
प्रत्यनीक तासों कहँ भूषन बुद्धि अमोर ॥ २५७ ॥

उदाहरण—अलसा सवैया[1]

लाज धरौ सिवजू सों लरौ सब सैयद सेख पठान पठाय कै। भूषन ह्यॉं गढ कोटन हारे उहॉं तुम क्यों मठ[2] तोरे रिसाय

---

१ अलसा सवैया नवीन मत की है। इसमें पहले सात भगण फिर एक रगण (रगनत भ मुनि) होते हैं। भगण के तीन अक्षरों में पहला गुरु और शेष दो लघु होते हैं तथा रगण के तीन अक्षरों में पहला व तीसरा गुरु होता है और दूसरा लघु। इसका रूप यों है—०ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।ऽ०

२ औरंगजेब ने हिंदुओं को सताने के लिये अनेक मंदिर तुड़वा दिए, यहाँ तक कि काशीजी में श्री विश्वनाथजी तक का मंदिर तुड़वा कर उसकी एक ओर की दीवार पर मसजिद बनवा दी जो अब तक जैसी की तैसी विद्यमान है। न जाने इसमें हिंदुओं की क्या वास्तविक हानि हो गई, पर हाँ, इतना अवश्य हुआ कि ऐसी ही बातों से मुगलों के ऐसे सुदृढ़ राज्य की नींव हिल गई और कुछ ही दिनों में वह

के ? ॥ हिंदुन के[1] पति सों न बिसाति सतावत हिंदु गरीबन पाय कै। लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर[2] कहाय कै ॥ २५८ ॥

पुन —कवित्त मनहरण

गौर[3] गरबीले अरबीले राठउर[4] गह्यो लोह[5] गढ सिंहगढ हिम्मति हरप ते। कोट के कँगूरन मे गोलदाज तीरंदाज राखे हैं लगाय, गोली तीरन वरपते। कै कै सावधान किरवान कसि कम्मरन सुभट अमान चहुँ ओरन करपते। भूषन भनत तहाँ सरजा सिवा तें चढो राति के सहारे ते अराति अमरप[6] ते ॥ २५९ ॥

भरभरा कर ढेर हो गया। आश्चर्य है कि औरंगजेब जैसे राजनीतिज्ञ शासक ने ऐसी प्रारूढ भूलें कीं। अस्तु। सन् १६६६ ई० की घटना है। वीभत्स रस।

१ मेवाड़ (उदयपुर) के राणा "हिंदूपति" कहलाते हैं। शिवाजी को उसी वंश के होने से भूषणजी ने इस नाम से पुकारा।

२ औरंगजेब का यह भी नाम था जिसका अर्थ है संसार भर पर अधिकार कर लेनेवाला।

३ छ० नं० १३४ का नोट देखिए।

४ जोधपुर के राजा। यहाँ उदयभानु राठौर (छ० नं० १०० देखिए)।

५ सिंहगढ़ (छ० नं० १०० देखिए) के गढ़ अर्थात् किले में लोह अर्थात् तलवार गही।

६ शत्रु पर क्रोध करके।

अर्थापत्ति (काव्यार्थापत्ति)

लक्षण—दोहा

"यह कीन्हो तौ यह कहा" यों कहनावति होय।
अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय ॥ २६० ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सयन में साहन को सुंदरी सिखावें ऐसे सरजा सों वैर जनि करौ महा बली है। पेसकसैं[1] भेजत विलायति पुरुतगाल सुनिकै सहमि जात करनाट[2] थली है ॥ भूषन भनत गढ कोट माल मुलुक दै सिवा सों सलाह राखिए तो बात भली है। जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिली दलमली तौ तिहारी कहा चली है ?"

काव्यलिंग

लक्षण—दोहा

है दिढ़ाइये जोग जो ताको करत दिढ़ाय।
काव्यलिंग तासों कहैं भूषन जे कविराय ॥ २६२ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

साहति ले लीजिए विलाइति को सर कीजै सलख विला-यति यो यदि अरि हाथरे। भूषन भनत कीजै उसरी भुराह्न

---

१ पृ० नं० २८२ का नोट देखिए।

२ पृ० नं० ११७ का नोट देखिए।

थस पूरब के लीजिए रसाल गज छावरे ॥ दच्छिन के नाथ से सिपाहिन सों वैर करि अवरंग साहिजू कहाइए न बावरे। कैसे सिवराज मानु देत अवरंगै गढ़ गाढ़े गढपती गढ लीन्हे और रावरे ॥ २६३ ॥

अर्थान्तरन्यास

लक्षण[1]—दोहा

कह्यो अरथ जहँही लिये और अरथ उल्लेख ।
सो अर्थांतरन्यास है कहि सामान्य बिसेख ॥ २६४ ॥

उदाहरण । सामान्य भेद । कवित्त मनहरण

बिना चतुरंग संग बानरन लैकै बाँधि बारिध को लंक रघुनन्दन जराई है। पारथ अकेले द्रोन भीषम से लाख भट जीति लीन्ही नगरी बिराट में बड़ाई है। भूषन भनत है गुसुल खाने में खुमान अवरंग साहियी हथ्याय हरिलाई है। तौ कहा अचंभो महराज सिवराज सदा बीरन के हिम्मतै हथ्यार होनि आई है ॥ २६५ ॥

विशेषभेद । मालती सवैया

साहि तनै सरजा समरत्थ करी करनी धरनी पर नीकी। भूलिगे भोज से बिक्रम से औ भई बलि बेनु कि कीरति

---

१ इसका लक्षण अन्य कवि यों देते हैं—अर्थांतरन्यास वह है जहाँ किसी वस्तु को पहले विशेष कह के फिर सामान्य कर दे।

अर्थापत्ति (काव्यार्थापत्ति)

लक्षण—दोहा

"यह कीन्ह्यो तौ यह कहा" यों कहनावति होय।
अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय ॥ २६० ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सयन में साहन को सुंदरी सिखावैं ऐसे सरजा सौं वैर जनि करौ महा बली है। पेसकसैं[1] भेजत विलायति पुरतगाल सुनिकै सहमि जात करनाट[2] थली है ॥ भूपन भनत गढ कोट माल मुलुक दै सिवा सों सलाह राखिए तौ वात भली है। जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिली दलमली तौ तिहारी कहा चली है ?"

काव्यलिंग

लक्षण—दोहा

है दिढ़ाइये जोग जो ताको करत दिढाव।
काव्यलिंग तासों कहैं भूपन जे कविराव ॥ २६२ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

साहिति लै लीजिए विलाइति को सर कीजै बलख बिलायति को चंदि अरि डावरे। भूपन भनत कीजै उत्तरी मुचाल

---

१ छं० नं० २४२ का नोट देखिए।

२ छं० नं० ११७ का नोट देखिए।

संभावना

लक्षण—दोहा

"जु यों होय तौ होय इमि" जहँ संभावन होय।
ताहि कहत संभावना कवि भूषन सब कोय ॥ २६९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

लोमस की ऐसी आयु होय कौन हू उपाय तापर कवच जो करनवारो धरिए। ताहू पर दूजिये सहसबाहु ता पर सहस गुनो साहस जो भीमहू ते करिए॥ भूषन कहैं यों अवरंगजू सों उमराव नाहक कहौ तौ जाय दच्छिन में मरिए। चलैं न कछू इलाज भेजियत वेही काज ऐसो होय साज तौ सिवा सों जाय लरिए ॥ २७० ॥

मिथ्याध्यवसित

लक्षण—दोहा

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठो बरनत आन।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं भूषन सुकवि सुजान ॥ २७१ ॥

उदाहरण—दोहा

पग रन मैं चल यों लसैं ज्यों अंगद पग ऐन।
धुव सो भुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन[१] ॥ २७२ ॥

---

१ इसमें शिवाजी के विषय में झूठी बातें झूठी उपमाओं द्वारा कही गई हैं जैसा कि भूषणजी ने लक्षण में साफ़ लिख दिया है।

फीकी ॥ भूषन भिच्छुक भूप भए भलि भीख लै केवल भौंसिल ही की ॥ नैसुक रीझि धनेस करै, लखि ऐसियै रीति सदा सिवजी की ॥ २६६ ॥

प्रौढ़ोक्ति

लक्षण—दोहा

जहँ[1] उतकरष अहेत को बरनत हैं करि हेत।
प्रौढोकति तासों कहत भूषन कवि बिरदैत[2] ॥ २६७ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

मानसर वासी हंस बंसन समान होत, चंदन सों घस्यो घनसारऊ[3] धरीक है। नारद की सारद की हाँसी में कहाँ सी आभ सरद की सुरसरी कौन पुंडरीक है ॥ भूषन भनत छक्यो छीरधि में थाह लेत फेन लपटानो ऐरावत को करी कहै ?। कयलास ईस ईस सीस रजनीस वही अवनीस सिवा के न जस को सरीक है ॥ २६८ ॥

---

१ इसका लक्षण अन्य कवियों ने यों भी कहा है—प्रौढ़ोक्ति वह है जहाँ कोई बहुत बड़ा काम हो और उसके वास्ते कोई कारण वर्णित न हो, वहाँ पर कोई कल्पित कारण कहा जाय।

२ बिरद (प्रशंसा) करनेवाले।

३ कपूर भी।

संभावना

लक्षण—दोहा

"जु यों होय तौ होय इमि" जहँ सभावन होय।
ताहि कहत सभावना कवि भूषन सब कोय ॥ २६९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

लोमस की ऐसी आयु होय कौन ॥ उपाय तापर कवच जो करनवारो धरिए। ताहू पर हूजिये सहसबाहु ता पर सहस गुनो साहस जो भीमहू ते करिए ॥ भूषन कहैं यों अवरंगजू सौं उमराव नाहक कहौ तौ जाय दच्छिन में मरिए। चलै न कछू इलाज भेजियत वेही काज ऐसो होय साज तौ सिवा सौं जाय लरिए ॥ २७० ॥

मिथ्याध्यवसित

लक्षण—दोहा

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठो बरनत आन।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं भूषन सुकवि सुजान ॥ २७१ ॥

उदाहरण—दोहा

पग रन मैं चल यों लसैं ज्यों अगद पग ऐन।
धुव सो ध्रुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन[१] ॥ २७२ ॥

---

१ इसमें शिवाजी के विषय में झूठी बातें झूठी उपमाओं द्वारा कही गई हैं जैसा कि भूषणजी ने लक्षण में साफ़ लिख दिया है।

पुनः—कवित्त मनहरण

मेरु सम छोटो पन सागर सो छोटो मन धनद को धन ऐसो छोटो जग जाहि को। सूरज सो सीरो तेज चाँदनी सी कारो किंचि अमिय सो कटु लागै दरसन ताहि को॥ कुलिस सो कोमल कृपान अरिभंजिरे को भूषन भनत भारो भूप भोंसि-लाहि को। ध्रुव सम चल पद सदा महिमंडल में ध्रुव सो चपल ध्रुव वत सिव साहि को॥ २७३॥

उल्लास

लक्षण—दोहा

एकहि के गुन दोष ते औरे को गुन दोस।
बरनत हैं उल्लास सो सकल सुकबि मतिपोस॥ २७४॥

उदाहरण (गुणेनदोषो)। मालती सवैया

आज मही सिवराज बली हिंदुवान बढ़ाइवे को उर ऊटै।
भूषन भू निरम्लेच्छ करी चहै, म्लेच्छन मारिबो को रन जूटै॥
हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लों कोइ टूटै। चंद अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को सोक न छूटै॥२७५॥

पुनः (दोषेण गुणो)। मनहरण दंडक।

देस दहपट्ट कीने लूटि कै खजाने लीने बचे न गढोई काहू गढ़ सिरताज के। तोरादार[1] सकल तिहारे मनसबदार डाँडे,

---

१ तिहारे सकल तोरादार (तथा) मनसबदार जिनके सुभाव—मिजाज के (अभिमानी थे) युद्ध करके डाँडे।

जिनके सुभाय जग दे मिजाज के ॥ भूषन भनत बादसाह को यों लोग सब बचन सिखावत सलाह की इलाज के। डावरे की बुद्धि है कै बावरे न कीजै बैर रावरे के बैर होत काज सिवराज के ॥ २७६ ॥

अन्यच्च (गुणेन गुणो)। दोहा

नृप सभान में आपनो होन बड़ाई काज।
साहितनै सिवराज के करत कवित कविराज ॥ २७७ ॥

अपरञ्च (दोषेन दोषो) दोहा

सिव सरजा के बैर को यह फल आलमगीर।
छूटे तेरे गढ सबै कूटे गए वजीर ॥ २७८ ॥

पुनरपि। मनहरण दंडक

दौलति दिल्ली की पाय कहाए अलमगीर बब्बर[1] अकब्बर[2] के बिरद बिसारे तैं। भूषन भनत लरि लरि सरजा सों जग निपट अभगगढकोट सब हारे तैं ॥ सुधर्यो न एको साज भेजि भेजि बेहीकाज बडे बडे बे इलाज उमराव मारे तैं। मेरे कहे मेर करु, सिवाजी सों बैर करि गैर[3] करि नैर[4] निज नाहक उजारे तैं ॥ २७९ ॥

---

१ बाबर बादशाह, औरंगजेब के पाँचपुश्त ऊपर वाला भारत का पहला मुगल बादशाह था।

२ अकबर औरंगजेब का परदादा था।

३ गैर करि = नेजा करके।

४ नगर, देश।

अवज्ञा

लक्षण—दोहा

औरे के गुन दोस ते होत न जहँ गुन दोस।
तहाँ अवज्ञा होति है भनि भूषन मतिपोस ॥ २८० ॥

उदाहरण। मालती सवैया

औरन के अनबाढ़े कहा अरु बाढे कहा नहिं होत चहा है। औरन के अनरीझे कहा अरु रीझे कहा न मिटावत हा[1] है॥ भूषन श्री सिवराजहि माँगिए एक दुनी बिच दानि महा है। मंगन औरन के दरबार गए तौ कहा न गए तौ कहा है?॥ २८१॥

अनुज्ञा

लक्षण—दोहा

जहाँ सरस गुन देखि कै करै दोस की हौस।
तहाँ अनुज्ञा होति है भूषन कवि यहि रौस ॥ २८२ ॥

उदाहरण। कवित्त मनहरण

जाहिर जहान सुनि दान के बखान आजु महादानि साहितनै गरिबनेवाज के। भूषन जवाहिर जलूस जरबाफ जोति देखि देखि सरजा के सुकबि समाज के॥ तप करि करि कमलापति सों माँगत यों लोग सब करि मनोरथ ऐसे साज के।

---

१ "हाय" अर्थात् दुःख को नहीं मिटाता।

बैपारी जहाज के न राजा भारी राज के भिखारी हमैं कीजे महाराज सिवराज के ॥ २८३ ॥

लेश

लक्षण—दोहा

जहँ बरनत गुन दोष कै कहै दोष गुन रूप।
भूषन ताको लेस कहि गावत सुकवि अनूप ॥ २८४ ॥

उदाहरण—दोहा

उदेभानु राठौर वर धरि धीरज गढ पैंड।
प्रगटै फल ताको लह्यौ परिगो सुरपुर पैंड ॥ २८५ ॥
कोऊ बचत न सामुहें सरजा सों रन साजि।
भली करी पिय ! समर ते जिय लै आए भाजि ॥ २८६ ॥

तद्गुण

लक्षण—दोहा

जहाँ आपनो रंग तजि गहै और को रंग।
ताको तदगुन कहत हैं भूषन बुद्धि उतंग ॥ २८७ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

पंपा[1] मानसर आदि अगन तलाव लागे जेहि के परन में

---

१ जिस (रायगढ़) के पगों अर्थात् पक्खों में पंपा, मानसरोवर आदि अगणित तालाब लगे हैं अर्थात् चित्रित हैं।

अकथ युत[1] गथ के। भूपन यों साज्यो रायगढ़[2] सिवराज रहे देव चक चाहि कै बनाए राजपथ के॥ बिन[3] अवलंब कलिकानि[4] आसमान मैं ह्वै होत बिसराम जहाँ इंदु औ उदय[5] के। महत उतंग मनि जोतिनकेसंग[6] आनि कैयो रंग चकहा[7] गहत रवि रथ के॥ २८८॥

पूर्वरूप

लक्षण—दोहा

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय।
भूपन पूरब रूप सो कहत सयाने लोय॥ २८९॥

उदाहरण। मालती सवैया

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी।

---

१ वे (तालाव) अकथनीय हैं और उनके साथ कितनी ही गाथाएँ लगी हैं अर्थात् वे इतिहासों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं।

२ इसका वर्णन छंद नं० १४ के नोट एवं छंद नं० १५, २४ में देखिए। जान पड़ता है कि यह वर्णन रायगढ़ ही का है न कि राजगढ़ का। भूमिका देखिए।

३ बिना किसी चीज पर सहारा पाने के सूर्य और चंद्रमा आसमान में परेशान हो कर जिस रायगढ़ पर विश्राम ले लेते हैं।

४ परेशानी।

५ उदय व अस्त होनेवाला, सूर्य।

६ के संग आनि = से मिलान हो कर।

७ पहिए।

राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु व्यास के अंग सोहानो ॥
भूषन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानो।
पुन्य चरित्र[1] सिवा सरजा सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानो॥२६०

यों सिर पै छहरावत छार हैं जाते उठै असमान बगूरे।
भूषन भूधरऊ धरकैं जिनके धुनि धक्कन यों बल रूरे॥ ते सरजा सिवराज दिए कविराजन को गजराज गरूरे। सुंडन सों पहिले जिन सोखि कै फेरि महामद सों नद पूरे॥ २६१ ॥

श्री सरजा सलहेरि[2] के जूझ घने उमरावन के घर घाले।
कुंभ चदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले॥ भूषन या सिवराज कि धाक भए पियरे अरुने रँग वाले। लोहै कटे लपटे बहु लोहु[3] भए मुँह मीरन के पुनि लाले॥२६२॥

यों कवि भूषन भाषत है यक तौ पहिले कलिकाल कि सैली।

---

१ इस को पढ़ कर तुलसीदासजी की—

"भगत हेतु विधि भवन विहाई। सुमिरत सारद आवति धाई॥" "राम चरित सर बिनु अन्हवाए। सो श्रम जाय न कोटि उपाए॥" इत्यादि चौपाइयों का स्मरण हो आता है। इस विषय में हमने अपने विचार सरस्वती भाग १ संख्या १२ में "हिंदी का काव्य (आलोचना)" शीर्षक निबंध में प्रकट किए हैं। विषयी राजाओं के कारण लोभीकवियों ने नायिका इत्यादिक विषयों पर काव्य कर सरस्वती देवी को अपवित्र सा कर दिया था।

२ छंद सं० ९७ का नोट देखिए।

३ लहू, रुधिर।

अकथ युत[1] गथ के। भूपन यों साज्यो रायगढ़[2] सिवराज रहे देव चक चाहि कै बनाए राजपथ के॥ विन[3] अवलंब कलिकानि[4] आसमान में ह्वै होत बिसराम जहाँ इदु औ उदथ[5] के। महत उतंग मनि जोतिनकेसग[6] आनि कैयो रंग चकहा[7] गहत रवि रथ के॥ २८८॥

पूर्वरूप

लक्षण—दोहा

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय।
भूपन पूरब रूप सो कहत सयाने लोय॥ २८९॥

उदाहरण। मालती सवैया

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी।

---

१ वे (तालाब) अकथनीय हैं और उनके साथ कितनी ही गाथाएँ लगी हैं अर्थात् वे इतिहासों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं।

२ इसका वर्णन छंद नं० १४ के नोट एवं छंद नं० १५, २४ में देखिए। जान पड़ता है कि यह वर्णन रायगढ़ ही का है न कि राजगढ़ का। भूमिका देखिए।

३ बिना किसी चीज पर सहारा पाने के सूर्य और चंद्रमा आसमान में परेशान हो कर जिस रायगढ़ पर विश्राम ले लेते हैं।

४ परेशानी।

५ उदय व अस्त होनेवाला, सूर्य।

६ के संग आनि = से मिलान हो कर।

७ पहिए।

राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु व्यास के अंग सोहानो ॥
भूषन यों कलि के कबिराजन राजन के गुन पाय नसानो।
पुन्य चरित्र[1] सिवा सरजा सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥२६०

यों सिर पै छहरावत छार है जाते उठे असमान बगूरे।
भूषन भूधरऊ धरकै जिनके धुनि धक्कन यों बल रूरे ॥ ते सरजा सिवराज दिए कबिराजन को गजराज गरूरे। सुंडन सों पहिले जिन सोखि कै फेरि महामद सों नद पूरे ॥ २६१ ॥

श्री सरजा सलहेरि[2] के जुद्ध घने उमरावन के घर घाले।
कुंभ चदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले ॥ भूषन या सिवराज कि धाक भए पियरे अपने रँग वाले। लोहू कटे लपटे बहु लोहु[3] भए मुँह मीरन के पुनि लाले ॥२६२॥

यों कवि भूषन भाषत है यक तौ पहिले कलिकाल कि सैली।

---

१ इस को पढ़ कर तुलसीदासजी की—

"भगत हेतु विधि भवन बिहाई। सुमिरत सारद आवति धाई॥" "राम चरित सर बिनु अन्हवाए। सो स्रम जाय न कोटि उपाए॥" इत्यादि चौपाइयों का स्मरण हो आता है। इस विषय में हमने अपने विचार सरस्वती भाग १ संख्या १२ में "हिंदी का काव्य (आलोचना)" शीर्षक निबंध में प्रकट किए हैं। विषयी राजाओं के कारण लोभी कवियों ने नायिका इत्यादिक विषयों पर काव्य कर सरस्वती देवी को अपवित्र सा कर दिया था।

२ छंद नं० ६७ का नोट देखिए।

३ लहू, रुधिर।

तापर हिंदुन की सब राहनि, नौरँगसाहि करी अति मैली ॥
साहि तनै सिव के डर सों तुरकौ गहि वारिध की गति पैली।
बेद पुरानन की चरचा अरचा दुज देवन की फिरि फैली ॥२६३॥

अतद्गुण

लक्षण—दोहा

जहँ संगति ते और को गुन कछूक नहिँ लेत।
ताहि अतद्गुन कहत हैं भूषन सुकवि सचेत ॥२६४॥

उदाहरण—मालती सवैया

दीन दयालु दुनी प्रतिपालक जे करता निरम्लेछ मही के।
भूषन भूधर उद्धरिबो सुने और जिते गुन ते सब जी के ॥
या कलि मैं अवतार लियो तऊ तेई सुभाय सिवाजि बली के।
आय धस्यो हरि ते नर रूप पै काज करै सिगरे हरिही के ॥ २६५ ॥

पुनः—कवित्त मनहरण

सिवाजी खुमान तेरो खग्ग बढ़े मान बढ़े मानस लौं बढ़ लत कुरुप उछाह[१] ते। भूषन भनत क्यों न जाहिर जहान होय प्यार पाय तो से ही दिपत नर नाह ते ॥ परताप फैलो रहो सुजस लपेटो रहो बरनत खरो नर पानिप अथाह ते। रंग रग रिपुन के रकत सों रँगो रहै रातो दिन रातो पै न रातो होत स्याह ते ॥२६६॥

---

१ मानसरोवर की भाँति बेरखी उछाह में परिणत हो जाती है।

अपरच । दोहा

सिव सरजा की जगत मे राजति कीरति नौल।
अरि तिय अजन दृग हरे तऊ धौल की धौल ॥२९७॥

अनुगुण

लक्षण—दोहा

जहाँ और के सग ते बढै आपनो रग।
ता कहँ अनुगुन कहत हैं भूपन बुद्धि उतंग ॥२९८॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहि तनै सरजा सिवा के सनमुख आय कोऊ बचि जाय न गनीम भुज बल मे। भूपन भनत भोंसिला की दिलदौर सुनि धाक ही मरत म्लेच्छ औरँग के दल मैं॥ राती दिन रोवत रहत यवनी हैं सोक परोई रहत दिला आगरे सकल मैं। फज्जल कलित अँसुवान के उमग सग दूनो होत रोज रग जमुना के जल में ॥२९९॥

मीलित

लक्षण—दोहा

सदस वस्तु में मिलि जहाँ भेद न नेक लखाय।
ताको मीलित कहत है भूपन जे कबिराय ॥३००॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

इद्र निज हेरत फिरत गज इद्र अरु इंद्र को अनुज[१] हेरे

---

[१] इद्र के छोटे भाई अर्थात् विष्णु जो घोर समुद्र में शयन करते है।

'दुगधनदीस'[1] को। भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरै बि हेरै हंस को चकोर रजनीस को॥ साहि तनै सिवराज करनी करी है तैं जु होत है अचंभो देव कोटियो तैतीस को। पावन हेरे तेरे जस मैं हिराने निज गिरि को गिरीस हेरे गिरिजा गिरीस को॥२०१।

उन्मीलित

लक्षण—दोहा

सदस वस्तु मैं मिलत पुनि जानत कौनेहु हेत।
उनमीलित तासों कहत भूषन सुकवि सचेत॥ २०२॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव सुजस में मिले धौल छवि तूल।
बोल बास ते जानिए हंस चमेली फूल॥२०॥

सामान्य

लक्षण—दोहा

भिन्न रूप जहँ सदस ते भेद न जान्यो जाय।
ताहि कहत सामान्य हैं भूषन कवि समुदाय॥२०४॥

उदाहरण—मालती सवैया

पावस की यक राति भली हु महाबली सिंह सिवा गमके ते। म्लेच्छ हजारन ही कटिगे दस ही मरहट्टन के भमके ते॥

---

१ दुग्ध समुद्र।

भूपन हालि उठे गढ भूमि पठान कबंधन के धमके ते । भीरन के अवसान गये मिलि घोपनि[1] सों चपला चमके ते ॥२०५॥

विशेषक

लक्षण—दोहा

भिन्न रूप सादृश्य मैं लहिए कछु विसेख ।
ताहि विशेषक कहत हैं भूषन सुमति उलेख ॥२०६॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

अहमदनगर[2] के थान किरवान लै कै नवसेरी खान[3]

---

१ संगीन की भाँति एक हथियार । यथा "छत्रमान जेहि दिसि दिनै धारि घोप कर माहिं । तेहि दिसि सीस गिरीस पै बनत करोरन नाहिं" ॥ (छत्रप्रकाश) यहाँ अफ़ज़लखाँ वाली लड़ाई का इशारा भूषण जी ने किया है। जब खाँ दिन में मारा जा चुका था, तब शाम को किले में पाँच तोपें दागी गईं। इस पर नेता जी पालकर तथा मोरो पन्त ने खाँ की सेना पर रात में आक्रमण करके हजारों आदमियों को मारा और सेना भगी। यह सितम्बर सन १६५६ की घटना है। यहाँ १६७० वाली महोली या जँजीरा की लड़ाइयों का भी कथन सम्भव है।

२ निजामशाही "बादशाहों" की राजधानी। यहाँ पर शिवा जी ने नौशेरी खाँ को सन् १६५७ में लूटा था। यहीं १६६१ में शिवाजी के सेनापति प्रतापराव गूजर ने बादशाही अफ़सर महकूम सिंह को मारा था।

३ नौशेरी खाँ को खानदौरा की उपाधि थी (छंद नं० १०२ का नोट देखिए ।) कारतलब खाँ तथा करण सिंह भी इसी युद्ध में लड़े थे। शिवाजी ने अहमदनगर को इस मौके पर थोड़ा बहुत लूटा था।

ते खुमान भिख्यो धल ते। प्यादन सौं प्यादे पखरैतन सौं पखरैत बखतरवारे बखतरवारे हल ते ॥ भूपन भनत एते मान घमसान भयो जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते। सम वेष ताके, तहाँ सरजा सिवा के बाँके वीर जाने हाँके देत, भीर जाने चलते ॥२०७॥

पिहित

लक्षण—दोहा

परके मन की जानि गति ताको देत जनाय।
कछू क्रिया करि, कहित हैं पिहित ताहि कविराय ॥२०८॥

उदाहरण—दोहा

गैर मिसिल ठाढ़ो सिवा अंतरजामी नाम।
प्रकट करी रिस, साहि को सरजा करि न सलाम ॥२०९॥
आनि[1] मिल्यो अरि, यों गह्यो चखन चकत्ता चाव।
साहि तनै सरजा सिवा दियो मुच्छ पर ताव ॥२१०॥

प्रश्नोतर

लक्षण—दोहा

कोऊ बूझै बात कछु कोऊ उत्तर देत।
प्रश्नोत्तर ताको कहत भूषन सुकवि सचेत ॥ २११ ॥

---

१ वीर रस अपूर्व।

उदाहरण—मालती सवैया

लोगन सों भनि भूपन यों कहे खान[1] पवास कहा सिख दैहौ। आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहौ कि भगैहौ॥ पदिल को सभा बोलि उठी यों सलाह करो अब कहाँ भजि जैहौ। लीन्हो कहा लरिकै अफजल्ल कहा लरिकै तुमहूँ अब लैहो ?॥ ३१२॥

पुन:—दोहा

को दाता को रन चढो को जग पालनहार ?।
कवि भूपन उत्तर दियो सिव नृप हरि अवतार॥ ३१३॥

व्याजोक्ति

लक्षण—दोहा

आन हेतु सों आपनो जहाँ छिपावै रूप।
व्याज-उकुति तासों कहत भूपन सुकबि अनूप॥ ३१४॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहिन के उमराव जितेक सिवा सरजा सब लूटि लए हैं। भूपन ते विन दौलति ह्वै के फकीर ह्वै देस विदेस गए हैं॥ लोग कहैं इमि दच्छिन[2] जेय सिसौदिया रावरे हाल ठए हैं ?। देत रिसाय कै उत्तर यों हमहीं दुनिया ते उदास भए हैं[3]॥३१५॥

---

१ छंद नं० २०६ का नोट देखिए।

२ दक्षिण का जीतनेवाला सिसौदिया अर्थात् शिवाजी।

३ इन दो पदों का पाठांतर यों है—"ईजति राखि सकै अपनी इमि स्यानपनो

पुन.—दोहा

सिवा वैर औरँग बदन लगी रहै नित आहि।
[1]कबि भूषन बूझे सदा कहै देत दुख साहि[1] ॥ २१६ ॥

लोकोक्ति एवं छेकोक्ति

लक्षण—दोहा

कहनावति जो लोक की लोक उकुति सो जानि।
जहाँ कहत उपमान है छेक उकुति तेहि मानि ॥ २१७ ॥

उदाहरण

लोकोक्ति—यथा—दोहा

सिव सरजा की सुधि करौ भली न कीन्ही पीव।
सूया है दच्छिन चले धरे जात कित जीव ? ॥२१८॥

छेकोक्ति—यथा—दोहा

जे सोहात सिवराज को ते कवित्त रसमूल।
जे परमेसर पै चढ़ै तेई आछे फूल ॥ २१६ ॥

पुन.—किरीटी सवैया[2]

औरँग जो चढ़ि दच्छिन आवै तोहाँते सिधावै सोऊ बिनु

करि त्योर ठए हैं। भेटत ही सब ही सों कहैं हम या दुनियां तें उदास भए हैं।"

१ शाही, राज्यभार।

२ इस सवैया में "भगुणा" अर्थात् आठ भगण होते हैं। एक गुरु फिर दो लघु अक्षर = भगण।

कप्पर। दीनो मुहीम को भार बहादुर[1] छागो[2] सहै क्यों गयंद को झप्पर ? ॥ सासता खाँ सँग वे हठि हारे जे साहब सातएँ ठीक भुवप्पर। ये अब सूबहु आवैं सिवा पर "काल्हि के जोगी कलींदे[3] को खप्पर" ॥ ३२० ॥

वक्रोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ श्लेष सों काकु[4] सों अरथ लगावै और।
वक्र उकुति ताको कहत भूषन कवि सिरमौर ॥ ३२१ ॥

उदाहरण

श्लेष से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

साहि तनै तेरे वैर वैरिन को कौतुक सों बूझत फिरत कहौ काहे रहे तचि हौ ? सरजा के डर हम आए इते भाजि तब सिंह सों डराय याहू ठौर ते उकचि[5] हौ ॥ भूषन भनत वै कहैं

---

१ कदाचित् यह खानबहादुर=खाँजहाँ बहादुर के विषय में हो। इसका हाल छंद नं० ९६ में बहलोलवाले नोट में देखिए।

२ बकरा, छागा।

३ तरबूजा। "नई नाइन बाँस का नहरना" की तरह यह भी एक कहावत है।

४ वह प्रश्न जिससे उत्तर ध्वनित हो जाय—यथा "क्या मजाल ?"

५ उचकोगे, उठ भागोगे। सरजा यहाँ सिंह के अर्थ में आया है। सर जाह ऊँची पदवीवाले को कहते हैं और सिंह का पद ऊँचा है ही।

कि हम सिव कहैं तुम चतुराई सों कहत बात रचि हौ। सिव आपै रुठें तौ निपट कठिनाई तुम वैर त्रिपुरारि के त्रिलोक मैं न बचिहौ ॥ ३२२ ॥

काकु से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

सासता[1] खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जाय कै गँवायो है। भूपन भनत जौ लौं भेजो उत औरै तिन वे ही काज बरजोर कटक कटायो है॥ जोई सूबेदार जात सिवाजी सों हारि तासों अवरंग साहि इमि कहै मन भायो है। मुलुक लुटायो तौ लुटायो, कहा भयो ? तन आपनो बचायो महाकाज करि आयो है ॥ ३२३ ॥

पुन.—दोहा

करि मुहीम आये कहत हजरत मनसब देन।
सिव सरजा सौं जंग जुरि ऐहैं बचिकै है न ॥ ३२४ ॥

स्वभावोक्ति

लक्षण—दोहा

साँचो तैसो बरनिए जैसो जाति स्वभाव।
ताहि सुभावोकति कहत भूपन जे कबिराव ॥ ३२५ ॥

उदाहरण—मनहरण दण्डक

दान[2] समै द्विज देखि मेरहू कुबेरहू की संपति लुटायवे को

---

१ छंद नं० ३५ का नोट देखिए।

२ इस कवित्त में दान, दया तथा युद्ध वीर सभी वर्णित हैं और वीररस भी पूर्ण है।

हियो ललकत है। साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर सिव की कथान में सनेह झलकत है॥ भूषन जहान हिंदुवान के उबारिबे को तुरकान मारिबे को बीर बलकत है। साहिन सों लरिबे की चरचा चलति आनि सरजा के दृगन उछाह छलकत है॥ ३२६॥

काहू[1] के कहे सुने ते जाही ओर चाहै ताही ओर इकटक घरी चारिक चहत[2] हैं। कहे ते कहत बात कहे ते पियत खात भूषन भनत ऊँची साँसन गहत हैं॥ पौढ़े हैं तो पौढ़े बैठे बैठे खरे खरे हम को हैं कहा करत यों ज्ञान न गहत हैं। साहि के सपूत सिव साहि तव बैर इमि साहि सब रातौ दिन सोचत रहत हैं॥ ३२७॥

उमड़ि कुड़ाल[3] में खवास खान आए भनि भूषन त्यों धाए सिवराज पूरे मन के। सुनि मरदाने बाजे हय हिहनाने घोर मूछैं तरराने मुख बीर धीर जन के॥ एकै कहैं मार मार सम्हरि समर एकै म्लेच्छ गिरे मार बीच बेसम्हार तन के।

---

१ भयानक रस।

२ देखते हैं।

३ इसे शिवाजी ने सावंत वाड़ी के रईस से सन् १६६१ में जीता था। पहले यहाँ खवास खाँ रहता था, किंतु फिर करनाटक चला गया। तब शिवाजी ने कुडाल ले लिया।

कि हम सिव कहैं तुम चतुराई सों कहत बात रचि हौ। सिव आपै रुठैं तौ निपट कठिनाई तुम बैर त्रिपुरारि के त्रिलोक मैं न बचिहौ ॥ ३२२ ॥

काकु से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

सासता[1] खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जाय कै गँवायो है। भूषन भनत जौ लौं भेजौं उत औरै तिन वे ही काज बरजोर कटक कटायो है ॥ जोई सूबेदार जात सिवाजी सों हारि तासों अवरंग साहि इमि कहे मन भायो है। मुलुक लुटायो तौ लुटायो, कहा भयो? तन आपनो बचायो महाकाज करि आयो है ॥ ३२३ ॥

पुन.—दोहा

करि मुहीम आये कहत हजरत मनसब दैन।
सिव सरजा सों जंग जुरि पैहैं बचिकै है न ॥ ३२४ ॥

स्वभावोक्ति

लक्षण—दोहा

साँचो तैसो बरनिए जैसो जाति स्वभाव।
ताहि सुभावोकति कहत भूषन जे कबिराव ॥ ३२५ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

दान[2] समै द्विज देखि मेरहू कुबेरहू की संपति लुटायबे को

---

१ छंद नं० ३५ का नोट देखिए।

२ इस कवित्त में दान, दया तथा युद्ध वीर सभी वर्णित हैं और वीररस भी पूर्ण है।

कुंजरन परी कठिन कराह है ॥ सिंह सिवराज सलहेरि' के समीप ऐसो कीन्हो कतलाम दिली दल को सिपाह है । नदी रन मंडल रुहेलन रुधिर अजौं अजौं रविमंडल रुहेलन की राह है ॥ ३३१ ॥

गजघटा उमडी महा घनघटा सी घोर भूतल सकल मदजल सौं पटत है । पैला छाँडि उछलत सातौ सिंधु वारि, मन मुदित महेस मग नाचत कढत है ॥ भूषन बढत भौंसिला भुवाल को यों तेज जेतो सब बारहौ तरनि में बढत है । सिवाजी खुमान दल दौरत जहान पर आनि तुरकान पर प्रलै प्रगटत है ॥ ३३२ ॥

भाविक छवि

लच्छन—दोहा

जहँ दूरस्थित वस्तु को देखत बरनत कोय ।
भूषन भूषन राज भनि भाविक छवि सो होय ॥ ३३३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

सूबन साजि पठावत है नित फौज लखे मरहट्टन केरी ।
औरँग आपनि दुग्ग जमाति विलोकत तेरिये फौज दरेरी ॥
साहि तनै सिव साहि भई भनि भूषन यों तुव धाक घनेरी ।
रातहु द्यौस दिलीस तकै तुव सेन कि सूरति' सूरति' घेरी ॥३३४॥

---

१ छंद ९७ का नोट देखिए ।

२ शकल ।

३ छं० २०० का नोट । सूरत नाम का गुजरात में प्रसिद्ध शहर ।

कुडन[1] के ऊपर कडाके उठे ठौर ठौर जीरन[1] के ऊपर खडाके खडगन के ॥ ३२८ ॥

आगे आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद[2] मंद मंद मोद सकसै। अड्दार बडे गड्दारन[3] के हाँके सुनि अडे गैर[5] गैर माहिं रोस रस अकसै ॥ तुंडनाय सुनि गरजत गुंजरत भौंर भूषन भनत तेऊ महा मद छकसै। कीरति के काज महाराज सिवराज सब ऐसे गजराज कविराजन को बकसै ॥ ३२९ ॥

भाविक

लक्षण—दोहा

भयो, होनहारो, अरथ बरनत जहँ परतच्छ ।
ताको भाविक कहत हैं भूषन कवि मतिस्वच्छ ॥३३०॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

अजौं भूतनाथ मुंडमाल लेत हरषत भूतन अहार लेत अजहूँ उछाह है। भूषन भनत अजौं काटे करवालन के कारे

---

१ लोहे का टोप।

२ निरह मस्तर।

३ खेल कूद।

४ छंद ३१—३४ का नोट देखिए।

५ गैल गैल, राह राह।

पुन —दोहा

या पूना मैं मति टिकौ खान[1] बहादुर आय।
ह्याँई साहस खान को दीन्हीं सिवा सजाय ॥ ३३८ ॥

अत्युक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ सूरतादिकन की अति अधिकाई होय।
ताहि कहत अति उक्ति है भूपन जे कविलोय ॥ ३३९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक[1]

साहि तनै सिवराज ऐसे देत गजराज जिन्हैं पाय होत कविराज बे-फिकिरि हैं। झूलत झलमलात झूलें जरबाफन की जकरे जँजीर जोर करत किरिरि हैं ॥ भूपन भँवर भननात घन-नात घट पग झननात मनो घन रहे घिरि है। जिनकी गरज सुने दिग्गज बे आब होत मद ही के आब गरकाब होत गिरि हैं ॥ ३४० ॥

आजु यहि समे महाराज सिवराज तुही जगदेव[2] जनक

---

[1] बहादुर खाँजहाँ बहादर को कहते थे। इसे औरंगजेब ने १६७२ में

उदात्त

लक्षण—दोहा

अति संपति बरनन जहाँ तासों कहत उदात।
कै आनै सु लखाइए बड़ी आन की बात ॥३३५॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

द्वारन मतंग दीसें आँगन तुरंग हीसें बंदीजन बारन[1] असीसें जसरत हैं। भूषन बखानै जरबाफ के सम्याने ताने भालरन मोतिन के झुंड झलरत हैं॥ महाराज सिवा के नेवाजे कविराज ऐसे साजि कै समाज जेहि ठौर विहरत हैं। लाल करैं प्रात तहाँ नीलमनि करें रात याही भाँति सरजा की चरचा करत हैं॥ ३३६॥

जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारो गढ नाह के डरन कहैं खान यों बखान कै। भूषन खुमान यह सो है जेहि पूना माहिं लाखन मैं सासता[2] खाँ डार्‌यो बिन मान कै॥ हिंदुवान द्रुपदी की ईजति बचैबे काज झपटि बिराटपुर बाहर प्रमान कै। वहै है सिवा जी जेहि भीम ह्वै अकेले मार्‌यो अफ जल कीचक[3] को कीच घमसान कै॥ ३३७॥

---

१ दरवाजों पर अथवा बार बार।

२ शाइस्ता खाँ। छ० ३५ का नोट देखिए।

३ राजा बिराट का साला जिसने द्रौपदी का सतीत्व भंग करना चाहा था। इसे भीमसेन ने मार डाला था। (महाभारत, बिराट पर्व्व।)

पुन.—दोहा

या पूना में मति टिको खान[1] बहादुर आय।
ह्याँई साइस खान को दीन्हों सिवा सजाय ॥ ३३८ ॥

अत्युक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ सूरतादिकन की अति अधिकाई होय।
ताहि कहत अति उक्ति हैं भूषन जे कविलोय ॥ ३३९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक[2]

साहि तने सिवराज ऐसे देत गजराज जिन्हें पाय होत कविराज बे-फिकिरि हैं। झूलत झलमलात झूलैं जरबाफन की जकरे जँजीर जोर करत किरिरि हैं॥ भूषन भँवर भननात घननात घट पग झननात मनो घन रहे घिरि हैं। जिनकी गरज सुने दिग्गज बे आब होत मद ही के आब गड़काब होत गिरि हैं ॥ ३४० ॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही जगदेव[3] जनक

---

१ खान बहादुर खाँजहाँ बहादुर को कहते थे। इसे औरंगजेब ने १६७२ में दक्षिण का गवर्नर नियत किया था। इसका हाल छ० न० ९६ में बहलोलवाले नोट में देखिए।

२ इस छन्द में हाथियों के जंजीर पर जोर लगाकर गरजने तथा उसके फलों का विशेष बयान है।

३ पँवारों का बड़ा प्रसिद्ध और तेजस्वी वीर।

अजाति अम्बरीक सो। भूषन भनत तेरे दान-जल जलधि मैं गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक[1] सो ॥ चंद कर किंजलक[2] चाँदनी पराग उड़ बंद मकरंद बुंद पुंज के सरीक सो। कुंद[3] सम कयलास नाक गंग नाल तेरे जस पुंडरीक को अकास चंचरीक सो॥ ३४१ ॥

पुन.—दोहा

महाराज सिवराज के जेते सहज सुभाय।
औरन को अति उक्ति से भूषन कहत बनाय ॥ ३४२ ॥

निरुक्ति

लक्षण—दोहा

नामन को निज बुद्धि सों कहिए अरथ बनाय।
ताको कहत निरुक्ति हैं भूषन जे कविराय ॥ ३४३ ॥

उदाहरण—दोहा

कवि गन को दारिद दुरद याही दल्यो अमान।
याते श्री सिवराज को सरजा कहत जहान ॥ ३४४ ॥
हर्‍यो रूप इन मदन को याते भो सिव नाम।
लियो बिरद सरजा सबल अरि गज दलि संग्राम ॥३४५॥

---

१ खरिका, दाँत खोदने की सींक। तृण।

२ कमल फूल के बीच में चारों ओर जो पीली और सफेद सींकें सी होती हैं।

३ कुंद का छोटा सफ़ेद फूल।

पुनः—कवित्त मनहरण

आजु सिवराज महाराज एक तुही सरनागत जनन को दिवैया अभैदान को। फैली महिमंडल बडाई चहुँ ओर तातें कहिए कहाँ लौं ऐसे बडे परिमान को ? ॥ निपट गँभीर कोऊ लाँघि न सकत वीर जोधन को रन देत जैसे भाऊ[1] खान को। दिल दरियाव क्यों न कहै कविराव तोहिं तो में ठहरात आनि पानिप जहान को ॥ ३४६ ॥

हेतु

लक्षण—दोहा

"या निमित्त यह भयो" यौं जहँ बरनन होय।
भूषन हेतु बखानहीं कवि कोविद सब कोय ॥ ३४७ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

दारुन दुहुत हरनाकुस बिदारिबे को भयो नरसिंह रूप तेज बिकरार है। भूषन भनत त्योंहीं रावन के मारिबे को रामचंद्र भयो रघुकुल सरदार है॥ कंस के कुटिल बल बंसन बिधुंसिबे को भयो जदुराय बसुदेव को कुमार है। पृथी पुरहूत साहि के सपूत सिवराज म्लेच्छन के मारिबे को तेरो अवतार है ॥ ३४८ ॥

---

[1] भाऊसिंह के विषय में छंद नं० ३५ का नोट देखिए। इन्हें "भाऊखान" वैसे ही कहा गया है जैसे अमर (जयपुर) के महाराज जयसिंह "मिर्ज़ा" कहाते थे। वास्तव में भाऊ खाँ नामक कोई मुसलमान सरदार न था। सम्भव है कि भाऊ और खान दोनों का यहाँ कथन हो।

अनुमान

लक्षण—दोहा

जहाँ काज ते हेतु कै जहाँ हेतु ते काज।
जानि परत, अनुमान तहँ कहि भूषन कविराज ॥ ३४९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

चित्त अनचैन आँसू उमगत नैन देखि बीबी कहै बैन मियाँ कहियत काहि नै ? । भूषन भनत बूझे आए दरबार ते कँपत बार बार क्यों सम्हार तन नाहिनै ? ॥ सीनो धकधकत पसीनो आयो देह सब हीनो भयो रूप न चितौत बाएँ दाहिनै । सिवा जी की संक मानि गए हौ सुखाय तुम्हें जानियत दक्खिन को सूबा करो साहि नै ॥३५०॥

अंभा[1] सी दिन कि भई संभा सी सकल दिसि गगन लगन रही गरद छवाय है । चौरह गीधवायस समूह घोर सोर कर ठौर ठौर चारों ओर तम मड़राय है । भूषन अँदेस देस देस के नरेस गन आपुस मैं कहत यों गरब गँवाय है । बड़ो बड़वा को जितवार चहुँधा को दल सरजा सिवा को जानियत इत आयहै ॥ ३५१ ॥

---

१ गायब अर्थात् दिन गायब सा हो गया।

अथ शब्दालंकार

दोहा

जे अरथालकार ते भूषन कहे उदार।
अब शब्दालकार ये कहियत मति अनुसार ॥३५२॥

छेक एवं लाट अनुप्रास

लच्छन—दोहा

सुरसमेत अच्छर पदनि आवत सहस प्रकास।
भिन्न अभिन्न पदन सों छेक लाट अनुप्रास ॥ ३५३ ॥

उदाहरण—अमृतध्वनि छंद[1]

दिल्लिय दलन दवाय करि सिव सरजा निरसंक। लुट्टि

---

[1] इसमें छ पद होते हैं जिनमें प्रथम दो मिलकर एक दोहा होते हैं, और चार अंतिम पदों में वास्तव छंद होता है। अंत के चारों पदों में आठ आठ कलाओं के पीछे यति होती है। हमने जिन आचार्यों के दिए हुए लक्षण देखे, उन्होंने यह नहीं लिखा है कि इस छंद के पदों का अंतिम अक्षर अवश्य लघु होता है, पर यह बात सदा पाई जाती है। भूषणजी इसमें कुंडलिया की भाँति प्रथम के एक या दो शब्द अंत में भी अवश्य लाते हैं, यद्यपि यह आवश्यक नहीं है। अन्य कवियों की अमृतध्वनियों में थोड़े बहुत शब्द अथवा अक्षरसमूह निरर्थक आ जाते हैं, पर भूषणजी इस दोष से खूब ही बचे हैं। इसका नाम जैसा अच्छा है, वैसा ही यह पढ़ने में बड़ा टेढ़ा छंद है। इसका नाम तो 'विषध्वनि" होता तो ठीक था।

लियो सूरति सहर बकक्करि[1] अति डंक ॥ बकक्करि अति डक्करि अस सक्कुलि[2] खल। सोचच्कित भरोचच्चलिय[3] विमोचच्चजल ॥ तद्दद्दमन[4] कद्दिक[5] सोइ रद्दिलिय[6]। सद्दिसि[7] दिसि भद्दविभद्द[8] रद्दिलिय[9] ॥ ३५४ ॥
गत बल खानदलेल[10] हुव खान बहादुर मुद्ध।

---

१ हका बक करके।

२ इस तरह सब खलों को सशक करके।

३ भरोच शहर भागा।

४ यही बात मन में ठान कर।

५ कठिन (पूरे) तौर से ठीक करके।

६ रट कर अर्थात् बार बार कह कर ठेल दिया।

७ भली भाँति सब दिशाओं में।

८ भद होकर और दब कर। या भावों की भद (गर्दा) से दब कर।

९ दिल्ली रद हो गई।

१० दिलेर खाँ के विषय में छंद न० २१२ के नोट में मिर्जा जयसिंह वाला नोट देखिए। शिवाजी की हार के बाद दिलेर खाँ (दलेल खाँ) दक्षिण और मालव का सूबेदार रहा। सन् १६७२ में दिलेर खाँ ने चाकन और सलहेरि को साथ साथ घेरा और सलहेरि में उसकी फौज को शिवाजी ने खूब ही खबर ली। छं० न० ९७ का नोट देखिए। १६७७ में दिलेर खाँ ने गोलकुंडा पर धावा किया था, पर मदन्नपंत से उसे हारना पड़ा। १६७८ में शंभाजी अपने पिता (शिवाजी) से नाराज होकर दिलेर खाँ के यहाँ भाग गया और उसने बाप बेटे को लड़ाना चाहा

सिव सरजा सलहेरि[1] ढिग कुद्धद्धरि[2] किय युद्ध ॥
कुद्धद्धरि किय युद्दध्रुव[3] अरि अद्धद्धरि[4] धरि ।
मुड्डरि[5] तहँ रुड्डफरत[6] डुड्डग[7] भरि ॥
खेद्दिद्दर[8] वर छेद्दिद्दय[9] करि भेद्दधि[10] दल ।
जग्गति[11] सुनि रंग्गलि[12] अवरंग्गस[13] थल ॥ ३५५ ॥

पर औरंगजेब ने उसे (शंभाजी को) दिल्ली भेज देने को लिखा । इसी बीच में दिलेर खाँ शिवाजी के सेनापति जनार्दन पंत से युद्ध में हारा और शंभाजी को दिल्ली न भेज कर उसने शंभाजी से अपना बचाव न तोड़ने को जान बूझ कर उसे भाग जाने दिया । दिलेर खाँ १६८४ में मरा । सलहेरि के युद्ध में दिलेर खाँ तथा खान बहादुर मिल कर नेता थे ।

१ पृ० ६७ का नोट देखिए । २ क्रोध धर कर ।
३ ध्रुव (निश्चय) युद्ध किया । ४ आधे आधे करके, काट कर ।
५ मुंड डाल कर । ६ रुंड फफार रहे हैं ।
७ रुंड (हाथ कटे हुए कबंध) डग भरते (दौड़ते) हैं ।
८ दर (स्थान, मोरचा) से खेद कर ।
९ छेद डाला ।
१० फौज के भेद (पर्तों) को दही ऐसा फेंट डाला ।
११ जग का हाल ।
१२ रंग गल गया ।
१३ बल थाता रहा ।

लिय धरि मोहकम[1] सिंह कहँ अरु किसोर नृपकुम्म[2]। श्री सरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि[3] करि धुम्म ॥ भुम्मि-म्मधि किय धुम्मम्मड़ि[4] रिपु झुम्मम्मलिकरि[5]। जग्गग्गरजि[6] उतंगग्गरब[7] मतगग्गन[8] हरि ॥ लक्खक्खन[9] रन दक्खक्खलनि[10] अलक्खक्खिति[11] भरि। मोलल्लहि[12] जस लोलल्लरि[13] बहलोलल्लिय[14] धरि ॥ ३५६ ॥

---

१ छ० २३६ का नोट देखिए।

२ नृप कुमार किशोर सिंह, कोटा नरेश महाराज माधव सिंह के पुत्र थे। दक्षिण में ये मुगलों की ओर से लड़ने गए थे। वहाँ शिवाजी से भी इनसे लड़ाई हुई होगी। सन् १६८८ ई० तक ये दक्षिण में लड़े थे। सल्हेरि के युद्ध में इनका पकड़ा जाना भूषण कहते हैं।

३ भूमि में।

४ धूम छादित कर।

५ झुम्मा (मुँह) मल कर।

६ जग में गरज कर।

७ ऊँचे गर्ववाले।

८ हाथियों के समूह।

९, १०, ११ लाखों दल खलन से घायल (मर के) रण (में) अलक्षित पृथ्वी भर दी। पृथ्वी नहीं दिखाई देती थी, केवल मृत योद्धा दिखाई देते थे।

१२ मोल लेकर।

१३ नवल (नई तरह से) लह कर।

१४ पीछे से बढ़ कर बहलोल के बराबर पहुँच कर शिवाजी ने उसे जीत लिया। इस छन्द में मार्च सन् १६७३ वाले पनाले के युद्ध तथा १६७२ वाले सलहेरि के युद्ध के कथन हैं।

लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जंग।
भनि भूषन भूपति भजे भग्गगरब तिलंग॥
भग्गगरब तिलंगग्गयउ कलिंगग्गलि अति।
दुद्दबि दुदु ददद्दलनि[1] बुलंदद्दसति[2]॥
लच्छच्छिन्न करि म्लेच्छच्छय किय[3] रच्छच्छबि[4] छिति।
हल्लल्लगि[5] नरपल्लल्लरि परनल्लल्लिय[6] जिति॥ ३५७॥

पुनः। छप्पय

मुंड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन। गिद्ध लसत कहुँ सिद्ध हँसत सुख वृद्धि रसत मन॥ भूत फिरत करि बूत भिरत सुर दूत घिरत तहँ। चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि

---

१ युद्ध में दब कर दोनों दलों (तिलंग और कलिंग) को दर्द (दुःख) हुआ। तिलंग और कलिंग उस समय गोलकुंडा के राज्य में थे। यह वर्णन सन् १६७०-७२ का है, जब गोलकुंडा दबकर आपको कर देने लगा था। तिलंग का कोई स्वतंत्र राजा न था वरन् गोलकुंडा के अधीनस्थ राजे माने होंगे। १६७०—७२ में शिवाजी ने गोलकुंडा के सब प्रान्त लूटे और स्वयं सुल्तान से ६६ करोड़ रुपए लूट में लिए।

२ बड़ा डर हुआ।

३ क्षण भर में लाखों म्लेच्छों का क्षय करके।

४ भूमि (भारत भूमि) की छवि की रक्षा की।

५ हल्ला (धावा) कर।

६ परनाले (छंद १०७ का नोट देखिये) को छीन लिया।

लिय घरि मोहकम[1] सिंह कहँ अरु किसोर नृपकुम्म[2]। श्री सरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि[3] करि धुम्म ॥ भुम्मिम्मधि किय धुम्मम्मड़ि[4] रिपु जुम्मम्मलिकरि[5]। जग्गगरजि[6] उतंगगरव[7] मतंगग्गन[8] हरि ॥ लक्खक्खन[9] रन दक्खक्खलनि[10] अलक्खक्खिति[11] भरि। मोलल्लहि[12] जस नोलल्लरि[13] बहलोलल्लिय[14] धरि ॥ ३५६ ॥

---

१ छ० २३६ का नोट देखिए।

२ नृप कुमार किशोर सिंह, कोटा नरेश महाराज माधव सिंह के पुत्र थे। दक्षिण में ये मुगलों की ओर से लड़ने गए थे। वहीं शिवाजी से भी इनसे लड़ाई हुई होगी। सन् १६८८ ई० तक ये दक्षिण में लड़े थे। सलहेरि के युद्ध में इनका पकड़ा जाना भूषण कहते हैं।

३ भूमि में।

४ धूम छादित कर।

५ झुम्मा (झुंड) मल कर।

६ जग में गरज कर।

७ ऊँचे गर्ववाले।

८ हाथियों के समूह।

९, १०, ११ लाखों दक्ष खलन से रण (मर के) रण (में) अलक्षित्र पृथ्वी भर दी। पृथ्वी नहीं दिखाई देती थी, केवल मृत योद्धा दिखाई देते थे।

१२ मोल लेकर।

१३ नवल (नई तरह से) लड़ कर।

१४ पीछे से बढ़ कर बहलोल के बराबर पहुँच कर शिवाजी ने उसे जीत लिया। इस छन्द में मार्च सन् १६७३ वाले पनाले के युद्ध तथा १६७२ वाले सलहेरि के युद्ध के कथन हैं।

लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जग।
मनि भूषन भूपति भजे भग्गरत्थ तिलग॥
भग्गरत्थ तिलगग्गयउ कलिंगग्गलि अति।
दुदद्दयि दुद्दु दंदद्दलनि[1] बुलंदद्दहसति[2]॥
लच्छच्छिन्नन करि म्लेच्छच्छय किय[3] रच्छच्छवि[4] छिति।
हल्लल्लगि[5] नरपल्लरल्लरि परनल्ललिलय[6] जिति॥ ३५७॥

पुन: । छप्पय

मुंड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन। गिद्ध लसत कहुँ सिद्ध हँसत सुख वृद्धि रसत मन॥ भूत फिरत करि बूत भिरत सुर दूत विरत तहँ। चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि

---

१ युद्ध में दब कर दोनों दलों (तिलंग और कलिंग) को दर्द (दुःख) हुआ। तिलंग और कलिंग उस समय गोलकुंडा के राज्य में थे। यह वर्णन सन् १६७० ७२ का है, जब गोलकुंडा दबकर आपको कर देने लगा था। तिलंग का कोई स्वतन्त्र राजा न था वरन् गोलकुंडा के अधीनस्थ राजे माने होंगे। १६७०—७२ में शिवाजी ने गोलकुंडा के सब प्रान्त लूटे और स्वयं सुल्तान से एक करोड़ रुपए लूट में लिए।

२ बड़ा डर हुआ।

३ क्षण भर में लाखों म्लेच्छों का क्षय करके।

४ भूमि (भारत भूमि) की छवि की रक्षा की।

५ हल्ला (धावा) कर।

६ परनाले (छंद १०७ का नोट देखिये) को जीत लिया।

—

डंडि[1] मचत जहँ ॥ इमि ठानि घोर घमसान अति भूपन तेज कियो अटल। सिवराज साहि सुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल ॥ ३५८ ॥

कुद्ध फिरत अति युद्ध जुरत नहि रुद्ध मुरत भट। खग्ग बजत अरि वग्ग[2] तजत सिर पग्ग सजत चट ॥ छुकि फिरत मद झुकि भिरत करि कुकि गिरत गनि। रग रकत[3] हर सग[4] छकत चतुरंग थकत भनि ॥ इमि करि सगर अति ही विषम भूपन सुजस कियो अचल। सिवराज साहि सुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल ॥ ३५९ ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

बानर बरार[5] बाघ बैहर बिलार बिग[6] बगरे बराह जान बरन के जोम हैं। भूपन भनत भारे भालुक भयानक हैं भीतर भवन भरे लीलगऊ लोम[7] हैं ॥ पैंडायल गज गन गैंडा गररात गनि गेहन में गोहन[8] गरूर गहे गोम[9] हैं। सिवाजी कि

---

१ दंड लेने की, डाँट लेने की।
२ घोड़े की बाग।
३ मजे के नाच में। रकत फारसी में नाच को कहते हैं।
४ साथी गण (यहाँ पर हर के साथी अर्थात् भूत प्रेत)
५ बरियार। ६ भेड़िया।
७ लोमड़ी।
८ गोह नामक जन्तुओं ने।
९ श्वान। (यह शब्द गोंव से निकला है)

धाक, मिले खल कुल खाक, बसे खलन के खेरन खबीसन के खोम[1] हैं ॥ ३६० ॥

तुरमती[2] तहखाने तीतर गुसुलखाने सूकर सिलहखाने कूकत करीस हैं। हिरन हरमखाने स्याही हैं सुतुरखाने पाढ़े[3] पीलखाने औ करजखाने[4] कीस हैं ॥ भूषन सिवाजी गाजी खग्ग सों खपाए खल, खाने खाने खलन के खेरे भये[5] खीस हैं। खड़गी खजाने खरगोस खिलवतखाने[7] खीसें खोले खस खाने खाँसत खबीस हैं ॥ ३६१ ॥

अन्यच—दोहा

औरन के जाँचे कहा नहिँ जाँच्यो सिवराज ?।
औरन के जाँचे कहा जो जाँच्यो सिवराज ? ॥ ३६२ ॥

यमक अनुप्रास

लक्षण—दोहा

भिन्न अरथ फिरि फिरि जहाँ ओई अच्छर वृन्द।
आवत हैं, सो जमक करि बरनत बुद्धि बुलन्द ॥ ३६३ ॥

---

१ कौम, जाति   २ तुरमुती, एक शिकारी पची।

३ एक प्रकार का मृग।   ४ मुर्गों के रहने का घर।

५ खलों का एक एक घर नष्ट हो गया।

६ गैंडा।

७ एकांत का कमरा।

उदाहरण। कवित्त मनहरण

पूलावारी[1] सुनि कै अमीरन की गति लई भागिवे को मीरन समीरन की गति है। मारयो जुरि जग जसवंत[2] जसवंत[3] जाके सग केते रजपूत[4] रजपूत पति[5] है॥ भूषन भनै यों कुलभूषन भुसिल सिवराज! तोहि दीन्ही सिव राज बरकति है। नौहू खंड दीप[6] भूप भूतल के दीप[7] आजु समै के दिलीप[8] दिलीपति को सिदति[9] है॥ ३६४॥

पुनिरुक्तिवदाभास

लक्षण—दोहा

भासति है पुनरुक्ति सी नहिं निदान पुनरुक्ति।
वदाभास-पुनरुक्ति सो भूषन बरनत युक्ति॥ ३६५॥

---

१ शाइस्ता खाँ का इशारा है।

२ जसवत सिंह (छंद नं० ३५ का नोट)

३ यशवाला, यशी। ४ राजपूत।

५ राजपूतों का स्वामी। राजपूत पति जसवन्त जसवन्त मारयो है, जाके संग केते रजपूत (थे)।

६ द्वीप सात हैं।

७ चिराग।

८ रघु के पिता राजा दिलीप।

९ सीदति, कष्ट देती है।

उदाहरण। कवित्त मनहरण

अरिन के दल सैन[1] संगर में समुहाने टूक टूक सकल कै डारे घमसान में। बार बार रूरो महानद परवाह पूरो बहत है हाथिन के मद जल दान में॥ भूषन भनत महा बाहु भौंसिला भुवाल सूर,[2] रवि कैसो तेज तीखन कृपान में। माल मकरंद जू के नंद कला निधि तेरो सरजा सिवाजी जस जगत[3] जहान में॥ २६६॥

चित्र

लक्षण—दोहा

लिखे सुने अचरज बढ़ै रचना होय विचित्र।
कामधेनु आदिक घने भूषन बरनत चित्र॥ २६७॥

उदाहरण (कामधेनु चित्र)। माधवी[4] सवैया

---

१ शयन (में) सग रहे अर्थात् साथ ही साथ मरे पड़े हैं।

२ वीर।

३ जागता है।

४ इस सवैया में "वसुगा" अर्थात् आठ सगण होते हैं। सगण के तीन अक्षरों में प्रथम दो लघु और अंतिम गुरु होता है। देवजी इस दूसरे प्रकार की सवैया को माधवी कहते हैं और आठ सगण वाले सवैया का वर्णन नहीं करते। कविराज श्री सुखदेव मिश्र इसी सवैया को "वाम" कहते हैं और इस "वसुगा" वाली का नाम उन्होंने माधवी लिखा है। भूषण जी का यह कामधेनु चित्रवाला छंद बिलकुल अच्छा नहीं। इसमें ७ × ४ = २८ छंद अवश्य बनते हैं। ऐसे छंद आप अच्छे हो भी नहीं सकते।

उदाहरण। कवित्त मनहरण

पूनावारी[1] सुनि कै अमीरन की गति लई भागिबे को मीरन समीरन की गति है। मार्‍यो जुरि जंग जसवंत[2] जस वंत[3] जाके संग केते रजपूत[4] रजपूत पति[5] है॥ भूषन भनै यों कुलभूषन भुसिल सिवराज! तोहि दीन्ही सिव राज बर-कति है। नौहू खंड दीप[6] भूप भूतल के दीप[7] आजु समै के दिलीप[8] दिलीपति को सिदति[9] है॥ ३६४॥

पुनिरुक्तिवदाभास

लक्षण—दोहा

भासति है पुनरुक्ति सी नहिं निदान पुनरुक्ति।
वदाभास-पुनरुक्ति सो भूषन बरनत युक्ति॥ ३६५॥

---

१ शाइस्ता खाँ का इशारा है।

२ जसवंत सिंह (छंद नं० ३५ का नोट)

३ यशवाला, यशी।　　　　४ राजपूत।

५ राजपूतों का स्वामी। राजपूत पति जसवंत जसवंत मार्‍यो है, जाके संग केते रजपूत (थे)।

६ द्वीप सात हैं।

७ चिराग़।

८ रघु के पिता राजा दिलीप।

९ सीदति, कष्ट देती है।

उदाहरण। कवित्त मनहरण

अरिन के दल सैन[1] संगर में समुहाने टूक टूक सकल कै डारे घमसान में। घार घार करो महानद परवाह पूरो बहत है हाथिन के मद जल दान में॥ भूषन भनत महा बाहु भौंसिला भुवाल सूर,[2] रवि कैसो तेज तीखन कृपान में। भाल मकरंद जू के नंद कला निधि तेरो सरजा सिवाजी जस जगत[3] जहान में॥ ३६६॥

चित्र

लक्षण—दोहा

लिखे सुने अचरज बढ़ै रचना होय विचित्र।
कामधेनु आदिक घने भूषन बरनत चित्र॥ ३६७॥

उदाहरण (कामधेनु चित्र)। माधवी[4] सवैया

---

१ रायन (में) संग रमे अर्थात साथ ही साथ मरे पड़े हैं।

२ वीर।

३ जगता है।

४ इस सवैया में "वसुसा" अर्थात् आठ सगण होते हैं। सगण के तीन अक्षरों में प्रथम दो लघु और अंतिम गुरु होता है। देवजी एक दूसरे प्रकार की सवैया को माधवी कहते हैं और आठ सगण वाली सवैया का बयान नहीं करते। कविराज श्री सुखदेव मिश्र इसी सवैया को "वाम" कहते हैं और इस "वसुसा" वाली का नाम इन्होंने माधवी लिखा है। भूषण जी का यह कामधेनु चित्रवाला छंद बिलकुल अच्छा नहीं। इसमें ७ × ४ = २८ छंद अवश्य बनते हैं। ऐसे छंद प्राय अच्छे हो भी नहीं सकते।

ध्रुव जो	गुरता	तिनको	गुरु भूषन	दानि बड़ो	गिरजा	पिव है।
ध्रुव जो	हरता	रिनको[1]	तरु[2] भूषन	दानि बड़ो	सिरजा[3]	छिव[4] है।
भुव जो	भरता	दिनको[5]	नरु भूषन	दानि बड़ो	सरजा	सिव है।
ध्रुव जो	करता	इनको	अरु भूषन	दानि बड़ो	बरजा[6]	सिव है २६८

संकर

लक्षण—दोहा

भूषन एक कवित्त मैं भूषन[7] होत अनेक।
संकर ताको कहत है जिन्हें कवित की टेक ॥२६९॥

उदाहरण। मनहरण दण्डक

ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज भूषन जे बाज की समाजै निदरत हैं। पौन[8] पाय हीन, हग घूंघट में लीन, मीन

---

१ (औरों के) कर्ज को।   २ कल्प वृक्ष।
३ रचा हुआ, पैदायशी।   ४ छवि, सम्भव।   ५ वर्तमान समय का।
६ वर जानिए है, बड़ा जानकार (ज्ञाता) है।
७ अलंकार।
८ अनुप्रास, ललितोपमा, एवं प्रतीप अलंकार।
९ अनुप्रास एवं अधिक तद्रूप रूपक।

जल में विलीन, क्यों बराबरी करत हैं ? ॥ सबतें चलाक चित तेऊ कुलि आलम के रहैं उर अतर में धीर न धरत है। जिन चढ़ि आगे को चलाइयतु तीर, तीर[3] एक भरि तऊ तीर पाछे ही परत हैं ॥३७०॥

अथालङ्कार नामावली । गीतिका छन्द[4]

उपमा अनन्वै कहि बहुरि उपमा प्रतीप प्रतीप । उपमेय[5] उपमा है बहुरि मालोपमा कथि दीप ॥ ललितोपमा रूपक बहुरि परिनाम पुनि उल्लेख । सुमिरन भ्रमौ संदेह सुद्धापन्हु-त्यौ सुभ बेख ॥३७१॥

हेतुअपन्हुत्यौ बहुरि परजस्तपन्हुति जान। सुभ्रात पूर्ण अपन्हुत्यो छेकाअपन्हुति मान ॥ बर कैतवापन्हुति गनौ उतप्रेक्ष बहुरि बखानि । पुनि रूपकातिसयोकि भेदक अतिसयोक्ति सुआनि ॥३७२॥

अरु अक्रमातिसयोकि चचल अतिसयोकिहि लेखि । अ य- तअतिसैउक्ति पुनि सामान्य चारु विसेखि ॥ तुलियोगिता दीपक अवृति प्रतिवस्तुपम दृष्टांत । सु निदर्सना व्यतिरेक और सहोक्ति बरनत शांत ॥३७३॥

---

१ अनुप्रास एव प्रतीप ।

२ यमक एव अत्युक्ति ।

३ जितनी दूर पर जाकर तीर गिर पड़े ।

४ यह छब्बीस कला का छन्द होता है । इसके प्रत्येक पद के अन्त में लघु अक्षर होता है । ५ उपमेयोपमा ।

सु विनोक्ति भूपन समासोक्तिहु परिकरौ अरु वंस। परिकर सु अंकुर श्लेष त्यौं अप्रस्तुतौपरसंस ॥ परयायउक्ति गनाइए व्याजस्तुतिहु आक्षेप। वहुरो विरोध विरोधभास बिभावना सुख खेप ॥३७४॥

सु बिसेपउक्ति असंभवौ यहुरे असगति लेखि। पुनि विषम सम सुविचित्र प्रहपन¹ अरु विषादन पेखि॥ कहि अधिक अन्योन्यहु विसेष व्यघात भूपन चारु। अरु गुफ एकावली मालादीपकहु पुनि सारु ॥३७५॥

- पुनि यथासंख्य बखानिए परजाय अरु परिवृत्ति। परिसख्य कहत विकल्प हैं जिनके सुमति संपत्ति॥ वहुरयो समाधि समुच्चयो पुनि प्रत्यनीक बखानि। पुनि कहत अर्थापत्ति कविजन काव्यलिंगहि जानि ॥३७६॥

अरु अर्थअंतरन्यास भूपन प्रौढउक्ति गनाय। संभावनामिथ्याध्यवसितऽरु यौं उल्लासहि गाय॥ अवज्ञा अनुज्ञा लेस तद्गुन पूर्वरूप उलेखि। अनुगुन अतद्गुन मिलित उन्मीलितहि पुनि अवरेखि ॥३७७॥

सामान्य और विशेष पिहितौ प्रश्न उत्तर आनि। पुनि व्याजउक्ति रु लोकउक्ति सु छेकउक्ति बखानि॥ वक्रोकि जानि सुभाव उक्तिहु भाविकौ निरधारि। भाविकछविहु सु उदात्त कहि अत्युक्ति बहुरि बिचारि ॥३७८॥

---

१ प्रहर्षण।

बरने निरुक्तिहु हेतु पुनि अनुमान कहि अनुप्रास। भूषन भनत पुनि जमक गनि पुनरुक्तिवदाभास ॥ युत चित्र सकर एक सत भूषन कहे अरु पाँच[1]। लखि चारु ग्रथन निज मतो[2] युत सुकवि मानहु साँच ॥३७६॥

दोहा

सुभ सत्रहसै तीस पर बुध सुदि[3] तेरसि मान।
भूषण सिव भूषन कियो पढ़ियौ सुनो सुजान ॥३८०॥

आशीर्वाद–मनहरण दडक

एक प्रभुता को धाम, सजे तीनो वेद काम, रहै पच आनन षडानन सरबदा। सातो बार आठो याम जाचक नेवाजे नव

---

१ एक + सत + पाँच = १०६ अलकार। भूषण जी १०६ अलकार बयान करना लिखते हैं, पर ग्रथ में १०४ अलकार पाए जाते हैं, लुप्तोपमा, न्यूनाधिक रूपक और गमगुप्तोत्प्रेक्षा के लक्षण और उदाहरण ग्रथ में दिए हैं (छद न० ३६–३८, ६४–८६ और १०६–१०८ देखिए) और ये सब छद भूषण कृत अवश्य जान पड़ते हैं, पर इनका नाम इस सूची में नहीं है। कदाचित् भूषण जी ने इन्हें मुख्य अलंकारों में न माना हो।

२ दूसरे आचार्यों के मत के अतिरिक्त इन्होंने कुछ बातें अपने ही मत से लिखी हैं। जान पड़ता है कि इसी कारण कभी कभी इनके लक्षण अन्य आचार्यों से भिन्न हो जाते हैं (छद न० ६०, १४९, २५५ और २६७ आदि देखिए)।

३ संवत् १७३० बुध सुदी १३ को ग्रन्थ समाप्त हुआ, पर किस मास में, सो नहीं लिखा। इसका ब्योरा भूमिका में देखिए। कार्तिक ठीक बैठता है।

अवतार थिर राजै कृपन[1] हरि गदा ॥ सिवराज भूपन अटल रहै तौलौं जौलौं त्रिदस भुवन सब, गंग श्री नरमदा। साहि तनै साहसिक भौंसिला सुरज बंस दासरथि राज तौलौं सरजा थिर सदा ॥३८१॥

पुन: । दोहा

पुहुमि पानि रवि ससि पवन जय लौं रहे अकास ।
सिव सरजा तब लौ जियौ भूपन सुजस प्रकास ॥३८२॥

इति श्री कवि भूपण विरचिते शिवराज भूषणे
अलंकार वर्णन समाप्तम् ।

शुभमस्तु ।

श्री शिवा बावनी[2]

छप्पय[3]

कौन करै बस वस्तु कौन यहि लोक बडो अति ? । को साहस को सिंधु कौन रज लाज धरे मति ? ॥ को चकवा को

---

१ कृपाण, तलवार ।

२ जैसा कि भूमिका में लिखा गया है, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, वरन् भूषण जी के ५२ छंदों का एक संग्रह मात्र है। इसी हेतु प्रचलित प्रतियों का क्रम छोड़ कर हमने अपना नया क्रम स्थिर किया है, क्योंकि हम उक्त प्रचलित क्रम को बहुत ही अनुपयुक्त समझते हैं।

३ यह छंद "स्फुट कविता" से लेकर उपयुक्त जान हमने यहाँ रख दिया है।

सुखद बसै को सकल सुमन महि ? । अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो कहि ? ॥ जग बूझत उत्तर देत इमि कवि भूषन कवि कुल सचिव । दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहि-नंद मकरंद[1] सिव ॥ १ ॥

कवित्त । मनहरण

साजि चतुरंग बीर रंग में तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है । भूषन भनत नाद बिहद नगारन के नदी नद मद गब्बरन[2] के रलत है ॥ ऐल[3] फैल खैल भैल[4] खलक मैं गैल गैल गजन की ठेल पेल सैल उसलत है । तारा सो तरनि धूरि धारा मैं लगत, जिमि थारा पर पारा पारावार[5] यों हलत है ॥ २ ॥

बाने[6] फहराने घहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव राने देस देस के । नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि बाजत निसाने[7] सिवराज जू नरेस के[8] ॥ हाथिन के हौदा उकसाने

---

१ माल मकरद ।

२ गर्व धारियों के ।

३ अहिलौ, बहुत विशेष ।

४ खलमल । ५ समुद्र । ६ एक भंडीदार भाला ।

७ निशान का अर्थ भंडा है, पर भूषणजी ने उसे डंका के अर्थ में लिखा है।

८ सरदार कवि ने इसके द्वितीय पद के अंतिम भाग को यों लिखा है—"सुनि बजत निसाने भाउ सिंहजू नरेस के" और तीसरे पद का प्रथमार्द्ध यों—"ककुभ

कुंभ कुंजर के भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के। दल के दरारे¹ हुते कमठ करारे फूटे केरा कैसे पात बिहराने फन सेस के ॥ ३ ॥

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहु मिलि मिलि आपुस में गावत बधाई है। भैरों भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरि आई है॥ किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली, डिम डिम डमरू दिगंबर बजाई है। सिवा पूँछैं सिव सों समाज आजु कहाँ चली, काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है ? ॥ ४ ॥

बद्दल न होहिँ दल दच्छिन घमंड माहिँ घटा हू न होहिँ दल सिवाजी हँकारी के। दामिनी दमक नाहिँ खुले खग्ग बीरन के, बीर सिर छाप लखु तीजा² असवारी के॥ देखि देखि मुगलों की हरमैं भवन त्यागैं उझकि उझकि उठै बहत बयारी के। दिल्ली मति भूली कहै बात घन घोर घोर बाजत नगारे जे सितारे गढ़ धारी के ॥ ५ ॥

✓ बाजि गजराज सिवराज सैन साजतहि दिल्ली दिलगीर दसा

के कुंजर कसमसाने गंग भनै"। परंतु शब्दों एवं वाक्य-रचना से यह भूषण कृत, जँचता है। इसके अतिरिक्त गंगजी अकबर शाह के समय में थे, पर भावसिंह सन् १६५८ ईसवी में बूँदी की गद्दी पर बैठे, सो यह कवित्त गंगकृत नहीं हो सकता।

१ सेना के दरेरे (दबाव) से।

२ सम्भवतः तीज का चन्द्रमा।

दीरघ दुगन की। तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न घामे घुमरात छोडि सेजियाँ सुखन की॥ भूषन भनत पतिबाँह बहियाँ न[1] तेऊ छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की[2]। बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ[3] नलिन पर लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की॥ ६॥

कत्ता की कराकनि[4] चकत्ता को कटक काटि कीन्ही सिव-राज बीर अकह कहानियाँ। भूषन भनत तिहु लोक मैं तिहारी धाक दिल्ली औ बिलाइति सकल बिललानियाँ॥ आगरे अगा-रन[5] ह्वै फाँदती कगारन छ्वै बाँधती न बारन मुखन कुम्हि-लानियाँ। कीबी कहैं कहा[6] औ गरीबी गहे भागी जाहिं बीबी गहे सूथनी सु नीबी[7] गहे रानियाँ॥ ७॥

ऊँचे घोर मदर के अदर रहन वारी ऊँचे घोर मदर[8] के अदर रहाती हैं। कद[10] मूल भोग करैं कद[11] मूल भोग

---

१ पति की बाँहों से नहीं बहीं अर्थात् अलग नहीं हुईं।

२ रूखों (पेड़ों) की।

३ अलि, भौंरे।

४ कड़ाके से, जोर से चलने से।

५ मकानों में।

६ कहती है कि क्या करेंगी ?

७ नारा, धोती का बंधन, धोती, लहँगा।

८ मंदिर, मकान। ९ पर्वत।

१० कंद मूलक (व्यंजन), ऐसे व्यंजन जिनमें कंद (मीठा) पड़ा हो।

११ जड़ें और जमीन के अंदर होनेवाले फल।

करें, तीनि[1] बेर खातीं सो तो तीनि[2] बेर खाती हैं ॥ भूषन[3] सिथिल अंग भूषन[4] सिथिल अंग बिजन[5] डुलातीं तेऽ[6] बिजन[7] डुलातीं हैं। भूषन भनत सिवराज बीर तेरे त्रास नगन[8] जड़ातीं ते वै नगन[9] जड़ाती हैं ॥ ८ ॥

उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग तेऊ सगबग निसि दिन चली जाती हैं। अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपातीं गात बात न सोहाती बोलैं अति अनखाती हैं ॥ भूषन भनत सिंह साहि के सपूत सिवा तेरी धाक सुने अरि नारी बिललाती हैं। कोऊ करैं घाती कोऊ रोतीं पीटि छाती घरै तीनि बेर खातीं ते वै बीनि बेर खाती हैं ॥ ९ ॥

अंदर ते निकसीं न मंदिर को देख्यो द्वार बिन रथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं। हवा हू न लागती ते हवा ते बिहाल भईं लाखन की भीरि में सम्हारतीं न छाती हैं ॥ भूषन भनत सिव

---

१ तीन मर्तबा।
२ बेरी के तीन फल।
३ जेवरों से।
४ भूखों से।
५ पंखा।
६ ते अब।
७ अकेली।
८ मारी मारी फिरती हैं।
९ जेवरों में नगीने जड़वाती थी। १० नंगी जाड़ा खा रही है।

राज तेरी धाक सुनि हयादारी[1] चीर फारि मन झुझलाती हैं। ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती[2] खाती हैं ॥ १० ॥

अतर गुलाब रस चोवा[3] घनसार सब सहज सुवास की सुरति बिसराती हैं। पल भरि पलँग ते भूमि न धरति पाँय भूलीं खान पान फिरैं बन बिललाती हैं ॥ भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि दारा हार बार न सम्हार अकुलाती हैं। ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं ॥ ११ ॥

सौंधे[4] को अधार किसमिस जिनको अहार चारि को सो अंक लंक चंद सरमाती हैं। ऐसी अरि नारी सिवराज बीर तेरे त्रास पायन में छाले परे कंद मूल खाती हैं ॥ ग्रीषम तपनि एती तपती न सुनि कान कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं। तोरि तोरि आछे[5] से पिछौरा सों निचोरि मुख कहैं 'अब कहाँ पानी मुकतौं में पाती हैं?" ॥ १२ ॥

साहि सिरताज औ सिपाहिन में पातसाह अचल सु सिंधु केसे जिनके सुभाव हैं। भूषन भनत परी शस्त्र रन सिवा धाक

---

१ हया (शर्म) रखनेवाली।
२ बनस्पति।
३ कई सुगंधित वस्तुओं से बनाया हुआ द्रव पदार्थ।
४ सुगंध।
५ अच्छे से अर्थात बढ़िया।

काँपत रहत न गहत चित चाव हैं ॥ अयह बिमल जल कालिंदी के तट केते परे युद्ध विपति के मारे उमराव हैं। नाव भरि बेगम उतारें बांदी डोंगा भरि साहि मिसि मक्का उतरत दरियाव हैं ॥ १३ ॥

किवले[1] के ठौर बाप बादसाह साहिजहाँ ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है। बडो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो मेहेरहु[2] नाहिँ वाको जायो सगो भाई है ॥ बंधु तौ मुरादबक्स बादि चूक[3] करिये को बीच लै कुरान खुदा की कसम खाई है। भूषन सुकवि कहै सुनौ नवरंगजेब एते काम कीन्हे फेरि पादसाही पाई है ॥ १४ ॥

हाथ तसबीह[4] लिए प्रात उठि बंदगी को आपही कपट रूप कपट सु जप के। आगरे में जाय दारा चौक में चुनाय लीन्हों छत्र ही छिनायो मनो बूढ़े मरे बप के ॥ कीन्हो है सगोत घात सो मैं नाहिँ कहौं फेरि पील पै तोरायो[5] चारि चुगुल के गप[6] के। भूषन भनत छरछंदी मतिमंद महा सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के ॥ १५ ॥

---

१ काबा। पूज्य। किबलागाही।
२ मेहरबानी भी।
३ दगाबाजी।
४ जपने की मुसल्मानी माला।
५ हाथी से मरवा डाला।
६ गप्प मारने से, झूठ बोलने से।

कैयक हजार जहाँ गुर्ज बरदार ठाढ़े करि कै हुस्यार नीति पकरि समाज की। राजा जसवंत को बुलाय कै निकट राखे तेऊ लखें नीरे जिन्हैं लाज स्वामि काज को॥ भूषन तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने सिंह लौं झपट[1] गुनि साहि महराज को। हटकि हथ्यार फड बाँधि उमरावन को कीन्ही तब नौरँग नें भेंट सिवराज को॥ १६॥

✓ सघन के ऊपर ही ठाढो रहिबे के जोग ताहि खरो कियो जाय जारन के नियरे। जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धरि उर कीन्ही ना सलाम न बचन बोले सियरे॥ भूषन भनत महा बीर बलकन लाग्यो सारी पातसाही के उडाय गये जियरे। तमक ते लाल[2] मुख सिवा को निरखि भये स्याह मुख नौरँग सिपाह मुख पियरे॥ १७॥

✓ राना भो चमेली और बेला सब राजा भए ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है। सिगरे अमीर आनि कुंद होत घर घर भ्रमत भ्रमर जैसें फूलन की साज है। भूषन भनत सिवराज बीर तैंही देस देसन में राखी सब दच्छिन कि लाज है। त्यागे सदा षटपद पद अनुमानि यह अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है॥ १८॥

---

१ इस छंद में रौद्र एवं भयानक रस है।

२ दिल्ली में कुछ लोगों ने ऐसी हवा उड़ा रक्खी थी कि शिवाजी कभी कभी २५ हाथ का एक डग रखते थे। इस छंद में कथित प्रायः सभी बातें ऐतिहासिक हैं।

कूरम[1] कमल कमधुज[2] है कदमफूल गौर है गुलाब राना[3] केतकी बिराज है। पाँडरि पँवार जुही सोहत है चंद्रावत सरस बुँदेला सो चमेली साज बाज है॥ भूषन भनत मुचकुंद बडगूजर हैं बघेले बसंत सब कुसुम समाज है। लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है[4] ॥ १९ ॥

देवल गिरावते फिरावते निसान अली ऐसे डूबे राव राने सबी गए लबकी[5]। गौरा गनपति आप औरन को देत ताप आप के मकान सब मारि गये दबकी॥ पीरा पयगंबरा दिगंबरा दिखाई देत सिद्ध की सिधाई गई रही बात रब[6] की। कासिहु ते कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति[7] होति सब की ॥२०॥

---

१ महाराज जयपुर कछवाहे होने के कारण कूर्मवंशी कहलाते हैं।

२ महाराज जोधपुर। कबन्ध। युद्ध में इनके पूर्वपुरुष जयचंद महाराज कन्नौज का कबंध उठा था, इसी से उनके वंशी कमधज कहलाते हैं।

३ महाराना उदयपुर।

४ इस छंद में सम अभेद रूपक है।

५ लबलबा गए, निर्बल हो गए। यह भी हो सकता है कि लवा (छोटा पक्षी) के समान हो गए।

६ खुदा (यहाँ पर) मुसलमानी देवता।

७ खतना, मुसलमानी।

साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की। और पातसाहन के हुती चाह हिंदुन की अकबर साहजहाँ कहै साखि तब की॥ बब्बर के तिब्बर[1] हुमायूँ हद्द बाँधि गये दो मैं एक करी ना कुरान[2] वेद ढब की। कासिहु की कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति होति सब की ॥२१॥

कुंभकर्न असुर औतारी अवरंगजेब कीन्ही कत्ल मथुरा[3] दोहाई फेरी रब की। खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके लाखन तुरुक कीन्हे छूटि गई तब की॥ भूषन भनत भाग्यो कासीपति बिस्वनाथ[4] और कौन गिनती मैं भूली गति भव की। चारौं वर्न धर्म छोडि कलमा[5] नेवाज पढि सिवा जी न होतो तौ सुनति होति सब की ॥२२॥

---

१ तीन बार।

२ कुरान और वेद की जो दो ढबें हैं उनको एक में न किया, अर्थात् वेद के रीतियों के उठाने का प्रयत्न न किया।

३ सन् १६६९ ई० में औरंगजेब ने देहरा केशवराय को मथुरा में तोड़ा। इसे महाराज वीरसिंहदेव बुंदेला ने ३३ लाख मुद्रा लगा कर बनवाया था।

४ औरंगजेब ने विश्वनाथ जी का मंदिर सन १६६९ ई० में तोड़ा। उसी समय कहा जाता है कि श्री विश्वनाथ जी की मूर्ति मन्दिर से ज्ञानवापी नामक कूप में (जो मन्दिर के पिछवाड़े है) जाकर कूद पड़ी।

५ कलमा यह है—"लाइलाहै इल्लिल्ला मुहम्मद उलरसूलिल्ला" अर्थात् सिवाय

दावा पातसाहन सों कान्हो सिवराज वीर जेर कीन्हो देस हद्द बाँध्यो दरबारे[1] से । हठी मरहठी तामैं राख्यो ना मवास[2] कोऊ छीने हथियार डोलैं बन बनजारे से ॥ आमिष अहारी माँसहारी दै दै तारी नाचैं खाँड़े तोड किरचें उड़ाये सब तारे से । पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे मुंड मतवारे गिरैं झुंड मतवारे[3] से ॥२३॥

छूटत कमान[4] और तीर गोली बानन के मुसकिल होति मुरचान हू की ओट मैं । ताही समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो दावा बाँधि पर हला वीर भट जोट मैं ॥ भूषन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट[5] मैं । ताव दै दै मूछन कँगूरन पै पाँव दे दै अरि मुख घाव दै दै कूदे परैं कोट[6] मैं ॥२४॥

उतै पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे उमड़ि घुमड़ि मतवारे

परमेश्वर के कोई समान नहीं है, मुहम्मद परमेश्वर का बसीठी है । मुसलमानों के अनुसार जो कोई ये दोनों बातें मानता हो, वही मुसल्मान है।

१ दरबार से, दरबार ही से, खास दरबार से ।

२ किला, मोर्चा ।

३ पूर्णोपमा अलंकार ।

४ तोप ।

५ झुरमुट, समूह ।

६ इस छंद में पूर्ण वीर रस एव पदार्थावृत्ति अलंकार है ।

घन भारे हैं। इतै सिवराज जूके छूटे सिंहराज और धिदारे[1] कुंभ करिन के चिकरत कारे हैं॥ फौजें सेख सैयद मुगल औ पठानन की मिलि इखलास[1] काहू मीर न सम्हारे हैं। हद हिंदुवान की विहद तरवारि राखि कैयो बार दिली के गुमान झारि डारे हैं॥२५॥

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि सुनि असुरन[2] के सु सीने धरकत हैं। देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस अजहूँ लौं परे खग्ग दाँत खरकत हैं॥ कटक कटक काटि कीट से उड़ाय केते भूषन भनत मुख मोरे सरकत हैं। रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं॥२६॥

मालती सवैया

'केतिक देस दल्यो दल के बल दच्छिन चंगुल चापि कै चाख्यो। रूप गुमान हरयो गुजरात को सूरति[3] को रस चूसि कै नाख्यो[4]॥ पंजन पेलि मलिच्छ मले सब सोई बच्यो जेहि

---

१ सलेहरि के युद्ध में मुगलों का सेनापति इखलास खाँ था। किसी किसी प्रति में अफज़ल खाँ इसके स्थान पर लिखा है। वह बीजापुरी सरदार था किन्तु यहाँ सलहेरि में लड़नेवाले मुग़ल सरदार का वर्णन है।

२ मुसल्मान (टाट देखिए)।

३ सन् १६६४ और १६७० ई० में शिवाजी ने सूरत लूटा था।

४ गुजराती भाषा में—फेंक दिया।

मलारि[1] नारि धम्मिल[2] नहिँ बधहिँ ॥ गिरत गब्भ[3] कोटै गरब्भ[4] चिंजी चिंजा[5] डर । चालकुंड[6] दलकुंड[7] गोलकुंडा सका उर ॥ भूषन प्रताप सिवराज तव इमि दच्छिन दिसि सचरहि । मधुरा[8] धरेस धकधकत सो द्रविड निविड डर दबि डरहि ॥ ३२ ॥

कवित्त मनहरण

अफजल खान को जिन्हों ने मयदान मारा बीजापुर गोल कुंडा मारा जिन आज है । भूषन भनत फरासीस त्यों फिरंगी मारि हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है ॥ देखत मैं रुसतम[9]

उसकी प्रार्थना पर शिवाजी ने सन् १६७७ के लगभग रानी का अधिकार ठीक कर दिया । सन् १६६४ में इन्होंने बिदनूर जीता भी था ।

१ मलाबार वासी ।

२ फूल मोती आदि से गुथे हुए बाल ।

३ गर्भ ।

४ किले के भीतर ही, कोट गब्भ में ही ।

५ लड़की लड़का । इसका प्रयोजन जिंजी से नहीं है, क्योंकि जिंजी का वास्तविक नाम चँडा था जो शब्द चिंजी चिंजा से असबद्ध है ।

६ चाल एक बंदरगाह है । इसके पास सन् १५२१ ई० के लगभग ईसाइयों ने एक किला बनवाया था ।

७ डल कश्मीर में एक बड़ी झील है ।

८ अथ इसे मदुरा कहते हैं और यह मदरास में एक जिला है ।

९ रुस्तमे जमाँ । देखिए शि० भू० छ० नं० २३१ का नोट ।

खॉ को जिन खाक किया साल की सुरति आजु सुनी जो अवाज है। चौकि[1] चौंकि चकता कहत चहुँघा ते यारो लेत रहौ खबरि कहाँ लौं सिवराज है ॥ ३३ ॥

फिरगाने[2] फिकिर औ हद सुनि हयसाने भूपन भनत कोऊ सोवत न घरी है। बीजापुर विपति विडरि सुनि भाज्यो सब दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है॥ राजन के राज सब साहिन के सिरताज आज सिवराज पातसाही[3] चित धरी है। बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार धाम धाम धूमधाम रूम साम परी है[4] ॥ ३४ ॥

गरुड़[5] को दावा सदा नाग के समूह पर दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को। दावा पुरहूत[6] को पहारन के कुल पर पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को॥ भूपन अखंड नव-खंड महिमंडल मैं तम पर दावा रवि किरन समाज को। पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं जहाँ पादसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥ ३५ ॥

---

१ पूर्ण भयानक रस।

२ बाबर के पिता का राज्य।

३ इस छंद में शिवा जी के अभिषेक का कथन है।

४ भयानक रस।

५ निदर्शना अलङ्कार।

६ इंद्र।

दारा की न दौर यह रारि नहीं खजुवे[1] की बाँधिबो नहीं है कैधौं मीर सहवाल[2] को। मठ विश्वनाथ को न बास ग्राम गोकुल को देवी को न देहरा न मंदिर गोपाल को॥ गाढ़े गढ लीन्हे अरु बैरी कतलाम कीन्हे ठौर ठौर हासिल[3] उगाहत है साल को। बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारै क्यों न दिल्लीपति धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को॥ ३६॥

गढन[4] गॅजाय गढधरन सजाय करि छाँडे केते धरम दुवार दै भिखारी से[5]। साहि के सपूत पूत वीर सिवराज सिंह केते गढधारी किये बन बनचारी से॥ भूषन बखाने केते दीन्हे बंदीखाने सेख सैयद हजारी[6] गहे रैयत बजारी से। महता[7] से मुगल महाजन[8] से महाराज डाँडि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से[9]॥ ३७॥

---

१ खजुए में शाहशुजा औरंगजेब से हारा था।

२ इसका इतिहास में नाम नहीं मिलता, कोई छोटा सर्दार होगा। लाल कवि ने इसका वर्णन किया है। इसका ठीक नाम शहबाज खाँ था।

३ चौथ, सरदेश मुखी आदि।

४ किलों को गॅंववा कर।

५ यहाँ पर प्रताप राव गूजर द्वारा बहलोल खाँ के छोड़े जाने का इशारा समझ पड़ता है। सन् १६७२ की घटना है।

६ एक हजार सिपाहियों का अफसर।

७ महतौ, मुसद्दी।

८ कलवार।

९ पूर्णोपमा।

सक्र जिमि सैल पर अर्क[1] तम फैल पर विघन की रेल पर लंबोदर[2] लेखिये। राम दसकंध पर भीम जरासंध पर भूपन ज्यों सिंधु पर कुंभज[3] बिसेखिये॥ हर ज्यों अनंग पर गरुड भुजंग पर कौरव के अंग पर पारथ ज्यों पेखिये। बाज ज्यों बिहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिये[4]॥ ३८॥

वारिध के कुंभभव घन वन दावानल तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ। कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल[5] कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हौ॥ भूषन भनत जग जालिम के सचीपति पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ। रावन के राम कार्तवीज के परसुराम दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ[6]॥ ३९॥

---

१ सूर्य।

२ गणेशजी।

३ अगस्त्य मुनि जिन्होंने समुद्र पी लिया था। वे घड़े से पैदा हुए थे। वास्तव में अगस्त्य ने जल सेना प्रस्तुत करके भरत समुद्र के शत्रुओं को पराजित करके तत्कालीन भारतीय समुद्री व्यापार कंटकरहित कर दिया था। इसी से उनका यश फैला हुआ था।

४ मालोपमा।

५ काँटों का घर।

६। म अभेद रूपक।

दर वर दौरि करि नगर उजारि डारि कटक कटाई कोटि दुजन दरब[1] की। जाहिर जहान जग जालिम है जोरावर चलै न कछूक अब एक राजा रब[2] की॥ सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकंप थर थर काँपति बिलायति अरब[3] की। हालत दहलि जात काबुल कँधार बीर रोष करि काढ़े समसेर ज्यों गरब[4] की[5]॥ ४० ॥

सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों कहत बार बार कहि पातसाह गरजा। सुनिये, खुमान[6] हरि तुरुक गुमान महि देवन जेंवायो, कवि भूषन यों सरजा॥ तुम वाको पाय के जरूर रन छोरो वह रावरे वजीर छोरि देत करि परजा। मालुम तिहारो होत याहि में निवारो रनु कायर सों कायर औ सरजा सों सरजा॥ ४१ ॥

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के एकै पातसाहन के देस दाहियतु है। भूषन भनत महाराज सिवराज एकै साहन की फौज पर खग्ग वाहियतु है॥ क्यों न[7] होहिं बैरिन की बौरी

---

१ दुर्जन के द्रव्य से इकट्ठी की हुई सेना कटवा डाली।

२ राव।

३ अरब की विलायत थर थर काँपती है।

४ अहंकार की अथवा पश्चिम (मगरिब) की तलवार।

५ यह छंद स्फुट कविता से आया है।

६ शिवाजी।

७ भयानक रस। भैर (शिवाजी से) सुन बैरिन की वधू क्यों बौरी न होहिं।

सुनि बैर बधू दौरनि तिहारे कही क्यों निबाहियतु है। रावरे नगाये सुने बैरवारे नगरनि नैनवारे नदन निवारे चाहियतु है[१] ॥ ४२।

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार बार दिल्ली दहसति चित चाहै खरकति है। बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर पति फिरत फिरंगिन की नारी फरकति है॥ थर थर काँपत कुतुब साहि गोलकुंडा हहरि हबस भूप भीर भरकति है। राजा[२] सिवराज के नगारन की धाक सुनि केते पातसाहन की छाती दरकति है॥ ४३॥

मोरँग[३] कुमाऊँ औ पलाऊँ[४] बाँधे एक पल कहाँ लौं गनाऊँ जेऊब भूपन के गोत हैं। भूपन भनत गिरि बिकट निवासी लोग, बावनी बवजा[५] नव कोटि धुंध[६] जोत हैं॥ काबुल कँधार

---

१ चपलातिशयोक्ति। २ भयानक रस।

३ शि० भू० छंद नं० २४६ का नोट देखिए।

४ 'भागना' हो सकता है, 'पना' भी। पना नामक एक ग्राम यमुना जी के किनारे था।

५ बजूना नामक एक स्थान फतेहपुर सिकरी के पास था। उत्तर पश्चिमी बोली में बावन को बवजा कहते हैं। बावनी बुंदेलखंड में एक मुसल्मानी रियासत है। इसी से बावनी के पीछे बवजा लगाया गया है। करनाटक के युद्ध में शिवाजी ने बावन गिरि जीता था। सम्भव है, बावनी शब्द से उसी का अभिप्राय हो।

२ धुंधली ज्योति के अर्थात् तेजहत।

मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस खोटी भई संपति चकत्ता के घराने की ॥ ४८ ॥

जिन फन फुतकार उडत पहार भार कूरम कठिन जनु कमल बिदलि गो। बिषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन झारन चिकारि मद दिग्गज उगलि गो॥ कीन्हों जेहि पान पयपान सो जहान कुल कोल हू उछलि जल सिंधु खलभलि गो। खग्ग' खगराज महाराज सिवराज जू को अखिल भुजंग मुगलद्दल निगलि गो॥ ४९ ॥

सुमन' में मकरंद रहत है साहि नन्द मकरंद सुमन रहत ज्ञान बोध है। मानस में हंस बस रहत हैं तेरे जस हंस में रहत करि मानस बिसोध है॥ भूषन भनत भोंसिला भुवाल भूमि तेरी करतूति रही अद्भुत रस ओध है। पानि में जहाज रहे लाज के जहाज महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध है॥ ५० ॥

बेद राखे बिदित पुरान राखे सारयुत रामनाम राख्यो अति रसना सुघर में। हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की काँधे में जनेउ राख्यो माला राखी गर में॥ मीडि राखे मुगल मरोडि राखे पातसाह बैरी पीसि राखे बरदान

---

१ सम अभेद रूपक।

२ यह छंद स्फुट कविता से आया है।

राख्यो कर मैं । राजन की हद राखी तेग बल सिवराज देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर मैं ॥ ५१ ॥

सपत नगेस चारौं ककुभ[1] गजेस कोल कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को । पापी घालै धरम सुपथ चालै मारतंड करतार प्रन पालै प्रानिन के चंड को ॥ भूषन भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी म्लेच्छन को मारे करि कीरति घमंड को । जग काज वारे निहचिंत करि डारे सब भोर देत आसिष तिहारे भुजदंड को ॥ ५२ ॥

श्री छत्रशाल दशक

दोहा

इक हाडा[2] बूँदी धनी मरद महेवा वाल ।
सालत नौरँगजेब को ये दोनों छतसाल[3] ॥

---

१ पृथ्वी के हाथी अर्थात् दिग्गज ।

२ एक छत्रसाल हाडा बूँदी-नरेश थे । ये महाराज गोपीनाथ के पुत्र और राव रतनसिंह के पौत्र थे । ये स्वयं बावन लड़ाइयों में शरीक रहे थे । सन् १६५८ ई० में धौलपुर में दारा और औरङ्गजेब की जो लड़ाई राज्यार्थ हुई थी, उसमें ये महाराज दारा के दल के हरौल में थे । उसी लड़ाई में बड़ी बहादुरी दिखा कर ये मारे गए । उसी का बयान भूषण ने इस दशक के प्रथम दो छंदों में किया है ।

३ दूसरे छत्रसाल चंपति राय बुंदेला के पुत्र थे । इन्हीं के अनिवार्य प्रयत्नों से इनका राज्य बुंदेलखंड भर में फैल गया था ।

वै देखौ छत्ता पत्ता ये देखौ छतसाल।
वै दिल्ली की ढाल[1] ये दिल्ली ढाहन वाल ॥

कवित्त मनहरण

छत्रशाल हाड़ा बूँदी नरेश विषयक

चले चंद्रबान[2] घनबान औ कुहूकबान[3] चलत कमान[4] धूम आसमान छ्वै रहो। चली जमडाढैं वाढ़वारैं तरवारैं जहाँ लोह-आँच जेठ के तरनि मान वै रहो ॥ ऐसे समै फौजैं विचलाई छत्रशालसिंह अरि के चलाये पायँ वीररस ज्वै रहो। हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले ऐसी चलाचली में अचल हाड़ा ह्वै रहो[5] ॥ १ ॥

दारा साहि नौरँग जुरे हैं दोऊ दिल्ली दल एकै गये भाजि एकै गये रुँधि चाल में[6]। बाजी कर कोऊ दगाबाजी करि राखी

---

१ क्योंकि वे दिल्ली की ओर हो दारा की तरफ से लड़े थे।

२ अर्धचंद्र बाण।

३ अँधेरे में चलनेवाले बाण, इनके चलने से कुहू कुहू आवाज होने से ये कुहूक बान कहलाते थे। ४ तोप।

५ पूर्णोपमा, पदार्थावृत्त दीपक, परिसंख्या और भूषणानुसार पर्य्याय अलंकार।

६ कोई भाग गए और कोई सेना के संचालन में फँस गए, अर्थात् इस प्रकार से सेना चलाई गई कि उनकी सेना ऐसे स्थान पर आ पड़ी कि जहाँ से वह शत्रु से भली भाँति लड़ नहीं सकती थी। चलने से रुक गए।

जेहि कैसेहू प्रकार प्रान बचत न काल[1] मैं ॥ हाथी ते उतरि हाडा जूझो लोह लगर[2] दै एती लाज कामैं जेती लाज छत्रसाल मैं । तन तरवारिन मैं मन परमेसुर मैं प्रान स्वामि कारज मैं माथो हरमाल मैं ॥ २ ॥

छत्रशाल बुँदेला महेवानरेश विषयक

निकसत म्यान ते मयूखैं[3] प्रलै भानु कैसी फारै तम तोम से गयंदन के जाल को । लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को । लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को । प्रतिभट[4] कटक कटीले केते काटि काटि कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को ॥ ३ ॥

भुज भुजगेस की ह्वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के । बखतर पाखरिन बीच धसि जाति मीन

---

१ कोई ऐसे थे कि जिस समय किसी प्रकार नहीं बचते थे, तो उन्होंने दगा बाजी करके अपने हाथ बाजी रक्खी, (अर्थात् प्रान बचाए)। यह भी हो सकता है कि हाथ में घोड़ा पकड़ कर सईस बनकर बच गए।

२ जब हाथी लड़ाई से भागने लगते हैं, तब उनके पैरों में लंगर (मोटी जंजीर) डाल देते हैं कि वे भाग न सकें।

३ किरनें।

४ पूर्णोपमा अलंकार।

पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के ॥ रैया राय चंपति[1] को छत्रसाल महाराज भूपन सकत को बखानि यों बलन के। पच्छी पर-छीने[2] ऐसे परे पर छीने[3] बीर तेरी बरछी ने बर[4] छीने हैं खलन के ॥ ४ ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रसालसिंह भूपन भनत सम-सेर जोम जमकैं[5]। भादौं की घटा सी उठी गरदैं गगन घेरैं सेलैं समसेरैं फेरैं दामिनि सी दमकैं। खान उमरावन के आन राजा रायन के सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं। बैहर[6]

---

१ चंपतिराय छत्रसाल बुंदेला के पूज्य पिता थे। ये महाशय बुंदेलों में बड़े ही प्रतापी हो गए हैं। पहले महाराज चंपति शाहजहाँ से मित्रता रखते थे और उनकी ओर से दारा के साथ काबुल में लड़ने भी गए थे। वहाँ इन महाराज ने इतनी वीरता दिखाई और अफ़गानों को इतना शीघ्र परास्त कर दिया कि दारा को इनकी वीरता से द्वेष उत्पन्न हुआ। इसी द्वेष के कारण इनसे और दारा की शत्रुता हो गई। तब ये महाराज औरंगज़ेब की ओर हो गए और इन्होंने धौलपुर के युद्ध में हरौल दल के नेता होकर दारा को परास्त करके औरंगज़ेब को राज्य दिलाने में पूरा योग दिया (यथा "चंपति राय जगत जस छायो—है हरौल दारा बिचलायो" लाल-कृत छत्रप्रकाश।)

२ पक्षकटे।

३ पर अर्थात् शत्रु खंडित हो गए। ४ बल।

५ पर्यायोपमा अलंकार।

६ वायु।

पगारन की अरि के अगारन की लाँघती पगारन[1] नगारन की धमकैं ॥ ५ ॥

अत्र गहि छत्रसाल खिझ्यो खेत बेतवै के उत ते पठाननहू कीन्हीं झुकि झपटैं। हिम्मति बड़ी के गबड़ी[3] के खिलवारन लौं देत से हजारन हजार बार चपटैं। भूषन भनत काली हुलसी असीसन को सीसन को ईस[4] की जमाति जोर जपटैं[5]। समद लौं समद[6] की सेना त्यों बुँदेलन की सेल समसेरैं भईं बाडव की लपटैं ॥ ६ ॥

---

१ घेरा। २ पूर्णोपमा अलंकार।

३ गबड़ी (कबड्डी) एक प्रकार का खेल होता है। इसमें खिलाड़ी दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक समूह का एक खिलाड़ी कबड्डी कबड्डी कहता दूसरे गोल में जाता है और वह प्रयत्न करता है कि उसकी एक ही साँस न टूटने पावे और वह उस गोल के किसी खिलाड़ी को छूकर लौट आवे। अगर उसने ऐसा कर लिया तो उस गोल के जिस खिलाड़ी को उसने छुआ उसे मानों उसने मार डाला, नहीं तो स्वयं मर गया। दूसरे गोलवाले चाहते हैं कि उसे मार-डालें अर्थात् उसकी स बोल से टुकवा दें, और एक साँस बिना तोड़े उसे लौटने तोल दें। उसके पीछे दूसरे गोल का एक खिलाड़ी वैसा ही करता है। इसी प्रकार जब किसी गोल के सब खिलाड़ी मर जाते हैं, तो वह गोल हार जाता है।

४ महादेव जी। ५ चपेट करते हैं।

६ अब्दुस्समद दिल्ली का एक सरदार था। बेतवा नदी के किनारे सन् १६१० ई० के करीब यह छत्रसाल से भारी युद्ध में हारा था।

हैवर हरट्ट[1] साजि गैवर[2] गरट्ट[3] सम[4] पैदर के ठट्ट फौज जुरी तुरकाने की। भूषन भनत राय चंपति को छत्रसाल रोप्यो रन ख्याल ह्वैकै ढाल हिंदुवाने की॥ कैयक हजार एक बार बैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की। सैद अफगन[5] सेन सगर सुतन लागी कपिल सराप लों तराप तोपखाने की॥ ७ ॥

चाक[6] चक चमू के अचाक[7] चक चहूँ ओर चाक सी फिरति धाक चंपति के लाल की। भूषन भनत पातसाही मारि जेर कीन्हीं काहू उमराव ना करेरी करवाल[8] की। सुनि सुनि रीति बिरदैत[9] के बडप्पन की थप्पन उथप्पन की बानि छत्र-

---

१ हृष्ट पुष्ट। २ गजवर, अच्छे हाथी।

३ समूह। ४ उसी भाँति के सैनिक युक्त।

५ सैद अफगन दिल्ली का एक सरदार था और छत्रसाल से लड़ने को भेजा गया था। छत्रसाल ने उसे पराजित किया था। लाल कवि कृत छत्र प्रकाश देखिए। मऊ जीतने के बाद छत्रसाल ने पहले स्वयं विचलित होकर फिर घोर युद्ध कर इसे हराया था, तब इसकी जगह शाह कुली नियत हुआ था। यह सन १७०० की घटना है।

६ चाक, मेंटी ताजी।

७ अचानक।

८ तलवार।

९ यश वर्णन करनेवाला।

साल की। जग जीतिलेवा ते वै हैके दामदेवा[1] भूप सेवा लागे करन महेवा महिपाल की॥ ८॥

कीवे को समान प्रभु ढूँढि देख्यो आन पै निदान दान युद्ध में न कोऊ ठहरात हैं। पचम[2] प्रचंड भुज दंड को बखान सुनि भागिवे को पच्छी लौं पठान थहरात हैं॥ संका मानि सूखत अमीर दिलीवारे जब चंपति के नंद के नगारे घहरात हैं। चहूँ ओर चकित चकत्ता के दलन पर छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं[3]॥ ६॥

राजत अखंड तेज छाजत सुजस बड़ो गाजत गयंद दिग्गजन हिय साल को। जाहि के प्रताप सों मलीन आफताप[4] होत ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को॥ साज सजि गज तुरी[5] पैदरि कतार दीन्हे भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को?

---

१ कर देनेवाले।

२ पचमसिंह बुंदेलों के पूर्व पुरुष थे। महाराज बुंदेल (जो बुंदेलों के पुरखा थे) इनके पुत्र थे। पचमसिंह बड़े प्रतापी और विंध्यवासिनी देवी के बड़े भारी भक्त थे।

३ पूर्णोपमा, अवत्यातिशयोक्ति, पूर्ण भयानक रस। यह छंद स्फुट कविता से यहाँ आया है।

४ आफ़ताब, सूर्य।

५ घोड़ा।

और राव राजा[1] एक मन मैं न ल्याऊँ अब ,साहू[2] को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को ॥ १० ॥

स्फुट काव्य

दोहा

रेवा[3] ते इत देत नहिं पथिक म्लेच्छ निवास ।
कहत लोग इन पुरनि मैं है सरजा को त्रास ॥ १ ॥

कवित्त मनहरन

याजि[4] थंब चढो साजि बाजि जब कलाँभूप गाजी महाराज राजी भूषन बखानतैं । चंडी की सहाय महि मडी तेजताई पेंड छुडी राय राजा जिन दंडी औनि आन तैं[5] ॥ मदोभूत रवि

---

१ भूमिका एवं स्फुट काव्य के छंद नं० ३ का नोट देखिए।

२ महाराज साहूजी छत्रपति शिवाजी के पौत्र थे। शिवाजी के पुत्र और साहू जी के पिता का नाम शंभाजी था। साहू जी के ही राज्यकाल में मुगल साम्राज्य पूर्ण रूप से ध्वस्त हो गया था। साहू जी ने बहुत वर्ष राज्य किया था। शाही कैद से इनका सन् १७०७ ई० में छुटकारा हुआ था।

३ नर्म्मदा नदी।

४ यह छंद शिवा बावनी से आया है क्योंकि यह शिवाजी विषयक नहीं है। सन् १६६८ के लगभग का कथन है।

५ देवीजी की सहायता से (मुलकों ने) पृथ्वी तेज से ता (दाहित) कर मढ़ दी, और उन राय राजाओं ने भी, जिन्होंने औरों से भूमि दंड में ले ली थी, पेंड छोड़ दी।

रज[1] पंकीभूत हलधर नदी भूतपति भो अनदी अनुमान तैं। रंकीभूत दुघन कलंकीभूत[2] दिगदंती पंकीभूत[3] समुद सुलंकी के पयान तें[4] ॥ २ ॥

रहत अछक पै मिटै न धक[5] पीवन की निपट जु नाँगी डर काहू के डरै नहीं। ओजन बनावै नित चोखे खानखानन के सोनित पचावै तऊ उदर भरै नहीं॥ उगिलत आसौ[6] तऊ सुकल[7] समर बीच राजै रावबुद्ध[8] कर विमुख परै नहीं।

---

१ राज्य श्री।

२ कलंकी, दिग्गज श्वेत वर्ण थे, सो इस रज से आच्छादित होने से वे मैले हो गए और इसी कारण कलंकी कहे गए।

३ चहला (कीच) से भरा हुआ।

४ अनुप्रास। पँवार आदि जो चार अग्निकुल के क्षत्री हैं, उनमें एक सुलंकी भी हैं। बघेले क्षत्री सुलंकी क्षत्रियों में हैं। बघेलखंड के अतिरिक्त ये लोग गुजरात में भी राज्य करते थे। इनके राज्य अब भी बहुत से हैं जिनमें रीवाँ प्रधान है। मेवाड़ में भी इनकी एक शाखा है जिसकी सोलह उप-शाखाएँ हैं। यह छंद हृदयराम सुत रुद्र के विषय में हो सकता है। शि० भू० छंद नं० २८ का नोट देखिये।

५ बड़ी चोप।

६ आसव, मदिरा। तलवार के लिये लाल रंग का खून, क्योंकि उत्तम मद्य भी लाल रंग का माना गया है। ७ सफ़ेद।

८ छत्रसाल हाड़ा बूँदी नरेश के भाई भीमसिंह के पौत्र अनिरुद्धसिंह थे। राव बुद्धसिंह इन्हीं अनिरुद्धसिंह के पुत्र थे। औरंगज़ेब के मरने पर उसके पुत्र मुअज़्ज़म

तेग या तिहारी मतवारी है अछक सौ लौं औ लौं गजराजन की गजक[1] करै नहीं ॥ ३ ॥

जा दिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह[2] ता दिन दिगंत लौं दुवन दाटियतु है । प्रलै कैसे धाराधर[3] धमकै नगारा धूरि धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है ॥ भूषन भनत भुवगोल को कहर तहाँ हहरत तगा[4] जिमि गज काटियतु है । काँच से कचरि जात सेस के असेस फन कमठ की पीठि पै पिठी सी बाँटियतु[5] है ॥ ४ ॥

(बहादुर शाह) और आजम में राज्यार्थ जाजऊ पर जो घोर युद्ध हुआ था । उसमें राव बुद्धसिंह मुअज्जम की ओर थे। इसी दिन इन्हें रावराजा की उपाधि मिली । जैपुर के राजा जैसिंह ने अन्त में राव बुद्ध का राज्य छीन लिया था, परन्तु इनके पुत्र उमेदसिंह ने फिर उसे प्राप्त कर लिया ।

१ शराबी लोग जो शराब के साथ थोड़ी सी नमकीन या चटपटी गिजा खाते हैं, वही गजक है । यह छंद छत्रमाल दशक से आया है ।

२ ये सन् १७०० से १७५५ तक रीवाँ के शासक रहे और केवल छः महीने की अवस्था में गद्दी पर बैठे थे । इनका राज्य बुंदेलों ने दो तीन बार जीता था, किंतु अन्त में ये उसे क़ायम रख सके ।

३ मेघ ।

४ तागा, डोरा ।

५ पूर्णोपमा, संबंधातिशयोक्ति ।

डंका के दिए ते दल डंबर[1] उमड्यो[2], उडमड्यो उड-मंडल लौं खुर की गरद है। जहाँ दाराशाह बहादुर के चढ़त, पैंड, पैंड[3] में मढ़त मद-राग बढ़ नद है॥ भूषन भनत घने घुम्मत हरौलवारे, किम्मत अमोल बहु हिम्मत दुरद है। हहन छपद महि मद फार नद होत कद्दन[4] अनद से जलद[5] हलदह है ॥५॥

उलदत[6] मद अनुमद[7] ज्यों जलधि जल थल हद भीम कद काहू के न आह के। प्रबल प्रचंड गंड[8] मंडित मधुप वृंद विंध्य से बुलंद सिंधु सात हू के थाह के॥ भूषन भनत झूल झम्पति झपान झुकि झूमत झुलत झहरात रथ डाह के। मेघ से घमंडित मजेजदार[9] तेज पुंज गुंजरत कुंजर कुमाऊँ नरनाह के[10] ॥ ६ ॥

---

१ धूम धाम। २ नक्षत्र मंडल तक बढ़ाकर धूलि मंडित कर (मढ़) दी।

३ पैंड के अर्थ डग तथा मार्ग दोनों हैं।

४ संसार की सीमाओं तक (हाथियों के मदजल के कारण) भौंरे भरे हैं अथवा गजों के मद जल से पृथ्वी फट कर नद हो जाते हैं।

५ उन हाथियों के कदों (शरीरों) से नभ नद (आकाश गंगा आदि) के समान बादल हिलते हैं, अर्थात् वे इतने ऊँचे हैं कि उनके द्वारा आकाश नद तथा जलद दोनों हिलते हैं।

६ डालते हैं। ७ मद पर मद। ८ कनपटी।

९ एक प्रभावसूचक पद। इसके शुद्ध अर्थ का पता नहीं लगता।

१० अनुप्रास, पूर्णोपमा। इस छंद के साथ एक जनश्रुति है। भूषण ने जब

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पारै कवि लौं पुकारे कोऊ धरत न सार[1] है। रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक खादर[2] लौं झारै ऐसी साहु[3] की बहार है॥ ककर[4] लौं भक्खर[5] लौं मक्कर[6] लौं चले जात टक्कर लेवैया कोऊ वार है न [7]पार है।

कुमाऊँ नरेश के यहाँ जाकर यह छंद सुनाया था, तो उन्हें संदेह हुआ कि क्या जो यह सुनते थे कि शिवाजी ने इन्हें लाखों रुपये दिए, वह गलत है, नहीं तो ये मेरे यहाँ क्यों आते। किंतु तो भी इस बात पर निश्चय न होने से इन्हें राजसम्मानित कवि समझ कर उसने एक लाख रुपए विदाई में दिए। परंतु भूषण ने वह धन कुमायूँ नरेश (उद्योतसिंह) को वापस करके कहा कि मेरा प्रयोजन कुमायूँ आने से केवल शिवाजी का परामर्श था। शिवाजी की कृपा से अब रुपए पैसे की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं रह गई थी। यह कथन चिटनीस बखर के आधार पर है।

१ लोहे का सार, इस्पात के अर्थ।

२ खादर नदी के निकट की नीची भूमि को कहते हैं। इसमें रूखापन भी बहुत होता है।

३ शिवाजी का पौत्र। छ० द० छ० नं० १० का नोट देखो।

४ एक कोकर देश मुलतान के पास है। एक कोकरा देश उड़ीसा और दक्षिण के बीच में है। कोकरमुंडा का एक दुर्ग तापती नदी के उत्तर किनारे पर है।

५ एक भक्खर गुजरात के पास था और एक भाकर मुलतान के निकट था।

६ मकरान नामक एक स्थान सिंध के निकट था।

७ नर्मदा नदी के वार पार का प्रयोजन है।

भूपन सिरोज[1] लौं परानने परत फेरि दिल्ली पर परति परिंदन की छार[2] है ॥ ७ ॥

सारस से सूबा करवानक से साहिजादे मोर से मुगल मीर धीर में धचै[3] नहीं। बगुला से बगस बलूचियौ बतक ऐसे काबिली कुलग याते रन मैं रचै नहीं। भूपन जू खेलत सितारे मैं सिकार संभा[4] सिवा को सुवन जाते दुवन सचै[5] नहीं। बाजों सब बाज की चपेटैं चग चहूँ ओर तीतर तुरक दिल्ली भीतर बचे नहीं[6] ॥ ८ ॥

---

१ शीराज हो सकता है। सिरोज नामक एक स्थान बुँदेलखंड के पास भी है और एक सागर के निकट भी।

२ पूर्णोपमा, भयानक रस।

३ धरे नहीं।

४ शम्भाजी महाराज शिवाजी के पुत्र थे। इन्होंने ९ वर्ष सन् १६८९ ई० तक राज किया। ये महाराज बहादुर थे, परन्तु अपने पिता की भाँति सुंतजिम न थे। सन् १६८९ ई० में औरंगजेब ने इन्हें पकड़ लिया और कहा—"यदि तुम मुसल्मान हो जाओ तो तुम्हारा राज्य तुमको वापस कर दिया जाय।" इस पर इन्होंने कहा—"दुष्ट तुझ पर थू और तेरे मत पर थू।" इस पर औरंगजेब ने बड़ी निर्दयता से इन्हें मरवा डाला।

५ सचार नहीं करता।

६ ये छंद नं० ७ व ८ शिवा बावनी से यहाँ आए हैं।

बन उपवन फूले अवनि के झौर[1] झूले, अवनि सुहाति आभा औरै सरसाई है। अलि मदमत्त भये केतकी[2] बसंती फूली, भूषन बखानै सोभा सबै सुखदाई है॥ विषम बिडारिबे को बहत समीर मंद[3], कोकिला की कूक कान कानन सुनाई है। इतनो सँदेसो है जू पथिक, तुम्हारे हाथ, कहौ जाय कंत सों बसंत ऋतु आई है॥ ६॥

मलय समीर परलै को जो करत महा, जमकी दिसा तेआयो जम ही को गोतु है। साँपन को साथी न्याय चंदन छुए ते डसै, सदा सहवासी विष गुन को उदोतु है॥ सिंधु को सपूत कलप-द्रुम को बंधु, दीनबंधु को है लोचन, सुधा को तनु सोत है। भूषन भनैरे भुव भूषन द्विजेस तैं कलानिधि कहाय कै कसाई कत होत है[4]॥ १०॥

---

१ झाड़ें, बहुत सी पत्तीवाली डालें।

२ पीली केतकी जो बसंत ऋतु में फूलती है। श्वेत केतकी वर्षा में फूलती है।

३ (मानिनी का) विषम मद बिडारिबे को समीर बहत।

४ विरह का वर्णन है। उद्दीपनों से शिकायत है। मलय समीर का तो कष्ट देना उसकी यमराज की-दिशा से आने तथा साँपों के साथी होने से क्षम्य है, किंतु चंद्रमा का ऐसा करना अनुचित है, क्योंकि वह समुद्र का सपूत, कल्पवृक्ष का भाई, (कल्प वृक्ष और चंद्र दोनों उन १४ रत्नों में से हैं जो समुद्र मंथन से प्राप्त होने बतु शिवजी का नेत्र, हुए थे) भगवान् का नेत्र (सूर्य और चंद्र भगवान् के नेत्र कहे गए हैं)।

जिन¹ किरनन मेरो अंग छुयो तिनही सों पिय अंग छुवै क्यों न मैन-दुख दोहे को। भूषन भनत तू तो जगत को भूषन है, हौं कहा सराहौं ऐसे जगत सराहे को॥ चंद² ऐसी चाँदनीन प्यारै पै बरसि, उतैरहि न सकै मिलाप होय चित-चाहे को। तू तो निसाकर सब ही की निसा करे, मेरी जो न निसा³ करै तो तू निसाकर काहे को॥ ११॥

कारो जल जमुना का काल सो लगत आली, मानो विष भयो रोम रोम कारे नाग को। तैसिये भई है कारी कोयल

सुधाकर, भुवनभूषण द्विजेश (चंद्रमा को द्विजराज भी कहते हैं) तथा कलानिधि है।

१ हे निशाकर (चन्द्र), तू ने जिन अपनी किरणों से मेरे कामदेव से जले हुए अंग को छुआ है, उन्हीं से प्रियतम के अंग को क्यों नहीं छूता (जिससे उन्हें भी मेरे ही समान काम पीड़ा उत्पन्न हो जिससे हम दोनों का वियोग दूर हो)?

२ हे चंद्र, ऐसी चंद्रिकाओं की प्यारे पर बरसाओ जिसमें कि वह विदेश में न रह सके और उस चितचाहे से मेरा मिलाप हो जाय।

३ निसा तसल्ली को कहते हैं। चंद्रमा निसाकर (निशाकर) ही है और तसल्ली करनेवाला भी कहा गया है, क्योंकि वह निसा (तसल्ली, चित्त की प्रसन्नता) कर (करनेवाला) है। मतलब यह है कि तू सब की तसल्ली अवश्य करता है, किंतु यदि मेरी न करे तो मैं तुझे तसल्ली करनेवाला कैसे कहूँ? निसा साधारण बोलचाल का शब्द है। उसकी अच्छी निसा आती हो गई, ऐसे वाक्य में इसका प्रयोग होता है।

निगोडी यह, तैसोई भँवर सदा बासी बन-बाग को ॥ भूषन कहत कारे कान्ह को वियोग हमें ऐसे में सँजोग कहँ बर अनुराग को। कारो घन घेरि-घेरि मार्यो अब चाहत है, तापै तू भरोसो री करत कारे काग को ॥ १२ ॥

मेचक[1] कवच साजि बाहन बयारि बाजि गाढ़े दल गाजि रहे दीरघ बदन के। भूषन भनत समसेर सोई दामिनी है हेतु नर कामिनी के मान के कदन के ॥ वैदरि बलाका[2] धुरवान[3] के पताका गहे घेरियतु चहुँ ओर सूते ही सदन के। ना कर निरादर पिया सों मिलु सादर ये आये बीर बादर बहादुर मदन के ॥ १३ ॥

सुभ सोंधे भरी सुखमा सुखरी मुख ऊपर आय रही अलकै। कवि 'भूषन' अंग नवीन बिराजत मोतिन माल हिए झलकै ॥ उन दोउन की मनसा मनसी नित होत नई ललना ललकै। भरि भाजत बाहिर जात मनौ मुसुकानि किधौं छबि की छलकै ॥ १४ ॥

'नैन जुग नैनन' सों प्रथमैं लड़े हैं धाय, अधर कपोल तेऊ टरे नाहिं टेरे हैं। अड़ि-अड़ि पिलि-पिलि लड़े हैं उरोज बीर

---

१ काला। २ बगुला।

३ जब बादल बड़े जोर से उठता है, तब उस में दूर से जो लंबे लंबे खड़े दूसरे प्रकार के पतले धूम्र वर्ण बादल दीखते हैं, उन्हें धुरवा कहते हैं।

४ सम अभेद रूपक, उत्तमा दूती की मानवती नायिका प्रति शिक्षा।

देखो लगे सीसन¹ पै घाव ये घनेरे हैं ॥ पिय को चखायो स्वाद कैसो रति संगर को, भए अग अंगनि ते केते मुठभेरे हैं। पाछे परे बारन को बाँधि कहै आलिन सों, भूषन सुभट ये ही पाछे परे मेरे हैं ॥ १५ ॥

सुने हूजे बेसुरा सुने बिन रह्यो न जाय, याही ते विकल सी बिहाती दिन राती हैं। भूषन सुकवि देखि बावरी बिचार काज भूलिबे के मिस सास नद अनखाती² हैं॥ सोई गति जानै जाके भिदी होय कानै सखि जैसी कहैं तानै लेती छेदि छेदि जाती हैं। हूक पाँसुरी मैं, क्यों भरो न आँसुरी मैं, थोरे-छेद बाँसुरी मैं, घने-छेद किए छाती हैं ॥ १६ ॥

✓ देहु³ देहु देहु फेरि पाइए न ऐसी देह, जौन तौन जो न

---

१ सुरति संग्राम का वर्णन है। कुचों के शिरोभाग पर नख क्षत का प्रयोजन है। रतिसमर में बालों के पीछे पड़ने का भाव अब तक शेख या आलम कवि का पहिला समझा जाता था, किंतु जान पड़ता है कि वास्तव में यह भाव भूषण का था। देवजी ने भी इस भाव पर एक छंद कहा है।

२ सास तथा ननद नायिका को प्रेम से बावली समझ कर विचार करने (चेतने) के अभिप्राय से भूलों के बहाने उससे नाराज होती हैं।

३ शांत रस का वर्णन है। दान करो, दान करो, दान करो, ऐसा शरीर फिर नहीं मिलता है, जो जौन तौन (इधर उधर को) नहीं जानता उस किसको जाना है (उसे पुनर्जन्म नहीं लेना है, क्योंकि वह मुक्त हो जायगा।)

जानै कौन तौन आइबो। जेते[1] मन मानिक हैं तेते मन मानिक हैं, धराई में धरे ते तो धराई धराइबो ॥ एक[2] भूख राख, भूख राखै मत भूपन की, यही भूख राख भूप भूपन बनाइबो। गगन[3] के गौन जम गिनन[3] न दैहैं, नग नगन चलैगो साथ नग न चलाइबो ॥ १७ ॥

॥ इति ॥

---

१ जितने मणि माणिक्य हैं, उन्हें मन में मानकर हम कहते हैं कि वे पृथ्वी पर ही धरे हैं और उन्हें पृथ्वी पर ही धरना चाहिए (प्रयोजन यह है कि पार्थिव पदार्थ साथ नहीं जाते, सो उनसे अधिक संलग्न न होना चाहिए)।

२ एक ही (ईश्वर की) क्षुधा रख अन्यकारों की क्षुधा मत रख, केवल यही क्षुधा (भूख, इच्छा) रख कि अपने को भूपों का राजा नहीं बनाना है।

३ आकाश को गमन (मरण) के समय यमराज (पार्थिव वस्तुओं को) गिनने न देगा, पहाड़ और नगीना साथ न चलेगा और नंगे जाना होगा।

सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

[१] ज्ञान योग

पहला खंड

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्मा

जिन श्रीमती महाराज कुँवरानी श्री सूर्य्यकुमारी की स्मृति में सूर्य्यकुमारी पुस्तकमाला निकाली जा रही है, उनकी बड़ी अभिलाषा थी कि सुप्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द जी के सब ग्रंथों, व्याख्यानों और लेखों आदि का प्रामाणिक हिंदी अनुवाद प्रकाशित हो। इसी लिये इस ग्रंथ माला का पहला ग्रंथ स्वामी विवेकानन्द जी के ज्ञानयोग संबंधी व्याख्यानों का संग्रह है। इसका मूल पाठ मायावती स्मारक संस्करण से लिया गया है। इसमें स्वामी जी के ज्ञान-योग सम्बन्धी १६ व्याख्यान हैं। पृष्ठ-संख्या ३७१, सुन्दर रेशमी जिल्द, मूल्य २॥)

---

[२] करुणा

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू रामचंद्र वर्मा

यह परम प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता श्रीयुक्त राखालदास बंद्योपाध्याय के इसी नाम के ऐतिहासिक उपन्यास का अनुवाद है। इस पुस्तक में आपको गुप्तकालीन भारत का बहुत अच्छा सामाजिक तथा राजनीतिक चित्र मिलेगा और आप समझ सकेंगे कि उन दिनों यहाँ का वैभव कितना बढ़ा

जानै कौन तौन आइबो। जेते[1] मन मानिक हैं तेते मन मानिक हैं, धराई में धरे ते तो धराई धराइबो ॥ एक[2] भूख राखु, भूख राखै मत भूपन की, यही भूख राख भूप भूपन बनाइबो। गगन[3] के गौन जम गिनन न देहै, नग नगन चलैगो साथ नग न चलाइबो ॥ १७ ॥

॥ इति ॥

---

१ जितने मणि माणिक्य हैं, उन्हें मन में माकर हम कहते हैं कि वे पृथ्वी पर ही धरे हैं और उन्हें पृथ्वी पर ही धरना चाहिए (प्रयोजन यह है कि पार्थिव पदार्थ साथ नहीं जाते, सो उनसे अधिक संलग्न न होना चाहिए)।

२ एक ही (ईश्वर की) क्षुधा रख अन्कारों को क्षुधा मत रख, केवल यही क्षुधा (भूख, इच्छा) रख कि अपने को भूखों का राजा नहीं बनाना है।

३ आकाश को गमन (मरण) के समय यमराज (पार्थिव वस्तुओं को) गिनने न देगा, पहाड़ और नगीना साथ न चलेगा और नंगे चलना होगा।

सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

[१] ज्ञान-योग

पहला खंड

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्मा

जिन श्रीमती महाराज कुँवरानी श्री सूर्य्यकुमारी की स्मृति में सूर्य्यकुमारी पुस्तकमाला निकाली जा रही है, उनकी बड़ी अभिलाषा थी कि सुप्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द जी के सब ग्रंथों, व्याख्यानों और लेखों आदि का प्रामाणिक हिंदी अनुवाद प्रकाशित हो। इसी लिये इस ग्रंथ माला का पहला ग्रंथ स्वामी विवेकानन्द जी के ज्ञानयोग संबंधी व्याख्यानों का संग्रह है। इसका मूल पाठ मायावती स्मारक संस्करण से लिया गया है। इसमें स्वामी जी के ज्ञान-योग सम्बन्धी १६ व्याख्यान हैं। पृष्ठ-संख्या ३७१, सुंदर रेशमी जिल्द, मूल्य २॥)

---

[२] करुणा

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू रामचंद्र वर्मा

यह परम प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता श्रीयुक्त राखालदास बंद्योपाध्याय के इसी नाम के ऐतिहासिक उपन्यास का अनुवाद है। इस पुस्तक में आपको गुप्त कालीन भारत का बहुत अच्छा सामाजिक तथा राजनीतिक चित्र मिलेगा और आप समझ सकेंगे कि उन दिनों यहाँ का वैभव कितना बढ़ा

चढ़ा था और वह किस प्रकार एक ओर बर्बर हूणों के बाहरी आक्रमण तथा दूसरी ओर वैदिक धर्म्म से द्वेष रखनेवाले बौद्धों के आन्तरिक आक्रमण के कारण नष्ट हुआ। इसके मूल लेखक इतिहास के बहुत बड़े ज्ञाता और पंडित हैं, इसी लिये वे गुप्त-कालीन भारत का यथा तथ्य चित्र खींचने में बहुत अधिक सफल हुए हैं। यह उपन्यास जितना ही ऐतिहासिक घटनाओं से पूर्ण है, उतना ही मनोरंजक भी है। पृष्ठ संख्या सवा छः सौ के लगभग, मूल्य ३॥)

---

[३] शशांक

अनुवादक—श्रीयुक्त प० रामचंद्र शुक्ल

यह भी श्री राखालदास वंद्योपाध्याय का लिखा हुआ और करुणा की ही तरह का परम मनोहर ऐतिहासिक उपन्यास है। यह भी गुप्त साम्राज्य के ह्रास काल से ही संबंध रखता है और इसमें सातवीं शताब्दी के आरंभ के भारत का जीता जागता सामाजिक और ऐतिहासिक चित्र दिया गया है। जिन लोगों ने करुणा को पढा है, उनसे इस संबंध में और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। पर जिन लोगों ने उसे नहीं देखा है, उनसे हम यही कहना चाहते हैं कि इन दोनों उपन्यासों के जोड के ऐतिहासिक उपन्यास आपको और कहीं न मिलेंगे। मूल्य ३)

---

[४] बुद्ध-चरित

लेखक—श्रीयुक्त प० रामचंद्र शुक्ल

यह अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि सर एडविन आर्नल्ड के "लाइट आफ एशिया" के आधार पर स्वतंत्र ललित काव्य है। यद्यपि इसका ढंग ऐसा रखा गया है कि एक स्वतंत्र हिंदी काव्य के रूप में इसका ग्रहण हो, पर साथ ही मूल पुस्तक के भावों को रक्षित रखने का भी पूर्ण प्रयत्न किया गया है। कविता बहुत ही मनोहर, मधुर, सरस और प्रसाद-गुणमयी है जिसे पढते ही चित्त प्रसन्न हो जाता है। छप्पन पृष्ठों की भूमिका में काव्य भाषा (ब्रज और अवधी) पर बडी मार्मिकता से विचार किया गया है, जिसकी बड़े बड़े विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। दो रंगीन और चार सादे चित्र भी दिए गए हैं जिनमें दो सहस्र वर्ष पहले के दृश्य दिखलाए गए हैं। पृष्ठ संख्या प्राय तीन सौ। मू० केवल २॥)

---

[५] ज्ञान-योग

दूसरा खंड

अनुवादक—श्रीयुक्त बा० जगन्मोहन वर्मा

यह स्वामी विवेकानंद जी के ज्ञान-योग संबंधी व्याख्यानों का, जो स्वामी जी ने समय समय पर युरोप और अमेरिका में दिए थे, संग्रह है। सूर्य्यकुमारी पुस्तकमाला की पहली

पुस्तक का यह दूसरा खंड है। स्वामी विवेकानन्द जी वेदांत दर्शन के पारदर्शी विद्वान् थे, अत. इस संबंध में उनके व्याख्यानों में जो विवेचन हुआ है, वह बहुत ही मार्मिक और मनोरंजक है। पृष्ठ संख्या ३२६ के लगभग, मू० २॥)

---

[६] मुद्रा-शास्त्र

लेखक—श्रीयुक्त प्राणनाथ विद्यालंकार

हिंदी में मुद्रा शास्त्र संबंधी यह पहला और अपूर्व ग्रंथ है। मुद्रा शास्त्र के अनेक अँग्रेज़ और अमेरिकन विद्वानों के अच्छे अच्छे ग्रंथों का अध्ययन करके इसका प्रणयन किया गया है। इसमें बतलाया गया है कि मुद्रा का स्वरूप क्या है, उसका विकास किस प्रकार हुआ है, उसके प्रचार के क्या सिद्धांत हैं, उत्तम मुद्रा के क्या कार्य्य हैं, मुद्रा के लक्षण और गुण क्या हैं, राशि सिद्धांत क्या है, उसका विकास किस प्रकार हुआ है, उसका क्रय-शक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है, मूल्य संबंधी सिद्धांत क्या हैं, मूल्य-सूची किसे कहते हैं और उसका क्या उपयोग होता है, द्विधातवीय मुद्राविधि का स्वरूप क्या है, उसके गुण और दोष क्या हैं, अपरिवर्तनशील और परिवर्तनशील पत्र-मुद्रा के क्या क्या सिद्धांत और गुण दोष हैं, आदि आदि। पृष्ठ संख्या ३२५ के लगभग, मूल्य २॥)

---

[७] अकबरी दरबार

पहला भाग

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू रामचन्द्र वर्मा

उर्दू, फारसी आदि के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्वर्गीय शम्सुल उल्मा मौलाना मुहम्मद हुसैन साहब आजाद कृत दरबारे अकबरी नामक ग्रंथ का यह अनुवाद अभी हाल में छपकर तैयार हुआ है। इसमें बादशाह अकबर की पूरी जीवनी बहुत विस्तार के साथ दी गई है और बतलाया गया है कि उसने कैसे कैसे युद्ध किए, अपने राज्य की किस प्रकार व्यवस्था की, उसका धार्मिक विश्वास कैसा था और उसमें समय समय पर क्या परिवर्तन हुए, उसके समय में देश की राजनीतिक, सामाजिक और साम्पत्तिक अवस्था कैसी थी, उसके दरबार का वैभव केसा था, आदि आदि। साथ ही अकबर के अमीरों और दरबारियों आदि का भी इसमें पूरा पूरा वर्णन दिया गया है। पृष्ठ संख्या चार सौ से ऊपर; मू० २॥)

देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला

(१) चीनी यात्री फाहियान का यात्रा विवरण

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्म्मा

चीनी भाषा के मूल ग्रंथ के आधार पर यह ग्रंथ लिखा गया है। गांधार, तक्षशिला, पंजाब, मथुरा, श्रावस्ती, कपिल

वस्तु, रामस्तूप, पाटलिपुत्र, राजगृह, शतपर्णी गुफा, गया, वाराणसी, ताम्रलिप्ति आदि स्थानों में चीनी यात्री फाहियान ने जो कुछ देखा या सुना था, उसका इसमें पूरा पूरा वर्णन है। अंग्रेजी अनुवादकों ने जो जो भूलें की हैं, वे भी इसमें सुधार दी गई हैं। साथ ही फाहियान के यात्रा मार्ग का रंगीन नकशा देने से पुस्तक का महत्व कहीं अधिक बढ़ गया है। मूल्य १॥)

(२) चीनी यात्री सुंगयुन का यात्रा-विवरण

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्मा

यह यात्री फाहियान के १०० वर्ष पीछे भारतवर्ष में आया था। इस पुस्तक के उपक्रम में समस्त चीनी यात्रियों का विवरण संक्षेप में दिया गया है। तुर्किस्तान, शेनशेन, खुतन, यारकंद, सुंगलिंग, गांधार, तक्षशिला, गोपाल गुहा आदि का वर्णन पढ़ने ही योग्य है। इस ग्रंथ में भारत की पश्चिमी सीमा पर के देशों का उस समय का बहुत अच्छा वर्णन है, और स्थान स्थान पर बहुत ही उपयोगी और महत्व पूर्ण टिप्पणियाँ दी गई हैं। आरंभ में अनेक चीनी यात्रियों का संक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है। मूल्य १)

(३) सुलेमान सौदागर

अनुवादक—श्रीयुक्त बा० महेशप्रसाद "साधु"

भारतवर्ष और चीन देश के विषय में मुसलमानों की लिखी जो पुस्तकें पाई जाती हैं, उनमें से सब से प्राचीन पुस्तकें

अरबी भाषा में हैं। उन पुस्तकों में सब से अधिक प्राचीन सुलेमान नामक एक मुसलमान सौदागर का यात्रा विवरण है, जो अरब से पहले भारत आया था और यहाँ से होता हुआ चीन गया था। उसी का मूल अरबी से यह अनुवाद कराके सभा ने प्रकाशित किया है। इसकी मूल प्रति बहुत परिश्रम करके तथा बहुत कुछ धन व्यय करके प्राप्त की गई थी। इसमें मार्को पोलो तथा इब्न बतूता के यात्रा विवरणों से भी बहुत सहायता ली गई है। मूल्य १।)

(४) अशोक की धर्म-लिपियाँ

पहला भाग

भारतवर्ष के आज से २५०० वर्ष पूर्व के इतिहास की जानकारी के लिये प्रियदर्शी राजा अशोक के शिलालेख बहुत महत्व के हैं। अशोक भारत का बहुत प्रतापी सम्राट् था और वह सर्व साधारण के हित तथा राज-कर्मचारियों के पथ प्रदर्शन के लिये अपनी मुख्य मुख्य आज्ञाओं को चट्टानों और स्तंभों आदि पर खुदवा दिया करता था। इस पुस्तक में उसी सम्राट् अशोक के प्रधान शिलालेखों के अनुवाद और स्थान स्थान पर अनेक बहुमूल्य टिप्पणियाँ दी गई हैं। अशोक की धर्मलिपियों का ऐसा अच्छा दूसरा संस्करण अभी कहीं नहीं निकला। मूल्य ३)

(५) हुमायूँनामा

अनुवादक—श्रीयुक्त बा० ब्रजरत्नदास

प्रसिद्ध मुगल सम्राट् हुमायूँ ने कोई आत्मचरित लिखा था, पर इस त्रुटि की पूर्त्ति उसकी सौतेली ... बेगम ने कर दी थी। बेगम ने फ़ारसी भाषा में एक जीवनी लिखी थी जो "हुमायूँनामा" के नाम से ... है। यह पुस्तक उसी का अनुवाद है। इसमें ... घटनाओं, युद्धों और विजयों आदि का तो थोड़ा वर्णन है, गार्हस्थ जीवन की बातें बहुत दी गई हैं। मूल्य १॥)

---

(६) प्राचीन मुद्रा

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू रामचंद्र वर्मा

श्रीयुक्त राखालदास बंद्योपाध्याय के "प्राचीन मुद्रा" नामक बँगला ग्रंथ का हिंदी अनुवाद। इसमें भारत के सब से प्राचीन सिक्कों, विदेशी सिक्कों के अनुकरण पर बने हुए सिक्कों, गुप्त सम्राटों के सिक्कों, सौराष्ट्र तथा मालव के सिक्कों, और दक्षिणापथ तथा उत्तरापथ के पुराने सिक्कों का पूरा पूरा विवरण दिया गया है, और यह बतलाया गया है कि उनसे क्या क्या ऐतिहासिक बातें ज्ञात अथवा सिद्ध होती हैं। अंत में सैकड़ों सिक्कों के चित्रों के प्रायः २० प्लेट हैं। मूल्य ३)

प्रकाशन मंत्री
नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।